স্বাধীন

सफल जीवन

लेखक

छविनाथ पांडेय,

बी० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक

विद्या मन्दिर

ब्रह्मनाल, बनारस सिटी।

[मूल्य १॥)

प्रकाशक
रामजी वाजपेयी
अध्यक्ष–विद्या-मन्दिर,
ब्रह्मनाल, बनारस सिटी।

मुद्रक—
पी० घोष
सरला प्रेस, बाँसफाटक, बनारस।

वक्तव्य

प्रस्तुत पुस्तक प्रधानतया नवयुवकों को दृष्टि में रख कर लिखी गई है। जीवन-संग्राम में प्रवृत्त होने के प्रथम प्रत्येक व्यक्ति के समक्ष यह समस्या खड़ी हो जाती है कि मैं अपने जीवन का प्रवाह किस ओर मोड़ूँ। ऐसे अवसर पर उसके सामने जो-जो कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं उन्हीं के निराकरण का मार्ग इस पुस्तक में दिखलाया गया है। मानवीय दुर्बलताओं का निर्देश करते हुए यह भी बतलाने का उद्योग किया गया कि लोग उनको दूर कर किस प्रकार अपने लक्ष्य को ढूँढ़ सकते हैं।

जीवन की संकुलता के बढ़ जाने से उसे दूर करनेवाले साधनों का निर्देश करनेवाली पुस्तकें पाश्चात्य देशों में अधिक निकला करती है। पर यहाँ और विशेषतया हिन्दी में इस प्रकार की पुस्तकें कम देखने में आती हैं। इसीलिये इस पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है। यदि इसे पढ़ कर गिने-गिनाए भारतीय नवयुवकों ने भी अपना जीवन सफल बनाया तो हम लोग 'विद्या-मन्दिर' के स्थापन और इस पुस्तक के प्रकाशन से अपने को कृतकृत्य समझेंगे।

प्रबोधिनी, १९९१
ब्रह्मनाल, काशी

विश्वनाथप्रसाद मिश्र

सूची

सफल जीवन

१

जीवन का उद्देश्य

स जातो येन जातेन याति देशः समुन्नतिम्।
परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते॥

कुछ दिन हुए अमरीका में एक जबर्दस्त जुआड़ी की मृत्यु हुई। उसकी जीवनी पर टीका-टिप्पणी करते हुए न्यूयार्क के एक सुप्रसिद्ध दैनिक-पत्र ने लिखा था—

'अगर इस अभागे में यह बुरी लत इतनी छोटी अवस्था में न पड़ गई होती और अन्त समय तक यह उसी के दलदल में न फँसा रहता तो इसके जीवन की सफलता की ओर लक्ष्य कर लोग यही कहते कि जुआ खेलने का इसे एक व्यसन पड़ गया था, न कि इसके जीवन का यही प्रधान लक्ष्य था।"

ईश्वर ने उसमें सभी गुण और योग्यताएँ कूट-कूटकर भर दी थीं। अगर वह चाहता तो उत्थान की चरम-सीमा तक पहुँच सकता था। पर बुरी लत में ऐसा फँसा कि अन्त समय तक बद-नाम रहा और मरने के बाद भी लोगों के मुंह से यही निकला कि बड़ा भारी जुआड़ी था।

जुआ खेलने में वह एक था। बड़े-बड़े दाँव लगाता था। पर था ईमानदार। जुआड़ियों की-सी बेईमानी और बदनीयती उसमें नहीं थी। उसके हृदय में असीम उदारता का भण्डार था। वह कुशाग्र-बुद्धि था। उसमें प्रखर विचार-शक्ति थी। व्यापार में तो उसका दिमाग इतना तेज था कि अगर वह व्यापार की तरफ गया होता तो लक्ष्मी चेरी की भाँति उसके पीछे-पीछे दौड़ती

साथ ही वह सौंदर्यका विचित्र पारखी था। अपने जीवनमें उसने अनेक ऐसी-ऐसी सुंदर किताबें और चित्र-संग्रह किए थे कि उन्हें देखकर बड़े-बड़े विद्वान् और कलाके पारखी भी दाँतों-तले अँगुली दबाते थे।

यदि वह चाहता और अपनी प्रवृत्तिको उसी चाहके अनुसार झुकाता तो आजतक वास्तव में वह राजा हो गया होता। पर शोक, बाल्य-काल से ही उसे जुआ खेलने की बुरी आदत पड़ गई। परिणाम यह हुआ कि उसकी सारी सद्वृत्तियों पर तुषारा-पात हो गया।

उस व्यक्ति के मरे दो सप्ताह भी न हुए थे कि एक दूसरे व्यक्तिके परलोकवास का समाचार पत्रोंमें निकला। न्यूयार्क के सभी समाचार-पत्रों में शोकपूर्ण-हृदय से उस समाचार को सुना और प्रकाशित किया। वह जीव भी विलक्षण था। उसने अपने जीवन को पूरी तरह से सफल और उपयोगी बनाने का यत्न किया था। उसके चरित्रबल की प्रशंसा जितनी की जाय थोड़ी थी। उसका यश चंद्रमा की शुभ्र किरणों की भांति दिग-दिगंत में फैला था। उसने भावी संतति के समक्ष असीम और अक्षय संपत्ति का आगार रख दिया था।

उस व्यक्ति का नाम जान म्योर था। अमरीका के छोटे-से-छोटे और बड़े-से-बड़े पत्रों ने उसके यश का वर्णन कर अपने को कृत-कृत्य माना। अनेक दिनों तक समाचार-पत्रों के कालम-के-कालम केवल उसके ही गुण-गान में रँगे रहते थे। अमरीका के 'न्यूयार्क वर्ल्ड' पत्र ने तो यहाँ तक लिखा था कि 'आज अमरीका में ऐसे लोग कम ही हैं जो इस बात को भली-भाँति समझते हैं कि इस देशके ऊपर इस महान् व्यक्ति का कितना भारी ऋण है। वैज्ञानिक होकर भी इनमें कवि की पटुता भरी थी। प्रकृति के अनन्य उपासक होकर भी ये व्यावहारिकता के बाहर कदम नहीं

रखते थे। ये सदा यही कहते रहे कि राष्ट्र को अपनी सम्पत्ति की इस तरह रक्षा करनी चाहिए कि कोई उसपर आँच न पहुँचा सके। जिस वस्तु को हम बना नहीं सकते उसका नाश तो हमें किसी भी अवस्था में करना ही नहीं चाहिए। इन्हीं की शिक्षा और अनवरत परिश्रम का फल है कि आज अमरीका में इतने बड़े-बड़े जङ्गल और पार्क तथा बागीचे देखने में आते हैं।"

उस व्यक्ति के विरोधी भी कम नहीं थे। वर्तमान समय के भौतिकवाद के पुजारी उनका पग-पग पर विरोध करते थे। पर उन्होंने इन सब बातों की जरा भी परवा न की। वे निरन्तर परिश्रम करते गए और अविचल रहे और अन्त में इतना भारी काम कर डाला।

अगर उन्होंने केवल इतना ही किया होता तो भी संसार में वे अपनी अमरकीर्ति छोड़ गए होते। पर उन्होंने जो-जो काम किए हैं, सभी एक-से-एक बढ़कर हैं उनमें से एक-एक काम के लिये ही पर्याप्त गौरव मिल सकता था।

प्रत्येक मनुष्य के लिए दो ही मार्ग खुले हैं—भला या बुरा। जिस मार्ग का वह अनुकरण करेगा उसीके अनुसार उसके जीवन का संगठन होगा और वही संसार के सामने बतौर नमूने के पेश किया जायगा कि इस मनुष्य ने अमुक मार्ग का अनुकरण किया और उसके अनुसार उसे यह प्रमाण-पत्र मिला। संसार उसी को देखेगा और उसी के अनुसार उसे तौलेगा।

पर इतना ही बस नहीं है। केवल संसार के सामने नमूना पेश करके ही हमारा छुटकारा नहीं हो जाता। हमें परमपिता परमेश्वरके सामने भी हिसाब देना होगा कि हमें जो थाती सौंपी गई थी उसका प्रयोग हमने किस तरह किया और उससे क्या कमाया। यहाँ आकर हमने जो कुछ किया उसका पूरा हिसाब उसके सामने पेश करना होगा।

अनुमान कीजिए कि एक व्यक्ति अपना सारा जीवन बेकारी मे बिताता है; ऐसा महत्त्वपूर्ण कोई भी काम नहीं करता जिससे उसका जीवन सफल कहा जा सके। उसके जीवन में अनेक ऐसे अवसर उपस्थित हुए जिनका सदुपयोग कर वह बड़ा आदमी बन सकता था, पर उसने सबकी उपेक्षा की। अन्त में उसकी आँखें खुलती हैं, वह अपनी भूल को समझता है और अपने किए पर पछताता है तथा हाथ मल-मलकर रह जाता है। उस समय उसके हृदय में इस बात की ग्लानि उठती है कि यदि मैंने उन सुअवसरों को खोया न होता तो आज मेरी भी कीर्ति प्रचण्ड मार्तण्ड की भांति गगन में जाज्वल्यमान होती। पर अपनी ही भूल और नादानी से आज मैं धूल में लोट रहा हूँ। जीवन ज्योति का यह सितारा नभस्थल में डूब रहा है, पर उसे देखने वाला कोई नहीं है।

तुम अपने भाग्य के विधाता हो, तुम अपने जीवन के कर्ता-धर्ता हो। तुम अपने को जैसा चाहो बना-बिगाड़ सकते हो। उसके अनुसार संसार में तुम आदर और उपेक्षा के पात्र बनोगे, उसीके अनुसार संसार तुम्हारा यश गायेगा या निन्दा करेगा, उसीके अनुसार तुम उस परमपिता परमेश्वर की गोद को प्रतिष्ठित करोगे या ठुकराकर दूर फेंक दिए जाओगे—सभी बातें तुम्हारे हाथों में हैं। लोग बहुधा कहा करते हैं कि अमुक व्यक्ति गरीब के घर पैदा हुआ, उसे अवसर ही नहीं मिला कि वह पूर्ण प्रतिष्ठा को प्राप्त हो सके। यह सब अनर्गल बातें हैं। चाहे तुम मरुभूमि में अत्यन्त निर्धन वंश में ही क्यों न पैदा हुए हो, यदि तुममें शक्ति है, पौरुष है, तो यह बात दावे के साथ कही जा सकती है कि संसार में ऐसी एक भी शक्ति नहीं है जो तुम्हारी बाढ़ को रोक सके, तुम्हारी प्रगति के मार्ग में बाधा उपस्थित कर सके। कैसी भी विपरीत अवस्था क्यों न आ जाय तुम अपने निर्दिष्ट स्थान तक पहुँच ही जाओगे।

ऊपर हमने जो कुछ कहा है, उससे हमारा अभिप्राय यह नहीं है कि तुम लखपति या करोड़पति बन जाओगे। सम्पत्ति-शाली होना तो मनुष्य-जीवन का प्रधान लक्ष्य है ही नहीं, और न उस संबंध में कुछ कहा ही जा रहा है। इसके लिये भाग्य के दाँव-पेंच काम कर सकते है, अवसर की आवश्यकता पड़ सकती है, साधन की खोज हो सकती है, पर यही संपूर्ण मानव-जीवन नहीं है। यहाँ तो संपूर्ण मानव-जीवन की चर्चा हो रही है और उस संबंध मे यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि तुम जिस तरह के होना चाहो अपनी चेष्टा से बन सकते हो। उसके लिये करना पड़ेगा कोई असाधारण काम। सर गुरुदास चटर्जी आदि इसके अनेक उदाहरण हो गए हैं। चाहिए केवल धुन और लगन। सफलता आप-से-आप आकर खड़ी हो जायगी।

अब्राहम लिंकन का मत था कि 'हमें इससे कोई मतलब नहीं कि हम जो कुछ हाथ में लेते हैं, कर गुजरते हैं। हमें तो केवल इतना ही देखना है कि सच्चे वीर की भांति हम उसपर अड़े रहते हैं या नही। बस, इससे अधिक से हमें प्रयोजन नहीं। अगर हम घबरायँ या किसी अन्य कारण से उस काम से हाथ खींच लेते हैं तो यह हमारी कायरता है।"

यह भौतिक संसार विपत्तियों की खान है, मुसीबतों, कठि-नाइयों और आपदाओं का आगार है। किस समय कौन विपत्ति वज्र की भांति हमारे ऊपर घहराकर गिर पड़ेगी, हम नहीं कह सकते। इन विपत्तियों और संकटों को हम रोक भी नहीं सकते। पर इससे क्या? ये आपदाएँ भी हमें मनुष्य बनाने में सहायक ही हो सकती हैं। बार-बार हार खाकर भी हम सच्चे वीर बन सकते हैं। वही हमारी परीक्षा का सच्चा दिन है। विपत्ति के भीषण काले बादल आए और चले गए, पर हम पहाड़ की तरह अटल खड़े हैं, किसी बात की चिंता नहीं, भय नहीं, परवा नहीं।

आज बेलजियम में कितनी हजार आत्माएँ है, जिनको इस महत्ता का श्रेय प्राप्त है। इस पृथ्वी पर उनका जो कुछ था स्वाहा हो गया। उनका कारबार, वाणिज्य-व्यवसाय, धन-दौलत, घर-द्वार तथा संसार-यात्रा को सफल बनाने के सभी साधन समूल नष्ट हो गए। इस नृशंस युद्ध ने उनका सर्वस्व छीन लिया और उन्हें नंगा छोड़ दिया। पर क्या इससे उनकी जरा भी हीनता हुई ? प्रत्युत लोगों की दृष्टि में उनका मान पहले से—जिस समय लक्ष्मी उनकी चेरी होकर उनके पैरों पर नाच रही थी—कहीं अधिक हो गया, उनकी प्रतिष्ठा कहीं अधिक बढ़ गई। बम के हृदयहीन धड़ाकों ने उन्हें पत्नीहीन, पुत्रहीन, संतानहीन और गृहहीन बना दिया सही, पर क्या इससे वे विचलित अथवा अधीर हुए। उनके पास वह अमोघ अस्त्र था जिसे न बम उड़ा सकता था और न तलवार काट सकती थी। उसने उनका आसन और भी ऊँचा कर दिया, उनकी कीर्ति और भी गगनचुंबी हो गई।

इस संसार में धन ही सब कुछ नहीं है। धन की पूजा तो बहुत कम जगहों में होती देखी गई है। संसार का इतिहास उठाकर देखिए और उदाहरण ढूँढ़-ढूँढ़ कर सामने रखिए तो आपको विदित हो जायगा कि हम उपासना करते हैं, जिनके लिए हम अपनी आँखें बिछाने तकको तैयार रहते हैं, जिनकी स्मृति को तरोताजा रखने के लिए हम अनेक तरह के स्मारक-चिह्न बनाकर खड़ा करते हैं, उन्होंने रुपया कमाने में अपना समय नहीं बिताया था, बल्कि उन्होंने कुछ ऐसे काम किये थे, जिनकी महत्ता को हम रुपये से मूल्यवान समझते हैं। जिन लोगों के जीवन का उद्देश्य केवल रुपया बटोरना है, उनकी प्रतिष्ठा कहीं कम हुई है। अधिकांश अवस्थाओं में तो उन्हें किसी ने पूछा तक नहीं है। उन्होंने जन्म लिया है, रुपया कमाया है और परलोक-यात्रा की है। किसी ने जाना तक नहीं कि वे कौन थे और कहाँ गए।

मानव-समाज स्वार्थी अवश्य है, पर वह स्वार्थ की उपासना करना नहीं जानता। अन्त को वे ही पूजे जाते है जिन्होंने अपने जीवन को अर्पण करते समय सच्चे मनुष्यत्व का परिचय दिया है।

मनुष्य स्वार्थी भले ही हो, पर उसकी प्रकृति है कि वह स्वार्थ से सदा घृणा करता है। वह यह नहीं देख सकता कि एक आदमी बिना पूर्व-पश्चिम देखे अपना ही लाभ करता चला जाय। यही कारण है कि हमारे हृदय मे उस व्यक्ति के लिए सबसे अधिक सम्मान रहता है, जो निःस्वार्थ-सेवा में अपना सर्वस्व अर्पण कर देता है, समाज-सेवा ही जिसका एकमात्र धर्म है। हृदय कहता है कि भगवती वसुन्धरा का यही सच्चा पुत्ररत्न है। मानव-समाज को ऊपर बैठाने में वह जो कुछ करता है वही उसकी श्रेष्ठता का अग्रदूत है।

लोकमान्यतिलक के पास क्या था? अपने जीवन का एक अंश भी उन्होंने रुपया कमाने मे नहीं लगाया। लक्ष्मी की ओर उनकी आँख उठी ही नहीं पर उन्होंने मानव-समाज की जो सेवा की वह इस देश में विरले को ही नसीब हो सकेगी। देश चिरकाल तक उनका ऋणी रहेगा आनेवाली पीढ़ी सदा उनका यशोगान करती रहेगी। पूना छोटा-सा शहर है उसका कोई भारी विस्तार नही। पर इस छोटे-से नगर ने देश को जगाने में जो बड़ा काम किया है उसकी तुलना नही की जा सकती। यदि अत्युक्ति न हो तो कहना पड़ेगा कि भारतीय स्वाधीनता का उदय वही से हुआ और उसको सर्वप्रथम जन्म लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक ने दिया। साबरमती आश्रम तो उससे भी छोटा स्थान है, पर राष्ट्र के उद्बोधन मे उसने जो कुछ किया है उसके लिये भारत के इतिहास मे उसका नाम स्वर्णाक्षरों मे लिखा जायगा।

कुछ लोगों का कहना है कि हम इस संसार में चैन करने के लिये आए है। आराम से जिन्दगी बिताना ही इस जीवन क

परम लक्ष्य है। इससे यदि समय बचे तो कुछ कर डालना चाहिए, सो भी अगर बिना किसी कठिनाई के हो। न तो हमने कोई ठेका ही लिया है और न पट्टा ही लिख दिया है कि नर-देह पाकर हम इसे पूर्ण बनाने में ही अपना जीवन व्यतीत करेंगे। पर बात कुछ इसके विपरीत ही है। परमपिता ने हमें इस उत्तम योनि में इसीलिये उत्पन्न किया है कि हममें से प्रत्येक में उसका जो अंश सूक्ष्म रूप से वर्तमान है उसको हम लोग यथासाध्य पूर्ण रूप से जागरित कर दें। इस कर्तव्य से विमुख होना ईश्वर के साथ विश्वासघात करना है और अपनी बदनीयती साबित करना है। परमपिता ने हममें से प्रत्येक को हनूमान की भांति सन्देश लेकर भेजा है कि हम उसे संसार को सुनाएँ, उसका स्वयं आदर करें और दूसरों से करवायें। उसका अंगभंग अथवा अवज्ञा न होने दें। वह काम एक दिन में समाप्त होनेवाला नहीं है जब तक मानव-समाज रहेगा तब तक सन्देश भी इस अवनीतल पर उसी तरह जारी रहेगा। वह सन्देश क्या है? वह मानव-समाज के अनवरत विकास का सन्देश है। इस पृथ्वी पर यह सबसे बड़ा काम है और इसी को कर गुजरना सच्ची सफलता है। नीति का एक वाक्य है—

अधोधः पश्यतः कस्य महिमा नोपचीयते।
उपर्युपरि पश्येत सर्व एव दरिद्रते॥

जब हम ऊपर की ओर दृष्टि उठाकर देखते हैं तो हमें दिखाई देता है कि हमसे बढ़कर हजारों और लाखों व्यक्ति पड़े हैं, जिनके सामने हमारी कोई गिनती नहीं। निदान हम निराश हो जाते हैं कि हम इस जीवन में कुछ नहीं कर सकते। पर जब हम नीचे की ओर आँखें दौड़ाते हैं तो हमें हजारों ऐसे दिखाई देते हैं जिनसे हम कहीं ऊपर हैं। तब हमें साहस होता है और धैर्य होता है। कहने का तात्पर्य यह कि हमे किसी भी अवस्था

में हताश नहीं होना चाहिए यदि हम आरम्भ से ही अपने को नाचीज और निस्सार मान लेते हैं तो हम वास्तव में कुछ नहीं कर सकते। हमें यही विश्वास रखना चाहिये कि हम बड़े-से-बड़ा काम करने के लिये इस पृथ्वी पर भेजे गए हैं, हमारे हाथ में वे साधन दिये गए है कि अगर हम सावधानी से काम लें तो उस उद्देश्य को हम सफल और सार्थक बना सकते हैं जिसके लिये हम भेजे गये है। अगर हम असावधानी और उपेक्षा से इन अवसरों को चले जाने देते हैं और काम नहीं बनाते तो हम हत्या का पाप करते हैं। इसी में सच्ची सफलता है। बिना इस प्रकार से अशान्वित हुए, बिना इस प्रकार का आदर्श सामने रखे, बिना विजय की कामना किए यह सार्थक और परम उपयोगी जीवन भी निरर्थक और अनुपयोगी हो जायगा। जिसे हम अतिविस्तृत कहते हैं वह संकुचित हो जायगा, जिसे हम पूर्ण कहते हैं वह अपूर्ण हो जायगा, जिसमें से हम उत्तम से उत्तम रत्न निकालने की आशा करते हैं वह निरर्थक साबित होगा।

हमारे जीवन का उद्देश्य केवल उदर की उपासना नहीं होना चाहिए। यह तो गौण विषय है। नीति भी यही कहती है—

काकोऽपि जीवति चिराय बलिञ्च भुङ्क्ते।

समझ में नहीं आता कि कर्ता ने मनुष्य के साथ इसे क्यों लगा दिया। नहीं तो उसका मुख्य उद्देश्य तो इस मानव शरीर को पूर्ण बनाना ही है। आत्मप्रतिष्ठा, आत्मविकास, आत्मोत्थान, पुरुष और प्रकृति का पूर्ण विकास तथा उसकी समस्त शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का समुचित एवं समीचीन प्रयोग, यही इस जीवन का सच्चा प्रयोग और उपयोग है। इसी में हमें तल्लीन और तन्मय रहना चाहिये। क्योंकि,

यस्मिन् जीवति जीवन्ति बहवः स तु जीवति।
काकोऽअपि किन्न कुरुते चञ्च्वा स्वोदरपूरणम्॥

अगर जीवन का उद्देश्य यही है कि हम दिन-रात कमाते और खाते रहें आराम और आनन्द से जीवन बिताते रहें तो फिर जन्म लेने से ही क्या लाभ हुआ। इससे उत्तम तो मनुष्य-योनि में उत्पन्न न होना ही हुआ होता। यह तो इस जीवन का फालतू काम है, जो नश्वर है। क्योंकि—

आत्मार्थे जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवः।
परं परोपकार्थं यो जीवति स जीवति॥

इस संसार में हमारा क्या लक्ष्य होना चाहिए। हमें सच्चा नर और सच्ची नारी बनना है। इसके लिये हमें क्या करना चाहिये। इसका एकमात्र उपाय उस बीज को विकसित करना है जिसकी प्रतिष्ठा परमपिता ने हम सबमें की है। एक तरफ तो एक आदमी हजारों रुपये कमाकर अपना घर भर रहा है और दूसरी ओर दूसरा व्यक्ति निरन्तर आत्मा की उन्नति करने में लगा है। दोनों से जाकर पूछिये कि सबसे अधिक कौन सुखी है, किस काम में आत्मा को अधिक आनन्द मिलता है। तुम आश्चर्य करोगे कि वही आदमी अधिक सुखी है जो अपना समय सच्चा नर और नारी बनाने में व्यतीत करता है।

परमपिता परमेश्वर ने हमें केवल कमानेखाने के लिए नहीं पैदा किया है। अगर इस जीवन का केवल इतना ही उद्देश्य होता तो उसने हम लोगों के लिए रोटियों और रुपयों का पेड़ भी पैदा कर दिया होता और हम लोग अपनी इच्छा के अनुसार उन पेड़ों में से रोटी तथा रुपया तोड़तोड़कर आनन्द करते और इस तरह के संघर्ष से हम साफ बच जाते। पर उसका उद्देश्य कुछ दूसरा ही है। जिस हेतु से उसने हम लोगों को पैदा किया है वह हेतु इस जीविकोपार्जन से कहीं उत्तम और आदरणीय है। इस संसार में हम अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए भेजे गए हैं। यह जीवन एक विश्वविद्यालय है। इसमें हमें अपने मस्तिष्क

का पूर्ण विकास करना है और अपने आचरण को सुधारना है तथा अपने चरित्र का गठन करना है। जिस समय हम अपने लिये कार्य नियत कर रहे हैं, हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिये और हमारा लक्ष्य उसी ओर होना चाहिए जिससे हम अच्छे बन सकें, न कि असंख्य धन कमा लें।

हमें अपनी जीविका की ही ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। जीविकोपार्जन के सभी मार्ग समीचीन हैं, अगर ईमानदारी से काम लिया जा रहा है। इस जीवन में हमारा प्रधान उद्देश्य आत्म-शिक्षा, आत्म-दमन, आत्मोत्थान तथा आत्म-विकास होना चाहिए।

उत्कृष्ट जीवन से यह अभिप्राय नहीं है कि हम कोई बड़ा भारी कारबार करें, चाहे वह शिक्षा से सम्बन्ध रखता हो या अन्य किसी से। कोई भी काम क्यों न हो, अगर वह सदिच्छा और ईमानदारी से किया जा रहा है तो वही उत्तम और सबसे बढ़कर है। कितने ही उदाहरण ऐसे पड़े हैं कि लोगों ने मोची का काम किया है और अपने जीवन को उत्कृष्ट बनाकर उस पेशे की मर्यादा बढ़ा दी है। अमरीका में आज आपको हजारों ऐसे किसान मिलेंगे जिन्होंने श्रम और बुद्धि के युगपत् प्रयोग से किसानी पेशे की प्रतिष्ठा बढ़ा दी है। और इस तरह अपना जीवन उत्कृष्ट बनाया है।

कभी-कभी इस जीवन में ऐसा भी अवसर आता है कि तुम्हें अपने आदर्श से नीचे होकर काम करना पड़ता है। पर उस अवस्था में भी तुम अपना जीवन सार्थक बना सकते हो। यूनान में एक मसल प्रचलित है, "अगर तुम्हारे पास दो रोटियाँ हैं तो एक से शरीर की रक्षा करो और दूसरी से आत्मा की रक्षा करो।" चाहे तुम जिस पेशे में जाओ तुम्हें पूरी स्वच्छन्दता है कि तुम वही काम करो जिससे अन्त में तुम अपने जीवन को उत्तमोत्तम

बना सको। चमार-भंगी और कहार का काम करके भी तुम अपने जीवन को पूर्ण बना सकते हो। अपना नियत काम करके भी तुम अपनी दिनचर्या पूरी कर सकते हो। चाहे कैसा ही हीन पेशा क्यों न हो उसे आचरण से आदरणीय बनाया जा सकता है। अमरीका का प्राचीन इतिहास उठाकर देखिए, आपको विदित होगा कि किसी समय अमरीका में उच्चतम व्यक्तिहीन पेशेवाले ही रहे हैं। उस समय के लोग इस बात का विचार नहीं करते थे कि अमुक व्यक्ति क्या पेशा करता है। उनका ध्यान उसके आचरण की ओर अधिक रहता था। वे सदा इतने से ही संतुष्ट रहते थे कि यह जो कुछ करता है, ईमानदारी और नेकनीयती से करता है और इसका व्यवहार समीचीन है।

जीविकोपार्जन में 'हम क्या करते हैं', यह गौण है और 'हम कैसे करते हैं, वही प्रधान है। हमारे काम करने की आन्तरिक प्रेरणा क्या है यही अपेक्षणीय है और अंततक इसीकी गणना होती है।

किसी मनुष्य का काम (बाहरी आचरण) देखकर ही हम उसे भला या बुरा नहीं कह सकते। बाहरी आचरण से उसकी आन्तरिक प्रेरणाओं का पता नहीं चल सकता, क्योंकि कभी-कभी मजबूर होकर उसे अपनी इच्छा के प्रतिकूल ऐसे काम करने पड़ जाते हैं जिनसे उसकी आन्तरिक प्रेरणा की कोई समता नहीं। अगर वह काम करने के लिये पूर्ण स्वतंत्र है, अगर वह अपनी इच्छा की स्वतन्त्र प्रेरणा से कोई काम करता है, अगर वह स्वतंत्र आत्मा की स्वतंत्र प्रेरणा के अनुसार काम करता है तथा वह जिस रीति और तरीके से अपनी दैनिक दिनचर्या समाप्त करता है, उससे हम उसकी जाँच कर सकते है और वही उसकी सच्ची जाँच होगी।

एक दिन की बात है, मैं एक गरीब प्रवासी से बातें कर रहा

था। उसने दृढ़ता के साथ मुझसे कहा—"महाशयजी, आज संसार मेरी उपेक्षा कर रहा है, पर एक दिन आएगा जब संसार मेरी इज्जत करेगा।" इस तरह के पक्के इरादे सदा प्रशंसनीय हैं, क्योंकि इनके पीछे सदाकांक्षाओं का पहाड़ है।

इसी तरह के पक्के मनसूबे अन्त में सफल होते हैं। इसी तरह के मनुष्यों ने अमरीका का मुख उज्ज्वल किया है और आज अमरीका संसार-भर में सबसे गौरवशाली समझा जा रहा है। इसी तरह के पक्के मनसूबों का फल है इस मृतप्राय भारतभूमि पर भी दादाभाई, गोखले, तिलक, गांधी, लाजपत, दास, नेहरू से वीर दिखाई देते हैं, जिन्होंने इस देश का मुख उज्ज्वल कर रखा है।

इस समय भी उस नवयुवक के शब्द मेरे कानों में गूँज रहे हैं—"मैं अपनी जीवन को गिने जाने योग्य बनाऊंगा।" कैसी सौम्य आकांक्षा है! क्या इससे भी सौम्य और उत्कृष्ट आकांक्षा हो सकती है? जहाँ इतनी दृढ़ता है, जहाँ इस तरह के पक्के इरादे हैं, क्या वहाँ भी हार या असफलता की परछाईं पड़ सकती है?

खेद के साथ लिखना पड़ता है कि वर्तमान समय की शिक्षा का प्रवाह उलटा चल पड़ा है। बच्चों को सदा इस बात से अनभिज्ञ रखा जाता है कि जीवन का क्या उद्देश्य है और उन्हें इस जीवन में क्या काम करना है। अधिकांश तो यही समझ बैठते हैं कि यह नरदेह हमें इसलिये मिली है कि हम जितनी अधिक मौज उड़ा सकें उड़ाएँ, जितना अधिक आराम कर सकें करें, चिन्ता और फिक्र से जितना अधिक दूर रह सकें रहें। परिणाम यह होता है कि जब वे जीवन-संग्राम में प्रविष्ट होते हैं, तो काम करना अनिवार्य देखकर उसे बोझ के समान ग्रहण करते हैं, क्यों बिना इसके जीवन-यात्रा चलती नहीं दिखाई

देती। इस तरह बहुत कम ऐसे हैं जिन्हें यह शिक्षा मिलती है कि इस जीवन में काम करने का उद्देश्य आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक योग्यता का पूर्ण विकास है।

वर्तमान युग में हमें सबसे बड़ी आवश्यकता ऐसी संस्थाओं की प्रतीत होती है जिनमें भावी संतति को यह सिखलाया जाय कि उन्हें अपना जीवन किस तरह बिताना चाहिए, अपनी दिनचर्या किस तरह नियत करनी चाहिए, जिससे वह दूसरों की दृष्टि में सुचारु और समीचीन प्रतीत हो। केवल बी. ए., एम. ए. बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य नहीं होना चाहिए। आत्म-संयम, धैर्य, जीव-दया, सन्मार्ग पर चलना, बुद्धि ठिकाने रखना, सच्चे आदर्श को सामने रखकर काम करना इत्यादि बातों की शिक्षा सबसे आवश्यक है।

इससे किसी को यह नहीं समझ लेना चाहिए कि मैं शिक्षा की अवज्ञा अथवा अवहेलना करना चाहता हूँ। शिक्षा सबसे आवश्यक है। जो बालक शिक्षा प्राप्त करने के लिए तन-मन से नहीं लग सकता, पढ़ाई के परिश्रम से जी चुराता है, वह कभी भी अपने जीवन को सार्थक नहीं बना सकता। शिक्षा से हमें वह अस्त्र मिल जाता है जिसे अगर हम चाहें तो अपना जीवन सफल और सार्थक बना सकते हैं। जो मनुष्य अपनी ही भलाई को सर्वश्रेष्ठ मानता है, जो अपने समाज की उन्नति के लिये कुछ भी नहीं करता, उसे पूर्णतया असफल समझना चाहिए, चाहे उसे कितनी भी उच्च शिक्षा क्यों न मिली हो। उसके लिये तो हितोप-देश का यही श्लोक चरितार्थ होगा—'अजागलस्तनस्येव जन्मन्तस्य निरर्थकम्'। चाहे वह कैसा भी विद्वान क्यो न हो, चाहे उसके पास कितनी भी विभूति क्यों न हो, चाहे उसकी कितनी भी प्रतिष्ठा क्यों न हो, वह परमपिता परमेश्वर के सामने कच्चा उतरा, उसे जो काम सौंपा गया था उसे पूरा नहीं कर सका।

हमारी आंखों के सामने से प्रतिदिन अनेक ऐसे व्यक्ति गुजरते है जिन्हें उत्तम प्रज्ञा मिली है फिर भी वे भौतिकवाद के चक्कर में इस तरह पड़े रहते हैं उन्हें उसके आगे कुछ सुझाई ही नहीं देता। वह इस बात को न समझते हैं और न मानते हैं कि इस जीवन मे कुछ ईश्वांस भी है, जिसे पूर्णता पर ले जाना भी आवश्यक है।

हम लोगों को ऐसे अनेक लखपती और करोड़पति देखने में आते है जिनके मस्तिष्क का केवल उतना ही विकास हो सका है जितने का प्रभाव धन तथा उस तरह की पाशविक वृत्तियों पर रहता है। उनके आदर्श, उनके सदाचार, उनके मनुष्यत्व तथा अन्य सामाजिक गुणों पर मोर्चा लग गया है और वे कुंठित हो हो गए हैं, क्योंकि एक बार भी उनके प्रयोग का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।

हम इससे बढ़कर भारी भूल और क्या कर सकते हैं कि जिसे हम अपने जीवन का सार समझते हैं उस शक्ति का प्रयोग तो साधारण जीविकोपार्जन में लगाएँ और अगर उससे समय बच जाय तो इस जीवन के सुधार में लगाएं।

पर बात इससे एकदम प्रतिकूल होनी चाहिए। शारीरिक पालन-पोषण तथा सुख-साधन की सामग्री को केवल गौण स्थान देना चाहिए। हमें अपना सारा समय अपने जीवन को सदुपयोगी बनाने में लगाना चाहिए।

पर इससे हमारा यह अभिप्राय कदापि नहीं कि हमें भौतिकता को सदा तिलांजलि दे देनी चाहिए। धनका उपार्जन करना भी आवश्यक है। इस शरीर को बनाये रखना नितान्त आवश्यक है। जब तक हमें जीना है, इस शरीर के भरण-पोषण के लिये पाव-भर अन्न, तीन गज वस्त्र और साढ़े तीन हाथ जमीन अवश्य चाहिये। हमें हाथ चलाकर अथवा मस्तिष्क चलाकर इतनी सामग्री तो अवश्य ही जुटानी पड़ेगी। हमारे कहने का केवल

यही अभिप्राय है कि हमें रुपया कमाने में इस तरह तल्लीन नहीं हो जाना चाहिये कि हम संसार की और सब बातें भूल जायँ। इसे गौण स्थान देना चाहिए। धनोपार्जन करने से भी बड़े-बड़े और महत्त्वशाली काम हमारे सामने पड़े हैं। किसी बड़े भारी दार्शनिक का कहना है कि धनोपार्जन करना ही जीवनका मूलमंत्र नहीं है और न यह इसका सबसे बड़ा पुरस्कार ही है। तुम धन कमाने के लिये जितना परिश्रम करते हो उससे अधिक परिश्रम तुम्हें मनुष्य बनने के लिये करना चाहिए और धन की रक्षा के लिये तुम जितने सावधान और सतर्क रहते हो उससे अधिक सावधान और सतर्क तुम्हें इसकी रक्षा के लिये रहना चाहिए।

हम लोग दिन-भर रुपये के लिये मारे-मारे फिरते हैं। जब तक दम रहता है, काम करने की शक्ति रहती है, थककर बैठ नहीं जाते, हम धन कमाने की ही धुन में रहते हैं। उस समय हमें दूसरों की सेवा अथवा जीवन्दया का जरा भी ख्याल नहीं रहता। सुबह से शाम तक हम इतना कठोर श्रम करते हैं कि दिन के अन्त में हम में इतनी भी शक्ति नहीं रह जाती कि हम अपने जीवन को सुधारने की चिन्ता तक करें। कितने अफसोस की बात है, जिसे हमें अपने जीवनका प्रधान लक्ष्य बनाना चाहिये उसे ही हम इस तरह उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। देखो इस सम्बन्ध में नीति क्या कहती है—'अर्थाः पादरजोपमाः' अर्थात् यह धन दौलत सब पैरके नीचे की धूलि है। फिर इस धूलि के लिये इतनी परेशानी क्यों उठाई जाय।

एक पुरानी कहावत है—'अपने पड़ोसी का बेड़ा पार कर, तेरा बेड़ा आप से आप पार हो जायगा'। अगर दिन-भर में एक आदमी की भी निस्वार्थ सेवा की गई है तो हमारे साधारण से साधारण काम को भी वह आलोकित कर देगी। रास्ते में चले जा रहे हैं और देखते हैं कि एक अभागा हतोत्साह होकर बैठ गया

है और उसमें आगे बढ़ने का साहस नहीं है. हम उसके पास खड़े हो जाते हैं, उसके थके शरीर पर हाथ फेर देते हैं और हँस कर उसे प्रोत्साहन देते हैं। क्या इसमें हमारा बहुत अधिक नुकसान होता है? पर इसमें उसका अपार लाभ होगा। इन साधारण कार्यों से भी हमारी प्रतिष्ठा बढ़ेगी।

मनुष्य मशीन या कल-पुर्जा नहीं है कि उसके चलाने के लिए कोयला-पानी और भाप की आवश्यकता पड़ेगी। उसकी संचालिनी शक्ति तो उसके अन्दर ही बैठी है। उसे केवल अपना मार्ग ठीक कर लेना है, कि मुझे किस मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। प्रतिदिन पूर्ण दृढ़ता के साथ वह अपने मन में कह सकता है—

"बिना पूंजी, बिना सिफारिश, बिना सहायता, बल्कि दूसरों के विरोध के होते हुए भी, मैं अपने पथ पर अटल तथा दृढ़ रह सकता हूँ और सच्चा मनुष्य बन सकता हूँ और अपने जीवन को सर्वोत्कृष्ट बना सकता हूँ। यदि कोई मेरा दुश्मन है तो वह 'मैं' ही हूँ। मेरी अन्तरात्मा ही मेरे मार्ग में कांटा होकर खड़ी हो सकती है और मेरी सफलता में बाधा उपस्थित कर सकती है। नहीं तो संसार में दूसरी कोई शक्ति नहीं जो मेरा नाश सोच सके। मैं ही अपना बनाने और बिगाड़नेवाला हूँ। मैं ही अपने भाग्य का विधाता और अपनी आत्मा का सरदार हूँ।

२

उद्यम एवं मनोरथ

यत्रोत्साहसमारम्भौ यत्रालस्यविहीनता ।
नयविक्रमसंयोगस्तत्र श्रीरचला ध्रुवम् ॥

अभी हाल की घटना है। एक मनुष्य जो अपने जीवन में सदा असफल रहा, एक दूकान पर खड़ा होकर लम्बी लम्बी डींगें मारकर कह रहा था—"चाहे जो कुछ हो मुझ पर ही इस बात का दोषारोपण नहीं किया जा सकता कि मैं भी सदा हवाई किला बनाता रहा अथवा बालू की भीत उठाता रहा।" मैं भी खड़ा-खड़ा उसकी बातें सुन रहा था। मैंने अपने मन में कहा—"यही कारण है कि इस तरह तुम्हारा अन्त हुआ है। अगर जवानी में तुमने हवाई किले की कल्पना की होती और उसकी नीव डालने के लिए थोड़ा भी यत्न किया होता तो कदाचित् आज तुम सुख से उस किले में खर्राटे लेते होते।"

कितने ही लोग ख्याली पोलाव पकानेवालों से घृणा करते हैं; उनका कहना है कि इस तरह ख्याली पोलाव पकाना निरर्थक है। जो कुछ सोचा है उसे कर दिखाना चाहिए अर्थात् मनुष्य को अपनी कल्पना-शक्ति वहीं तक दौड़ानी चाहिए जहाँ तक उसे कार्य में परिणत किया जा सके। पर संसार में आज तक जितने बड़े-बड़े काम हुए हैं, सभी कल्पना-शक्ति के ही प्रसाद हो सके हैं। पहले कल्पना-शक्ति के सहारे उनका धुँधला आकार बनाया जाता है और तब उनका निर्दिष्ट रूप ठीक किया जाता है।

किसी वस्तु की कल्पना किए बिना हम उसका प्रत्यक्ष रूप कहाँ से बना सकते हैं। मकान बनाने के पहले हम उसका खाका तैयार करते हैं। हाँ, यह ठीक है कि भवन को प्रत्यक्ष रूप देने के लिए तुम्हें ईंट, पत्थर, चूना, गारा इकट्ठा करना होगा, क्योंकि बिना इन साधनों के वह कल्पना-शक्ति का ही खिलौना रह जायगा।

हमारी कल्पना में हमारे आदर्श कभी भी स्थूल रूप नहीं धारण कर सकते जब तक हम उन्हें कार्यरूप में लाने का यत्न नहीं करेंगे। कल्पना शक्ति से काम लेना और बड़ी-बड़ी बातें सोच रखना उचित है, पर अगर हम इन कल्पनाओं से संसार का लाभ करना चाहते हैं तो हमें उचित है कि हम उन्हें कार्य-क्रम में लाएँ और उनका एक रूप खड़ा कर दें। जब तक वे कल्पना की ही वस्तु रहेंगी, वे अव्यावहारिक और बेकार हैं। अगर हमने कल्पना के क्षेत्र से उतारकर उन्हें व्यवहारिक रूप नहीं दिया तो हमें उनसे लाभके बदले हानि की आशा अधिक करनी चाहिए।

एक ओर तो तुम किसी बात की कल्पना कर रहे हो और दूसरी ओर तुम अपने मस्तिष्क में उसके निर्माण का आकार-प्रकार भी निर्धारित करते जा रहे हो, तब तो तुम ठीक मार्ग पर चल रहे हो। चाहे संसार तुम्हें कुछ ही क्यों न कहे, चाहे तुम उनकी दृष्टि में ख्याली पोलाव पकाने वाले हो क्यों न हो, पर तुम्हारा मार्ग ठीक है। प्राचीन इतिहास उठाकर देखो। तुम्हें इस तरह के उदाहरण मिलेंगे। जिन लोगोंने बड़े-बड़े और आश्चर्यजनक काम कर दिखाये हैं, उन्हें लोग सदा ख्याली पोलाव पकानेवाले निरर्थक जीव ही समझते रहे, जो उनकी दृष्टि में इस संसार में कुछ नहीं कर सकते थे। जिस समय वे चुपचाप बैठकर मन ही मन कल्पना का सूत्र बाँध रहे थे, हँसनेवाले उनपर हँसते रहे और उनपर अनेक तरह की बोलियाँ बोलते रहे। पर एक

दिन उन्होंने वह कमाल कर दिखाया कि संसार की आँखें चकपका उठीं।

एक मामूली चारपाई से लेकर हवाई जहाज तक का निर्माण बड़े मस्तिष्कों की कल्पना का फल है। आज यह चारपाई एक साधारण सी वस्तु मालूम हो रही है, पर जिस समय पहले-पहल इसके बनानेवाले ने इसका उपक्रम किया होगा, संसार ने उसे पागल और स्वप्नदर्शी समझकर उसकी अवश्य हँसी उड़ाई होगी। यही बात रूई साफ करने, सीने-पिरोने, गाने गाने, जोतने-बोने तथा खेत काटनेवाली मशीनों के आविष्कारों के साथ हुई होगी। ये सब पुरानी बातें हैं। अभी हाल में ही जिस समय महात्मा गाँधी ने असहयोग की घोषणा की थी, हर कोने से यही आवाज आई कि यह अव्यावहारिक है, महात्माजी केवल कल्पना के रथ पर सवार हैं। पर चन्द दिनों में ही इसने क्या करामात दिखाए। संसार-विजयी अँगरेज चकरा गए।

अमरीका के आविष्कार को ले लीजिए। जिस दिन कोलंबस ने अपना जहाजी बेड़ा सजाकर प्रस्थान किया था, उस दिन सिवा कपोल-कल्पना के उनके पास क्या प्रमाण था कि वे अमरीका द्वीप का पता लगा लेंगे। पर उसी कल्पना के सहारे कोलंबस निरंतर आगे बढ़ते गए और अपने निर्दिष्ट स्थान तक पहुँच गए।

यह किस्सा यहीं समाप्त नहीं होता। अगर विचार कर देखिए तो वर्तमान अमरीका राष्ट्र स्वप्न या कल्पना का ही फल है। कोलंबस के बाद जो लोग समय-समय पर विविध कारणों से प्रेरित होकर यहाँ बसने आए वे अपने साथ क्या लेकर आए थे? कुछ नहीं, केवल कल्पना का एक खजाना। अपने असीम साहस तथा पौरुष के बल उन्होंने वहाँ के आदिम निवासी रेड-इंडियनों पर विजय पाई और अपनी कल्पना को चरितार्थ किया। उसके बाद अमरीका की स्वाधीनता का युग आया। ब्रिटेन की अधीनता से

वे छुटकारा पाकर स्वतन्त्र जीव की भाँति विचरण करना चाहते थे। उस समय उनके पास कोई ऐसा साधन नहीं था, जिससे वे इस पाश को काट सकते। पर उन्होंने अपनी कल्पना चरितार्थ करनी चाही। उनकी कल्पना का ही फल १७७५ की स्वतंत्रता की घोषणा थी। उस कल्पना को उन्होंने चरितार्थ किया और थोड़े ही दिनों बाद अमरीका स्वाधीन हो गया।

यह तो उस युग की बात है। वर्तमान अमरीका की एक एक ध्वनि कल्पना का ही चित्र है। बल्कि यों कहना चाहिए कि अमरीका देश तो कल्पना पर ही चलता है। कल्पना के अतिरिक्त वहाँ कुछ नहीं है।

अब अमरीकावालों को आप क्या कहेंगे। उनकी गणना हवाई किला बाँधनेवालों में होगी अथवा पूर्ण व्यावहारिक मनुष्यों में। जो कुछ वे है उसे देखते हुए तो कोई भी उन्हें ख्याली पोलाव पकानेवाला नहीं कह सकता, पर उनका जो कुछ है सब उसी ख्याली पोलावका परिणाम है। इसीसे हम कहते हैं कि जिन लोगोंको हम स्वप्नदर्शी समझकर उनकी हंसी उड़ाते हैं, उन लोगों की व्यावहारिकता इतनी बढ़ी-चढ़ी हो सकती है कि आपका सभी व्याव हारिक ज्ञान उसके सामने मात हो जाय। जिसे हम लोग स्वप्न कहा करते है, उसके प्रभाव से ऐसी ऐसी मार्के की बातें प्रकट होती है कि वे लोग—जो व्यवहारिकता की हामी भरते हैं—केवल इन स्वप्नों को चरितार्थ करने के लिए हमारे हृदय में सच्ची तत्परता और आकांक्षा होनी चाहिए, फिर उनका चरितार्थ होना कोई बड़ी बात नहीं है।

अगर मार्कोनी ने बेतार के तार की संभावना की कल्पना न की होती तो आज बेतार के तार का शायद कहीं नामोनिशान भी न होता और समुद्र यात्रा में जहाजों के टूटने, टकराने और डूबने से जो इतनी जानें प्रतिवर्ष बचा ली जाती हैं, वे समुद्र केतह में

सोया करतीं। उनका कोई पता तक न पाता कि वे कहाँ विलीन हो गईं। जब पहले-पहल मार्कोनी ने इतनी कल्पना की और अपने दो-चार मित्रों से अपने हृदय की बातें कहीं तो वे उनकी हँसी उड़ाते हुए बोले—"तुम इसी तरह अपनी जिंदगी में हवाई किले बनाते रहोगे।" पर अंत में जिस दिन उसने उस हवाई किले को खड़ा कर दिया, उस दिन उसके मित्र ही नहीं, बल्कि सारा संसार चकित होकर उसका मुँह देखने लगा।

देहाती किस्सा-कहानियों में 'उड़न-खटोला' की बातें सुनकर हम लोग हँस दिया करते थे। उसे केवल दंतकथा समझते थे। यही कहा करते थे कि भला कभी यह भी संभव है कि इस तरह की खटोली बनाई जाय जो आसमान में उड़े। रामायण में स्थान-स्थान पर पुष्पक-विमान की चर्चा है। आजकल की नयी रोशनीवाले बाबू इसे भी दंतकथा कहकर उड़ा देते थे और इसे पौराणिक गाथा कहा करते थे। पर बीसवीं शताब्दी ने उसकी आँख का परदा खोल दिया। जब उन्होंने अपनी आँखों वायुयानों को आसमान में गिद्धों की भाँति मड़राते देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि यह निरी कपोल-कल्पना नहीं है। अब दिन में दस बार भी अगर वे ही वायुयान उड़ते हैं, तो किसी को विस्मय नहीं होता। पर जिस समय अध्यापक लैंगले ने इसकी कल्पना की थी लोग उन्हें बेवकूफ़ कहते थे। वायुयान को लेकर उड़ने के लिये उन्होंने जिस यंत्र का निर्माण किया था, उसका नाम तक लोगों ने 'लैंगले की बेवकूफी' रख दिया था। लैंगले अपने जीवन में सफल नहीं हुआ। पर उसने जो स्वप्न देखा था, उसको उसने स्थूल रूपमें रख दिया था। उसके बाद उसी काम को राइट ने उठाया और एक दिन राइट ने वायुयान को आसमान में उड़ाकर ही छोड़ा।

अभी थोड़े दिन की बात है कि मै एक समाचार-पत्र पढ़ रहा

था। अचानक मेरी दृष्टि एक विचित्र समाचार पर पड़ी। मैं उसे देखने लगा। लिखा था—"अब अमरीका में इस बात का यत्न किया जा रहा है कि आकाश में वायुयानों की सहायता से ऐसे महल तैयार किये जायँ जो स्थायी रूप से वहीं लटकते रहें और जलवायु-परिवर्तन के लिये लोग वहाँ जाकर रह सकें।" इस समाचार को मैंने अपने मित्रों से कहा। सुनकर वे लोग हँसकर रह गए। मैंने अपने मन में कहा—"आज ये इसे कपोल-कल्पना समझ रहे हैं, पर जिस दिन यही महल तैयार हो जायगा इनकी भी कामना होगी कि मैं भी इसमें कुछ समय तक रह आऊँ। इनसे मानव-समाज का कितना भारी उपकार होगा? अगर संसार-भर के लोगों के स्थायी रूप से रहने के लिये आकाश में कहीं प्रपंच हो जाय तो लोगों के जोतने और बोने के लिये कितनी जमीन निकल आए, जिसमें अब तक मकानात बने हैं। इससे बढ़ती आबादी से होनेवाले संघर्ष की आशंका एक बारगी दूर हो जायगी।

लोग प्रायः कहा करते हैं कि कवि और चित्रकार व्यावहारिकता से परे होते हैं, इनका एक भी काम ऐसा, नहीं होता जिसमें व्यावहारिकता का आभास हो। पर क्या किसी ने क्षण-भर के लिये भी अपने इस कथन पर विचार किया है कि इसमें ही वास्तविकता का कितना अंश है। अगर ये कवि, चित्रकार और शिल्पी केवल कल्पना के संसार में ही रहते तो भला आज हमें ये मन-मोहनी तसवीरें, उल्लासदायिनी कविताएँ एवं गाने तथा सुडौल मूर्तियाँ कहाँ से देखने को मिलतीं। कल्पना के संसार में उन्होंने चक्कर काटा और इन सूरतों को गढ़ा और तब इन्हें अंकित कर हमारे समक्ष रख दिया।

यह कपोल-कल्पना की प्रवृत्ति, हवाई किला बनाने की आदत ईश्वर ने हमें जानबूझकर दी है। इस पृथ्वी पर लाखों प्राणी

केवल कल्पना के सहारे जी रहे है। यदि कल्पना करने की शक्ति उनमे न होती तो न जाने कब उनका अंत हो गया होता। कराल काल की जबर्दस्त चोटे और भीषण मार, समय की कहानियाँ, भाग्य के कठोर हाथों से पीड़ित हृदय को वे कल्पना के शीतल स्रोत से ही सींचकर ठंढा करते है। यदि उनके पास यह भी साधन न होता तो वे भाग्यचक्र से पिसकर समाप्त हो गए होते।

जिन लोगों को आठ-आठ और दस-दस वर्ष तक जेल की कालकोठरियों में बंद रहने का दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है, उनसे पूछिए कि बाह्य जगत् से एकदम विच्छिन्न होकर वे अपना समय किस तरह काटते हैं। आप सबसे एक ही उत्तर पाइएगा कि कल्पना के बल पर। जेल के दैनिक जीवन से जब उन्हें फुरसत मिलती है, वे एकांत में बैठकर अपने भूत और भविष्य जीवन की कल्पना करके ही अपने दग्ध हृदय को शांत करते है। शरीर को पिंजड़े में बन्द रखकर भी वे ।कल्पना-शक्ति की सहायता से उड़कर बंधु-बाँधवों में हिलमिल जाते हैं और घर-द्वार की कल्पना में क्षणिक सुख और शांति का लाभ करते हैं।

यही कल्पना गरीबों का एकमात्र मित्र और सहायक है। बड़े-बड़े शहरों मे एक बार दस बजे रात को उठकर दो-चार सड़कों का चक्कर लगा आइए। आप जो दृश्य देखेंगे उसकी कारुणिकता से आपका दिल फट जायगा और कलेजा मुँह को आ जायगा। आप देखेंगे कि भीषण सर्दी पड़ रही है, ओस पानी की बूँद बनकर टपक रही है, हाथ-पैर ठिठुरे जा रहे हैं, दाँत आपस में मल्लयुद्ध कर रहे हैं, इस सर्दी मे भी हजारों प्राणी साधारण पेड़ोंकी छाया में या बरामदे के नीचे एक बोरे के टुकड़े से शरीर ढँककर रात काट रहे हैं। इस बुरी अवस्था में रहकर जीने से मर जाना ही अच्छा है, पर वे जीते हैं और उनमें जीने की लालसा है। सबेरे उठकर देखिए, रात के कष्टों का इनके

चेहरे पर कहीं निशान तक नहीं है। इसका क्या कारण है? उसी कल्पना-शक्ति की सहायता। उस असीम दुःख सागर में डूबते-उतराते हुए वे कल्पनाशक्ति की सहायता से उसके पार हो जाने पर जो सुख उन्हें मिलता है उसी की आशा पर वे प्राण करते हैं।

क्या आपने कभी प्रेम किया है? प्रेम-पात्र सदा आपको अवज्ञ करता है। आपकी बातें अनसुनी कर देता है। आपकी प्रार्थनाओं पर कान तक नहीं देता। आप उसके लिये अपना सर्वस्व निछावर कर देते हैं, पर वह आपकी ओर एक बार आँख उठा कर देखता तक नहीं। फिर भी आप उसका इतना आदर क्यों करते है? उसका पल्ला क्यों नहीं छोड़ते? आप विचार कर देखिए। आपको मालूम होगा कि आपकी कल्पना-शक्ति ही आपकी एकमात्र सहायिका है। जिस समय प्रियतम के वियोग में खिन्न होकर आप उदास हो जाते हैं। उस समय यही कल्पना आपको आनंद सागर में ले जाकर डुबो देती है। आप अनुभव करते है कि आपका प्रेम-पात्र आपके पास बैठा आपके सुख की सामग्री जुटा रहा है। कैसी सुखमय कल्पना है!

जीवन-संग्राम में दिन-भर लड़कर जिस समय आप घर लौटते है आपकी क्या अवस्था रहती है? सभी इंद्रियाँ शिथिल रहती हैं। थकावट से दिमाग भी ठिकाने नहीं रहता। उस समय आपकी सारी थकावटको दूर कर पुनः उस संग्राम में गुँथ जाने के योग्य कौन बनाता है? यही कल्पना। क्षण-भर के लिये भी जहाँ आपने कल्पना के बाजार की सैर की, सारी बीती बातों की स्मृति जाती रही। नये सुख की कल्पना ने आपकी चेतना-शक्ति पर नया प्रभाव डाला और आपको नया प्रोत्साहन मिला।

मैं एक रमणी की बातें बताता हूँ। अपने जीवन में उसे जितनी विपत्तियों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था,

शायद ही किसी दूसरे को उतना भुगतना पड़ा हो। यौवन की छटा पूरी तरह से छिटकने भी न पाई थी कि उस पर वज्रपात हुआ। कठोर वैधव्य-दंड के साथ-ही-साथ एक-एक करके उसके अन्य सहायक भी दुनिया से उठ गए। इतनी भीषण अवस्थामें भी वह विचलित नहीं हुई। मैंने उससे पूछा तो उसने अत्यंत सरल रीति से मुझसे कहा कि मैं अब तक केवल कल्पना के सहारे जी सकी हूँ और यही कल्पना मुझे असीम शांति प्रदान कर रही है। अब मैं इसे कल्पना नहीं कहती, बल्कि इसे उद्बोधन के नाम से पुकारती हूँ। उस रमणी का इस संसार में अब कोई नहीं है, उसके सुख के सभी साधन हर लिए गये हैं, उसकी आर्थिक अवस्था भी इतनी खराब है कि वह अपनी आवश्कताओं की पूर्ति नहीं कर सकती। तो भी इस समय उसके चेहरे पर जो कांति विद्यमान है, जो अलौकिक प्रभा झलकती है, वह बाल्यकाल में भी देखने में नहीं आयी थी। क्यों ? जिस समय सांसारिक उद्विग्नता उसके चित्त को अशांत और मन को खिन्न करने लगती है, वह कल्पना के अथाह सुख-सागरमें उतर पड़ती है और उसमें जी भरकर तैर लेती है। उसने स्वयं कहा है कि वहाँ मुझे जो आनंद मिलता है, जिस सौंदर्य का आलोकन मैं करती हूँ, जो मधुर राग सुनने में आता है, वह इस जड़ जगत में कहाँ!

इसे ईश्वर का असाधारण प्रसाद समझना चाहिये। ईश्वर ने हमारे ऊपर असीम दया करके यह शक्ति प्रदान की है कि हम सांसारिक यातना को भूलकर उसके चरणों के नीचे अपने को ले जायँ और उस अनंत सुख का अनुभव करें, जहाँ न राग है न द्वेष, जहाँ समता, सत्य और सौंदर्य का विस्तृत साम्राज्य है।

आज न सही, पर किसी-न-किसी दिन वह युग आएगा जब लोग कल्पना-शक्ति को शिक्षाका एक प्रधान अंग मानकर इसके पुष्ट

करने के लिये यत्न करेंगे, बल्कि इसकी भी गणना विज्ञान के रूप में होगी। उस समय लोग मानसिक शक्ति का संवरण और संचालन इस रीति से करना सीखेंगे जिसे रचनात्मक काम में वे अधिकाधिक अग्रसर हो सकें।

यहाँ तक तो हमने उन लोगों के बारे में कहा जो स्वप्नदर्शी अथवा कपोल-कल्पी होकर भी व्यावहारिकता के नियम को पूरी तरह पालते है। इसके विपरीत उन लोगों की नामावली है जो अपना सारा समय केवल कपोल-कल्पना में ही बिताया करते हैं। उनके लिये यह संसार कुछ नहीं है, उन्हें अगर निराशावादी कहा जाय तो अनुचित न होगा बस, वे कल्पनाओं का पुल बाँधते चले जाते हैं, सदा आकाश पाताल की खाक छाना करते हैं, उनके लिये यह संसार मिथ्या और अनित्य है। ऐसे लोग कुछ कर-धर नहीं सकते। केवल हवाई किले बनाते रहते हैं। वे उस ख्याली पोलाव को कल्पना की शक्ति से आगे नहीं बढ़ने देते। कल्पना के बाद वास्तव में कुछ कर दिखाना उनकी शक्ति के बाहर है।

इसीलिये हम कहते हैं कि एक व्यक्ति जो अपनी कल्पना को कार्य में परिणत करने के लिये तैयार रहता है, कल्पना को स्थूल रूप देता है, वह उन दस प्रगाढ़ विद्वानों से कहीं बढ़कर है जो केवल बैठे-बैठे कल्पना किया करते हैं और वास्तव में कुछ कर नहीं दिखाते। समाज के लिये पहला कहीं अधिक उपयोगी है और उससे समाज को अधिक लाभ की सम्भावना है।

समाज हमें किस तराजू पर तौलता है? क्या कल्पना की तराजू में? क्या वह हमारा अधिक संमान और आदर इसलिये करेगा कि हम घर बैठे मन को चारों तरफ सबसे अधिक दौड़ाते हैं? नहीं, कदापि नहीं। संसार तो अपने लाभ की बात देखेगा। वह हमारी प्रतिष्ठा उसी के अनुसार करेगा, जितना लाभ हमने

उसे पहुँचाया है अर्थात् कल्पना को स्थूल रूप देकर व्यावहारिकता की कोटि में उसे रखने का हमने जितना अधिक प्रयास किया है संसार उतना ही अधिक हमारी प्रतिष्ठा करेगा।

पर इससे हमारा यह मतलब नहीं कि जो कुछ कल्पना की जाय वह उसी काल में चरितार्थ भी हो जाय। कितने महापुरुष ऐसे हुए हैं जिनकी कल्पना शक्ति ने सर्वोत्कृष्ट बातें निकाल कर रख दी हैं पर उनका उपयोग उनके बाद ही हो सकता है। वे उस अनन्त ज्योति का पता लगाते-लगाते ही मर गए। केवल मार्ग-भर दिखला सके। महर्षि दयानन्द को ही ले लीजिये। आज के सौ वर्ष पहले ही उन्होंने इस देश की अवस्था की कल्पना कर ली थी और प्रशस्त मार्ग बतला दिया था। उस समय उन्हें लोग पागल या नास्तिक ही समझते थे। धर्म विरोधी कह कहकर गालियाँ देते थे।

उनके जीवन-काल में तो बहुत ही कम लोग थे जो उनके वास्तविक तात्पर्य को समझ सके। उनके अनुयायी भी एक तरह से भ्रम में ही थे। आज १०० वर्ष के बाद इस देश ने स्वामी की कल्पना का मूल्य समझा है उनके कट्टर विरोधी भी आज भीतर ही भीतर उनके सिद्धान्तों की प्रौढ़ता और सामयिकता स्वीकार करते हैं। ठीक यही बात जेयस क्राइस्ट (ईसा मसीह) के साथ थी। उस समय के लोग उन्हें पागल कहते थे। उनके अनुयायी जो उनके लिये अपना प्राण तक निछावर कर देने के लिये तैयार थे—उनके धार्मिक सिद्धान्तों को नहीं समझते थे। लोग उन्हें हर तरह से गालियाँ देते थे, उनकी निन्दा करते थे, मारते थे, पीटते थे। यहाँ तक कि उन्हें शूली पर चढ़ा दिया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक युग में कुछ न कुछ ऐसे लोग पैदा हुए हैं जिन्हें उस युग के लोग व्यवहार-शून्य काल्पनिक कहते रहे, पर उन्होंने अवतार का सा काम किया। उसी समय

उन्होंने उस बात की कल्पना की जो निकट-भविष्य में अथवा कुछ काल बाद होनेवाली थी। सर्वसाधारण न तो उतना पारगामी था और न उसकी दृष्टि उतनी आगे जा सकती थी पर उन्होंने सुदूर पर प्रकाश देखा और कल्पना द्वारा अनुमान भी कर लिया कि जो आज सम्भावित-सा प्रतीत हो रहा है वही एक दिन प्रत्यक्ष होकर प्रकट होगा। उपर्युक्त अवसर आने से पहले ही वे काल-कवलित हो गये, पर उन्होंने भावी सन्तति को ठीक रास्ता बतला दिया था। इससे जो उनके समय में केवल कपोल कल्पना थी वही समय पाकर वास्तविकता की कोटि में आ गई।

प्रजातंत्र के पिता परशुराम को ले लीजिए। हम उस समय की घटना कह रहे हैं जब इस देश में वर्णाश्रम धर्म की पूरी प्रतिष्ठा थी और जब क्षत्रियों का धर्म पालन तथा शासन और ब्राह्मणों का धर्म पठन-पाठन तथा जप, तप और होम था। उस समय ही परशुराम ने देखा था कि प्रजातंत्र-शासन ही सबसे उत्तम शासन है और इसी की स्थापना संसार में होनी चाहिए। यह परशुराम की कल्पना थी। उस समय वे पागल ही समझे जाते थे पर आज उसी प्रजातंत्र-राज्य की पुकार संसार के कोने-कोने से सुनाई दे रही है।

कितने लोग ऐसे होते हैं जो अपने चारों ओर निराशा की घनघोर घटा देखते हैं। वे अपने मन में कहते हैं—"मैं इतना प्रतापी नहीं कि इतने भारी-भारी काम कर सकूँ। ईश्वर ने मुझे इतना भाग्यशाली नहीं बनाया है कि मेरी इतनी कीर्ति फैले। जिस अवस्था में मैं हूँ उससे आगे बढ़ने का यत्न करना अथवा कोई बड़ा काम कर डालने का प्रयास करना मेरी समझ में अन-धिकार चेष्टा होगी। जिस अवस्था में मैं हूँ उसी से मुझे सन्तोष करना चाहिए।" परिणाम यह होता है कि वे कल्पना के संसार में प्रवेश नहीं करते और उनकी काल्पनिकता का प्रयोग न होने से

यह धीरे-धीरे बेकार होकर मर जाती है। इस तरह हतोत्साह होकर वे साधारण अवस्था में आगे नहीं बढ़ते और अपनी सारी योग्यता पर एक साथ ही पानी फेर देते हैं।

तुम जीवन की किसी भी अवस्था में क्यों न हो, अपनी कल्पना-शक्ति का किसी भी प्रकार ह्रास न करो। हृदय की तरंगें सर्वथा पोपली और सारहीन नहीं होतीं। जो कुछ कल्पना वे करती हैं, उनमे वास्तविकता का कुछ न कुछ अंश अवश्य रहता है, चाहे वह आज चरितार्थ हो या भविष्य में। ईश्वर ने हमे नरदेह इसीलिए दी है कि हम नित्य नई आकांक्षाओं की कल्पना करें और ऊपर उठते जायें। उसी परमपिता ने कल्पना-शक्ति को हमारे भाग्य का विधायक बनाया है, हमारे जीवन के गठन में इस कल्पना-शक्ति का बहुत बड़ा हाथ है। अगर हम वर्तमान अवस्था से ही सन्तुष्ट है तो निश्चय जानिए कि हमारा उत्थान सम्भव नहीं। संसार में वही मनुष्य ऊपर उठ सकता है, जो ऊपर देखता रहता है।

जिस मनुष्य में कल्पना नहीं है, वह सदा संकीर्ण रहता है। वह रोजगारी है, तो बँधे काम का दास है। उसमें भावुकता नहीं है। बस, उसे चौबीसों घंटे रुपये की धुन पड़ी रहेगी। इसके अतिरिक्त उसे कुछ सूझेगा ही नहीं। संसार के मनोमोहक पदार्थ—जैसे सुन्दर चित्र, कला अथवा पुस्तकें उसके चित्त को नहीं लुभा सकतीं। राजनीति, दर्शन अथवा मीमांसा क्या है, उससे कुछ मतलब नहीं। मानव-समाज के उपकार या कल्याण की चिंता भी वह नहीं करता। उसका मन सदा रुपये की चिंता में व्यस्त रहता है और उस सीमा से वह आगे नहीं बढ़ता। उसके मन में कभी भी किसी तरह का प्रश्न नहीं उठता। वह सदा इसी बात से सुखी रहेगा कि उसके मार्ग में किसी तरह की बाधा न उपस्थित की जाय और वह जो कुछ कह रहा है,

उसे कहने दिया जाय। उसकी प्रेरणाएं सदा भौतिक पदार्थों की ओर रहती हैं, वह कभी भी ऊपर उठने की कामना नहीं करता, वह सदा जमीन पर ही लोटता रहना चाहता है। उसके आदर्श अत्यन्त हीन हैं। अपनी वर्तमान अवस्था से ही वह पूर्ण संतुष्ट है और उसी में वह अपना उद्धार देखता है।

कल्पना का दूसरा नाम आशा है। आशा की सुखद और शीतल छाया में जो रह आए हैं, उनकी उस दिन क्या अवस्था होगी, जिस दिन उनकी आशा का नाश हो जायगा। वे उस दिन से मृतप्राय हो जाते हैं। ठीक यही अवस्था कल्पना-शक्ति के साथ भी चरितार्थ होती है। जिस दिन हमें यह विदित हो जायगा कि अब हमारी कल्पना का दिन नहीं रहा, भविष्य के लिये अब हम किसी तरह की कल्पना नहीं कर सकते, उस दिन हमारी क्या अवस्था होगी ?

इस दशा को हमें कभी भी नहीं पहुँचना चाहिये। यह जीवन अनवरत उत्थान का साधन है। हम अपनी पूर्णताको कभी पहुँच भी नहीं सकते, जब हमें इस बात की आशंका है कि हमारी कल्पना शक्ति का ह्रास हो गया। अब हम कल्पना के योग्य नहीं रहे। अब हमें शांत होकर बैठ जाना चाहिए।

जिस तरह युवावस्था की सीमा पार कर जाने पर भी हमें अपने आमोद, प्रमोद और आनंद में कमी नहीं करनी चाहिए। उसी तरह जीवन की किसी भी अवस्था में हमें कल्पना-शक्तिका अन्त नहीं कर देना चाहिए। जिस प्रकार आनन्द करना आवश्यक है उसी प्रकार इस जीवन को सदुपयोगी बनाना आवश्यक है। पर यदि हम सदा विपन्न और हतोत्साह बने रहेंगे तो हम अपने को किसी तरह भी उपयोगी नहीं बना सकते, क्योंकि विपन्नता शरीर के रस को चूस कर हमे निःसार बना देती है और आकांक्षाओं को मार डालती है।

चालीस या पचास वर्ष तक निरंतर कल्पना के संसार में भ्रमण करने से हमारे ज्ञान की जो वृद्धि होगी, बुद्धि का जो विकास होगा, मनोबल का जो उत्थान होगा तथा इतने दिनों के शासन से जो बल बढ़ेगा, उसके मुकाबिले युवावस्था की चंचलता का ह्रास कुछ नहीं है। जब तक हम कल्पना के बाजार में घूमते रहेंगे, हमारी शक्ति ह्रास नहीं हो सकती, हम सदा ताजे बने रहेंगे। पर जिस दिन कल्पना से काम लेना छोड़ देंगे, हम जीर्ण-शीर्ण होकर नष्ट हो जायेंगे। ऊँचे आदर्श, परिष्कृत विचार, सत्कामनाएँ, अध्यवसाय, प्रशंसनीय प्रयास, जीव-दया उदारता तथा आशावाद आदि में लिप्त मनुष्य सदा फूलता और फलता देखा गया है; चाहे उसकी अवस्था कितनी ही अधिक क्यों न हो गई हो।

चाहे तुम्हारी उमर कितनी भी अधिक क्यों न हो, यदि तुम कल्पना की शक्ति का परिवर्धन और पोषण करते जा रहे हो, तो तुम में नित्य नई शक्ति का संचार होगा, जिसकी तुम कल्पना तक नहीं कर सकते थे। हम सब जानते हैं कि हमारे अन्दर अपरिमित शक्ति है, जिसका हम प्रयोग नहीं कर पाते; पर बहुधा हमलोग उसे पकड़ भी नहीं पाते। कभी-कभी हमें ऐसा मालूम होता है कि हम में कोई ऐसी बात है; जिसका यदि हम प्रयोग करें तो जीवन की सफलता में उससे बड़ी सहायता मिल सकती है। इस दबी शक्ति को काम में लाने का एक ही उपाय है कि हम सदा अपनी कल्पना को कार्य में परिणित करने का यत्न करें। ऐसा कोई भी काम नहीं है जिसकी हम कल्पना करें, पर जिसे चिरतार्थ न कर सकें। आज जिसे हम सुख-स्वप्न कहते हैं, कल ही उसे हम प्रत्यक्ष करके दिखला सकते हैं, जिससे अपनी कल्पना को एकबार भी प्रत्यक्ष करके देख लिया है वह फिर कल्पना के संसार से अलग नहीं हो सकता

हमारा मन भावों और आदर्शों का खजाना है तथा हमारे जीवन का निर्माता है। वही हमें सफल या असफल बना सकता है, स्वर्ग तक उड़ा सकता है अथवा नरक में ठेल सकता है। सुख और दुःख हमें कहीं अन्यत्र से नहीं मिलता। हम एक या दूसरे की कल्पना यहीं बैठे-बैठे कर सकते हैं।

एक बार स्वर्ग की कल्पना कीजिए। स्वर्ग अनन्त सौन्दर्य का आगार है। वहाँ अशान्ति, वैमनस्य, विपत्ति तथा दुःख का नाम नहीं है। वहाँ कोई किसी से डाह नहीं करता, वहाँ कोई दूसरों से अनुचित लाभ उठाना नहीं चाहता, परस्पर सद्भाव और मैत्री से सब लोग काम करते हैं। जिसे जिस काम से प्रेम या अनुराग है, वह आनन्द के साथ उसी में निरन्तर लगा है। वहाँ प्रेम और समता का साम्राज्य है। आनन्द और सुख के अनवरत स्रोत में वैमनस्य बह जाता है। न किसी को अशान्ति है, न किसी को चिन्ता है, न कोई परेशान है, न कोई असन्तुष्ट है। भय की तो परछाईं तक नहीं दिखाई देती। प्रेम का सबके ऊपर राज्य है। यह हुई स्वर्ग की कल्पना। क्या इस कल्पना को हम इसी भूमि पर नहीं चरितार्थ कर सकते ?

३

अवसर

बहुत दिनों की बात है कि कैप्टन सटर नाम के एक व्यक्ति स्विटजर लैंड से अमरीका आए और कैलिफोर्निया में रहने लगे। कलोना के तट पर उन्होंने थोड़ी-सी जगत खरीदी और लड़की चीरने का कारखाना खोला। नदी से कारखाने में पानी लाने के लिए पीछे से उन्होंने एक खाई खोदवा दी थी। एक दिन उनका नौकर मार्शल क्या देखता है कि खाई के चारों ओर कुछ पदार्थ चमक रहे हैं। उसने थोड़ा-सा बटोर लिया, धोकर साफ किया और घर लाया। रात को उसने इसकी चर्चा सटर से की। फिर क्या था, उस जमीन का भाग्य खुल गया। १८४८ ईसवी अमरीका के इतिहास में इसीलिये आज तक प्रसिद्ध है।

जिस व्यक्ति से कैप्टन सटर ने यह जमीन ली थी उसने स्वप्न में भी इस बात का अनुमान नहीं किया था कि मैं सोने की खान बेच रहा हूँ। बड़ी-बड़ी कल्पनाओं को चरितार्थ करने के लिये उसने उस भूमि को बेचा था और वह घबराकर छोड़कर बाहर कमाने निकला था। पर जहाँ तक मालूम हुआ उसकी भाग्यश्री उससे कभी खुश न हुई। पर जिस जमीन को उसने बेचा था उससे अब तक बीसों करोड़ रुपये का सोना निकाला जा चुका है।

दूसरा उदाहरण पेनसिलवानिया के एक किसान का है। उसने अपनी जमीन २५००) रुपये में बेच दी और आप चचेरे भाई के साथ कनाडा चला गया, जहाँ उसके चचेरे भाई को तेल

की खान मिल गई थी। उस जमीन में होकर एक नाला बहता था। एक दिन की बात है कि वह खरीदार अपने चौपायों को उसी नाले मे पानी पिला रहा था। एकाएक कहीं नज़र पानी पर पड़ी। उसने देखा कि पानी पर कोई चिकना पदार्थ जम गया है। जाँच करने पर वहाँ तेल की बड़ी भारी खान निकल आई, जिससे पेनसिलवानिया राज्य को अरबों रुपये की आमदनी हुई।

इन सब घटनाओं का विवरण पढ़कर नवयुवक सहसा यही कह बैठेंगे कि एकाध घटना ऐसी हो जाती है, नहीं तो संसार मे सबके लिए इतना धन कहाँ गड़ा पड़ा है। हम भी इस बातको स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक के भाग्य में सोने की खान या तेल का कुण्ड नही बना है। हमारे कहने का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक स्थान में चाहे वह छोटा-सा गाँव ही क्यों न हो, इस तरह के छिपे खजाने पड़े हैं, जिन्हें हम साधारण से भी साधारण समझते हैं, पर यदि उनका ठीक तरह से प्रयोग किया जाय तो वे मनुष्य के भाग्य को फेरने के बड़े भारी साधक बन सकते हैं।

अली हफीज की कहानी कौन नहीं जानता। अली हफीज फारस का रहनेवाला एक साधारण किसान था। धन की उसे बुरी चाह पड़ गई थी। उसने देखा कि अगर मैं घर छोड़कर विदेश चला जाऊँ तो अतुल सम्पत्ति बटोर सकता हूँ। यह विचार कर जो कुछ दाम मिल सका उतने ही पर उसने अपनी उत्तम और उपजाऊ जमीन बेच दी और परदेश के लिये निकल पड़ा। वह दर-दर हीरा खोजता फिरा, पर उसे हीरा कहीं नहीं मिला। जिन्दगी-भर वह मारा-मारा फिरा और अन्त में किसी अज्ञात देश में वह अन्न-वस्त्र हीन होकर मर गया और इधर जिसने उसकी जमीन को खरीदा था, उसी में से हीरा बटोर-बटोर कर मालामाल हो गया। जिस भूमि को निराश होकर अली हफी

ने बेच दिया था, उसी भूमि से गोलकुण्डा का प्रसिद्ध हीरा कोहेनूर निकला था।

इस भूमि पर अली हफीज की भाँति अनेक नवयुवक पाए जायँगे, जो अवसर को ठीक स्थान पर नहीं पहचान पाते। जिस स्थान पर हैं वहाँ उन्हें कुछ दिखाई नहीं देता और वे हर घड़ी यही सोचा करते हैं कि यहाँ से अन्यत्र चलकर हम बड़ा काम कर लेंगे।

कितने लोग ऐसे हैं जिनके सामने अवसर हाथ बाँधे खड़ा है, पर वे उसे देख नहीं रहे हैं। या तो उनमें धैर्य नहीं है कि वे अवसर को पूरी तरह से परिपक्व होने दें या उनमें वह शक्ति नहीं है कि वे उस काम को हाथ में लें, जिससे वे कारू के खजाने का द्वार खोल सकें।

आज तक संसार में जितने लोग असफल हुए हैं उनको यदि लाकर खड़ा किया जाय और उनकी परीक्षा की जाय तो अनेक ऐसे मिलेंगे जिन्होंने आये हुए अवसर को अपने हाथ से खोया है। यदि उन्होंने अवसरों का उपयोग किया होता तो आज संसार के इतिहास में उनका वृत्तान्त दूसरी भाषा में लिखा गया होता।

अवसर की तलाश में प्रवास की आवश्यकता नहीं। अवसर तुम्हारे आस-पास फिर रहा है, केवल तुम्हें प्रयास कर उसे पकड़ना है। चाहे तुम देहाती हो या शहरी हो, चाहे किसी गरीब की झोपड़ी में पैदा हुए हो, पर राजा के महल में रहने की तुम में योग्यता होनी चाहिए। अगर तुममें शक्ति है और साहस है तो तुम अपने अनुकूल अवसर तैयार कर सकते हो। आवश्यकता केवल इस बात की है कि तुम सदा मुस्तैद रहो और साधारण से साधारण अवसर पर भी न चूको। साधारण से साधारण कामनाओं को भी चरितार्थ करने के लिए सदा तैयार रहो।

गवेषणा करने पर तुम्हें भी मालूम होगा कि अली हफीज की भाँति जिस भूमि को एक हताश होकर छोड़ देता है, उसीसे दूसरा असंख्य धनराशि बटोरता है।

एडीसन, कार्नेगी, वानमेकर, मार्शल फील्ड आदि की जीवनियाँ पढ़िए। विदित हो जायगा कि एक अतिशय क्षुद्र अवसर के सहारे संसार में इतने बड़े हो सके। गुरुत्वाकर्षण के पिता न्यूटन क्या गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के पीछे पागल होकर घूम रहे थे? कदाचित् इसके पहले उन्होंने गुरुत्वाकर्षण की कल्पना तक नहीं की थी। अतिसाधारण अवसर का प्रयोग कर ही उन्होंने इतना भारी सिद्धान्त निकाल डाला। उन्होंने देखा कि जो चीज ऊपर की ओर फेंकी जाती है, अथवा ऊपर से ढकेली जाती है वह जमीन में आकर ही ठहरती है, इससे जमीन में किसी तरह की शक्ति अवश्य है जो सब चीजों को अपनी ओर खींच लेती है। कितनी छोटी बात थी, पर उससे कितना भारी सिद्धान्त निकला। अगर न्यूटन ने इस साधरण अवसर को उपेक्षा की दृष्टि से देखा होता तो आज संसार के सामने वह इतना भारी, महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी सिद्धांत रखने में कभी भी सफल न हुआ होता।

इसी तरह सब जगह, सब समय और सबके लिए बराबर अवसर वर्तमान है। केवल उसको समझनेवाला, समझ कर उसे पकड़नेवाला तथा उससे लाभ उठानेवाला चाहिए। इसीसे हम कहते हैं कि अच्छे या बुरे अवसर के तुम स्वयं विधाता हो।

मार्कोनी बड़ा भारी वैज्ञानिक नहीं था। वह दिन-रात तार के यन्त्रों के पीछे नहीं पड़ा रहता था। क्या किसी ने स्वप्न में भी अनुमान किया था कि यह मामूली आदमी इतना भारी आविष्कार कर सकेगा, वह तारघर में चपरासी था और दिनभर तार बाँटा करता था। पर जिस समय अवसर उपस्थित हुआ,

उसीने उसका उपयोग किया और आज उसके नाम पर संसार लट्टू हो रहा है। एडिसन रेल की सड़कों पर कागज बटोरा करता था। उसके साथ ही ठेलागाड़ी पर उसकी लेबोरेटरी भी लदी चलती थी। उसके साथी काम करनेवाले उसकी इस मूर्खता पर हंसते थे। क्या उस समय उनमें से एक ने भी यह कल्पना की थी कि किसी-न-किसी दिन इसी ठेलागाड़ी की लेबोरेटरी की बदौलत एडिसन संसार में अद्वितीय गिना जायगा और संसार के कोने-कोने मे उसकी अमरकीर्ति सुनाई देगी। एडिसन की उसी ठेलागाड़ी की लेबोरेटरी की बदौलत आप आज घर बैठे विविध प्रकार के गाने सुन लेते हैं।

टेलीफोन को ही ले लीजिये। अलेकजेण्डर बेल ने इस टेलीफोन का आविष्कार कर संसार को कितना लाभ पहुँचाया है, जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। आज आप घर बैठे देश के जिस शहर से चाहे बाते कर सकते हैं। इस तरह अपना अमूल्य समय और खर्च बचाते है। पर जिस समय यही अध्यापक बेल कालेज की लेबोरेटरी में अनुसन्धान किया करते थे इन्हीं के विद्यार्थी इनको पागल समझकर इनकी हँसी उड़ाया करते थे। यहीं तक नहीं आविष्कार करने के बाद जब इन्होंने लिमिटेड कम्पनी जारी की तो इस कम्पनी के हिस्से चौथाई दाम पर भी लेने के लिए लोग तैयार नहीं थे। पर अध्यापक बेल ने इस अवसर को भी हाथ से जाने नहीं दिया। वे जानते थे कि चन्द दिनों के बाद इस कम्पनी के हिस्से सोना बरसायेंगे।

इस तरह के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं, जहाँ एक व्यक्ति साधारण अवस्था में रहकर ही लोग बड़े-बड़े पद पर पहुँचते हैं वह उनके साथी उनकी हँसी उड़ाने में ही रह गये है। इसका एकमात्र कारण यह था कि उन्होंने अवसर को पहचाना और उसका उपयोग किया और अन्य लोगों ने अवसर को

देखकर भी उसकी उपेक्षा की। परिणाम यह हुआ कि वे जहाँ-के तहाँ रह गये।

अवसरों की मात्रा दिन-दिन बढ़ती जा रही है। वर्तमान युग मे की जितनी सम्भावना है, बीते युग में नहीं थी। सौ वर्ष पहले गिनेगिनाए पेशे थे, इसलिए उपयुक्त अवसर के लिए अत्यधिक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। आज सैकड़ों पेशे हो गये है। इसलिए थोड़ी चेष्टा करने से भी किसी-न-किसी पेशे में काम करने के लिए उपयुक्त अवसर मिल ही जायगा। जो काम करना नहीं चाहता या जो जी चुराता है, उसके लिए सदा एक-सी बाते है और उसकी अवस्था सभी देशों में समान है।

हम लोगों में से बहुतों में एक दोष और है कभी-कभी हम लोग अवसर को इतना महत्त्व देने लगते हैं कि मनोबल को कुछ समझते ही नही। यदि विचार कर देखा जाय तो यही मुख्य है। अगर तुम में सच्चा उत्साह है, अगर तुम वास्तव में ऊपर उठने के अकांक्षी हो, अगर तुम जीवन की सत्यता को अच्छी तरह समझते हो और उसका ठीक-ठीक प्रयोग करना चाहते हो, अगर तुम अपनी आशाओं की ओर दत्तचित्त होकर बढ़ते हो और उन पर विजय पाने के आकांक्षी हो, अगर तुम तत्परता के साथ आशान्वित होकर सुअवसर की खोज में निकलते हो तो तुम्हे अवसर की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

अगर हम आँख खोलकर देखे तो हमें मालूम होगा कि गली दर-गली अवसर हाथ बाँधकर हमारी प्रतीक्षा में खड़ा रहता है। पर हम लोग आँख में पट्टी बाँधकर चलते हैं और जब तक अवसर हमारे रास्ते से दूर नही निकल जाता, हमें दिखाई नहीं देता। अवसर आकर उपस्थित हुआ और हमलोग बैठे ऊँघ रहे हैं। वह हमारी प्रतीक्षा नहीं कर सकता। हमको असावधान पाकर वह आगे बढ़ गया और जब हमारी तंद्रा टूटी तो हम देखते हैं

कि वह हमसे कोसों दूर है। उपयुक्त अवसर को समझने और पहचानने के लिये सतर्क दृष्टि चाहिए। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अवसर उपस्थित होता है, हम उसे देखते हैं, पर उलटा उसे आपत्ति या संकट समझ कर हाथ नहीं लगाते और दूर भाग जाते हैं।

जानवरों को चारागाह में चरने के लिये छोड़ दीजिये। वे अपनी भूमि पर कभी नहीं चरेंगे। हमेशा पड़ोसी के खेत की मेंड़ तोड़ने के लिए उसमें मुंह डालेंगे। वे समझते हैं कि वह घास अधिक मीठी होगी और उससे जल्दी पेट भर जायगा। यह हाल केवल जानवरों का ही नहीं है। मनुष्यों में भी यही लीला देखने में आती है। लड़के अपने खिलौने के साथ खेलते-खेलते थक जाते हैं और सदा अपने साथी के खिलौने पर आँख गड़ाए रहते हैं, मानों उस खिलौने के साथ खेलने में उन्हें ज्यादा आनन्द मिलेगा। अपने साथी का खिलौना छीन लेने के लिए बच्चा अपने हाथ का खिलौना बिना किसी विचार के फेंक देगा।

बड़े-बूढ़ों का भी यही हाल है। जीवन संग्राम के लिये हमारे पास अपना जो कुछ साधन है उसकी तो हम उपेक्षा करते हैं पर अपने पड़ोसी की वस्तु पर सदा आँख गड़ाए रहते हैं। अपनी अवस्था की निन्दा और अपने पड़ोसी की अवस्था की प्रशंसा की बात तो हर जगह सुनने में आती है। हमारे पास जो कुछ है उसे हम ओछी नजरों से देखते हैं। हमें अपनी अवस्था से सन्तोष नहीं है, पर हम अपने पड़ोसी की अवस्था को तूल देते हैं और उसके लिए सदा लालायित रहते हैं। क्या यह बात ठीक उसी जानवर और पड़ोसी के खेत की घास के समान नहीं है ?

जहाँ-कहीं आप जाइये आपको ये ही किस्से सुनाई देंगे। अगर हम किसी दफ्तर में नौकर हैं तो हम उस नौकरी के नाम

पर झंखते हैं और अपने दूसरे नौकर-भाई के पद पर दाँत गड़ाए रहते हैं हम यही सोचते हैं कि अगर हमें यह पद मिल जाय तो हमारा दिन बड़े मजे में कटे। अगर हम रोजगारी हैं तो अपने रोजगार को हीन समझते हैं और अपने पड़ोसी के रोजगार को बड़ा लाभदायक समझते हैं और हर घड़ी इसी फिक्र में रहते हैं कि अगर यह रोजगार छोड़कर पड़ोसीवाला रोजगार ग्रहण कर लें तो हम मालामाल हो सकते है। किसी पेशे या काम को उठाकर देखिए आपको यही दृश्य नजर आएगा। अगर हम वकील हैं तो वकालत को हीन समझते हैं। और यही कहते हैं कि हम नाहक इस पेशे में आ फँसे, इसमें तो आमदनी की गुंजायश है ही नहीं। अगर मैं डाक्टर होता तो अच्छा रहता। रुपयों से घर पाट देता पर जरा डाक्टर साहब की बातें सुन लीजिए। वे भी अपने भाग्य पर कम नहीं रोते है। वे तो डाक्टरी को संसार में सबसे हीन पेशा समझते है। और उससे मुक्त होने के लिये सदा आतुर रहते हैं। हम लोग शहर के यहाँ के नारकीय दृश्य तथा जीवन से इतने व्याकुल हो गये हैं कि हर घड़ी यही चाहते हैं कि जरा सुविधा मिले तो देहातों में जाकर रहें और शान्ति से दिन काटें। पर एक देहाती लड़के के मन की बात उससे पूछिए। खेत में वह हल जोत रहा है या नदी के किनारे चौपायों को चरा रहा है, पर उसका ध्यान उसी नागरिक जीवन की ओर है। वह अपने मन में कहता है "यहाँ तो सुबह से शाम तक हल जोतना पड़ता है तो भी पेट भर अन्न मयस्सर नहीं होता। अगर किसी तरह शहर में पहुँच जाता तो आराम से दिन कटता। यह विपत्ति एक बारगी मिट जाती।" लिखने का तात्पर्य यह कि हम जिस अवस्था मे हैं और जो काम कर रहे हैं उसमें हमें लेशमात्र भी आशा नहीं दिखाई देती। हम मान बैठे हैं कि यहाँ रहकर इस काम को करते हुए हमारा उत्थान असम्भव

है, पर दूसरे काम में दूसरी जगह, आगे हमें प्रकाश ही-प्रकाश दिखाई देता है। हमें यहां विश्वास है कि अगर इससे निकलकर हम उसमें चले जायं तो कल ही हमारी अवस्था बदल जायगी।

इस तरह हम लोग अपना सर्वनाश करते हैं। अपनी शक्ति का व्यर्थ ह्रास करते हैं। जिस अवस्था में हैं, जो काम कर रहे हैं, उसे हीन या अनुपयोगी समझकर उसमें दत्तचित्त नहीं होते, उसे तत्परता के साथ नहीं करते और उससे छुटकारा पाकर अभिवांछित पेशे की ओर जाने भी नहीं पाते। कितना कारुणिक दृश्य है! पर हमारी समझ में यह नहीं आता कि हमारी प्रेरणायें इस तरह की क्यों होती हैं? जिस काम में हम लगे हैं उसे भली भाँति समझते हैं, उसके सुख दुःख, सुविधा और असुविधा को जान गये हैं। पर हमारा पड़ोसी जो काम करता है उसके बारे में हम कुछ नहीं जानते। उसके काम में क्या-क्या कठिनाइयाँ हैं, हम उन्हें झेल सकेंगे कि नहीं इत्यादि बातों को हम जरा भी नहीं जानते, फिर भी हम उसके लिए इतने लालायित क्यों रहते हैं? और हम यह कैसे मान लें कि इस अवस्था से निकलकर उस अवस्था में ही क्या किया जा सकेगा, जब हम यहाँ कुछ नहीं हासिल कर सके तो वहाँ कुछ हासिल कर सकेंगे, यह सर्वथा संशयात्मक है। तो क्या सदा हतोत्साह रहने के लिए ही हम एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने के लिए इतने उत्सुक रहते हैं? अगर हम एक काम में सफल नहीं हो सके तो क्या दूसरे में भी हमें सफलता नहीं मिल सकती? अवसर सब जगह बराबर है केवल ढूँढ़कर निकालने का साहस और धैर्य चाहिये।

जिस अवस्था में हैं उससे भिन्न कहीं बड़ी-बड़ी आशाओं की कल्पना करना व्यर्थ है। इसमें केवल समय और शक्ति का ह्रास होगा। जो काम तुम्हें सौंप दिया गया है उसी में तत्पर रहो और उसी को अपने अनुकूल बनाने का यत्न करो। तुम्हारी

प्रशंसा तो तभी है जब तुम उसी अवस्था में रहकर अपने परिश्रम से जीवन को इतना उपयोगी बना दो कि उसके संसर्ग में जो कोई आए वह भी पुनीत हो जाय, उसमें भी वही उत्साह और साहस भर जाय। अगर भाग्यवश या किसी बाह्य कारण से तुम फंस गये हो, तुम्हारे घर की अवस्था अच्छी नहीं है तो तुम्हें हताश होकर वहाँ से भागने की जरूरत नहीं है। उसी अवस्था में रहकर काम करो और तुम्हें वहीं सफलता मिलेगी। संसार का इतिहास उठाकर देखोगे तो तुम्हें मालूम होगा कि संसार के सबसे बड़े पुरुष किसी अनुकूल अवस्था मे रहकर इतने बड़े नहीं हुए थे, बल्कि इसी तरह की—इससे भी भीषण—कठिनाइयों का उन्हें सामना करना पड़ा था। अवसर उसी के लिए उपयोगी और लाभदायक होता है जो सबका उपयोग करता है। जो उसकी प्रतीक्षा में बैठा रहता है। जिस अवस्था मे तुम हो उसी में तुम्हारे लिये सबसे बड़ा अवसर छिपा पड़ा है। यह तुम्हारा काम है कि तुम उसे खोजकर बाहर निकालो और उससे लाभ उठाओ।

जिस काम को तुमने उठाया है उसी में दत्तचित्त और तत्पर रहो, वहीं से तुम मालामाल हो जाओगे। अगर तुम किसान हो तो अपने खेत को खूब गहरा जोतो, तुम्हें उसी में सोने की खान और तेल के कुण्ड मिलेंगे। इसके लिये तुम्हें कहीं अन्यत्र नहीं जाना पड़ेगा। यह आशा तुम कभी मत करो कि तुम्हें वास्तव में गहरा जोतने से सोने की खान अथवा तेल के कुण्ड मिल जायेंगे। हमारे कहने का अभिप्राय यह है कि जितना गहरा जोतोगे और जितनी अच्छी खाद दोगे उतनी ही अधिक सफलता तुम्हें खेती में मिलेगी। तुम्हारी पैदावार इस तरह बढ़ जायगी कि खेती की बदौलत ही तुम मालामाल हो जाओगे। इस बात की कभी कल्पना तक न करो कि जिस अवस्था में तुम हो वह

तुम्हारे अनुकूल नहीं है अथवा तुम्हारी अवस्था इतनी हीन है कि तुम इस अवस्था से संतुष्ट नहीं रह सकते।

घर में बैठे रहकर अवसर-अवसर चिल्लाते रहने से अवसर हाथ नहीं आता। अवसर उसी को मिलता है जो अवसर की खोज में निकलता है और दोनों भुजाओं को फैलाकर मथ डालता है और अवसर को बाहर निकालता है। कहा भी है—"जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ। हौं बौरी ढूढ़न गई रही किनारे बैठ।" सच्चे हृदय से पूर्ण तत्परता के साथ काम करने बैठ जाओ और दोनों भुजाओं के बल पर भरोसा करो। अवसर स्वयं आकर तुम्हारे सामने खड़ा हो जायगा।

अवसर तो सब जगह एक समान है चाहे तुम खेती करते हो, चाहे कारखानेवाले हो, चाहे दुकानदार हो, या और कुछ हो। इस संसार मे अंगुल-भर भी भूमि ऐसी नहीं है जो अवसरों से खाली हो।

केवल हम में तत्परता चाहिए। अगर हम हृदय से सफल होना चाहते हैं तो हम प्रत्येक अवसर को अपने अनुकूल बना सकते हैं। प्रत्येक क्षण में अवसर आते है और जाते है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रत्येक अवसर में वही समता है, कोई उन्हें देखता है और कोई देखता ही नहीं तथा कोई उन्हें देखकर भी उदासीन बना रहता है। जिसने देखा और पकड़ा वह तो ऊपर उठ गया और जो उदासीन हो पड़ा रहा वह जहाँ का तहाँ रह गया। इससे स्पष्ट है कि अवसर के हम स्वयं विधायक हैं। अगर हमारे मस्तिष्क की आँखें खुली हैं तो अवसर का कपाट भी हमारे लिये सदा खुला है।

जीवन का अधिक भाग तो हमने खेल-कूद और बेकारी में नष्ट किया। पग-पग पर हमें असफलता मिलती रही। ठोकर खाते-खाते हमारा दिल भर गया। आज हम विपन्न होकर बैठे

है और अपने मन में कहते हैं, अगर एक बार हमें फिर अवसर मिल जाता तो हम पूर्ण तत्परता के साथ काम करके अपने जीवन को सफल बनाते। आज जो अनुभव हमने हासिल किया है उसकी सहायता से हम अवश्य सफल हो जायँगे। जो समय हमने खोया है उसके लिए पश्चात्ताप करते हैं और फिर से आरंभ करने के लिये हम नये अवसर की प्रतीक्षा में आशान्वित होकर बैठते हैं। इस तरह हम अंधों की भाँति बैठे-बैठे टटोलते ही रहते हैं। हमें यह खबर नहीं कि नया अवसर, नया युग और नया जीवन प्रतिदिन आरंभ होता और समाप्त होता है। प्रत्येक उषा का प्रादुर्भाव नयी ज्योति लेकर होता है, नये नये अवसर उसके लिए तैयार रहते है और वह अपने जीवन के पिछले अनुभवों को नयी तरह से प्रयोग में ला सकता है।

बहुधा लोग कहते हैं कि इस संसार में गरीबों के लिये कोई स्थान नहीं है। वर्तमान युग मे जो आर्थिक संघर्ष चला है वह उन्हें खाता चला जा रहा है और उनका अस्तित्व सदा के लिये इसके गंभीर गह्वर मे विलीन हो जायगा। पर यदि वास्तव में देखा जाय तो संसार के इतिहास में कभी भी ऐसा समय नहीं आया जब गरीबों के लिये भी समान अवसर न उपस्थित हुआ हो। कहीं कहीं तो इन्हीं गरीबों ने ही संसार की रक्षा की है, उसे पतन से बचाया है। उनके लिये सदा अवसर रहा है और रहेगा, क्योंकि जो कुछ वे कर सकेंगे अमीर और रुपयेवाले उसे नहीं कर सकते। उन्हें एक गिरी अवस्था से उठना है। इस उत्थान में उन्हें असीम शक्तिका संचार करना पड़ेगा और उससे जो स्फूर्ति पैदा होगी उसका अमीरों में अनुमान भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि उनमें संचालन का ही अभाव है।

हम ऊपर कह आए हैं कि अवसर सदा आते और जाते रहते है जो एक अवसर खो चुका और बैठकर उसी खोए हुए अवसर की

चिन्ता करता है वह दूसरा अवसर भी खो देता है अनेक ऐसे मिलेंगे जिनकी .... का यही कारण है कि जिस समय अवसर आया वे बैठे बैठे मुँह निहारते रह गए और अवसर चला गया। बाद, जब उन्हें अपनी भूल मालूम हुई तो बैठ कर पछ-ताने लगे। इतने समय में न जाने कितने अवसर आए और चले गए। ऐसे लोग उसी खोए हुए अवसर के लिये रोया करते हैं। उन्हें यह नहीं सूझता कि जो गया वह हाथ से गया अब उसकी चिन्ता करना व्यर्थ है। जो सामने है और आनेवाला है उसे कभी नहीं खोना चाहिये, क्योंकि अवसर तो क्षण-क्षण पर आया और जाया करते हैं स्वदेशी के युग को ही ले लीजिए। या १९२१ के असहयोग आन्दोलन को ले लीजिए। स्वदेशी के युग में विदेशी कपड़ों का द्वार बन्द कर देने का अच्छा अवसर था, पर किसी ने ध्यान न दिया। जब वह अवसर निकल गया तो लोगों ने यही रोना रोया कि अगर उस समय थोड़ा त्याग कर दिया गया होता तो आज बड़ा लाभ होता। इस खोए अवसर के लिये रोने में इस तरह व्यस्त हो गए कि सामने जो थोड़ा अवसर स्वदेशी के उत्थान का था उसे भी भूल गए। ठीक यही रोना १९२१ के आन्दोलन के सम्बन्ध में भी है। जहाँ देखिए यही रोना है कि अगर १९२१ में महात्माजी की बात मान कर उनके कार्यक्रम को अपनाया गया होता तो आज हम लोगों के इतिहास का दूसरा रूप हो गया होता।

संसार आज वैज्ञानिक उन्नति की ओर जिस प्रकार बढ़ा जा रहा है, उसे देखकर यही कहा जा सकता है कि वर्तमान युग अवसरों का ही युग है। अगर इतने पर भी कोई कहे कि अभी हमारे लिये अवसर नहीं आया है तो हताश होकर यही कहना पड़ेगा कि इस जीवन में उसके लिये कभी भी अवसर नहीं उपस्थित होगा।

हमारे सामने नित्य जो नये-नये छोटे-छोटे कर्तव्य उपस्थित होते हैं, वे क्या हैं? एक-एक बड़े-बड़े अवसर हैं। पर हम लोग उनकी उपेक्षा करते हैं और प्यासे मृग की भाँति केवल हताश होने के लिये मरीचिका की ओर बड़ी-बड़ी आशाओं को लेकर दौड़ जाते हैं। पर जो लोग उन्हीं को बड़ा समझकर उनमें लगे रह जाते हैं और रह गए हैं उन्होंने नाम, यश और धन कमाया है। जिसे तुच्छ या वाहियात समझकर हम लोगों ने फेंक दिया उसी में उन्होंने अपना भाग्य पिरोया है।

हम तो बार बार इसी बात पर जोर देते हैं कि अवसर का आना या न आना सब हमारे ही ऊपर निर्भर है। अवसर उपस्थित होनेपर उसे समझने और काम में लाने की शक्ति भी हममें ही है। उसी एक अवस्था से हमें विविध तरह की लीलाएँ करनी पड़ती हैं और अपने उद्योग के अनुसार फलाफल को भुगतना पड़ता है। फूल एक ही है उसका गुण भी सदा एक-सा रहता है पर शहद की मक्खी तो उसमें से शहद पाती है और मकड़ी को विष मिलता है ठीक यही बात मनुष्य के साथ भी है। एक ही समय और एक ही स्थान में जहाँ एक मनुष्य को आशा का शुभ प्रकाश दिखाई देता है, वहीं दूसरे को निराशा के काले बादल दिखलाई देते हैं। यहाँ भी उसी १९२१ के युग का उदाहरण पूर्णतया लागू है। एक तरफ तो महात्माजी तथा उनके अनुयायी थे जो भारत के लिये सबसे उत्तम अवसर उपस्थित हुआ देखते थे, पर दूसरी तरफ नरम दलवाले थे जिन्हें यह समय भारत के राजनैतिक इतिहास में महा भयानक दिखलाई देता था।

अगर हम इस जीवन में सफलता चाहते हैं तो हमें साधारण से साधारण अवसर से काम लेना होगा और बड़े की प्रतिक्षा नहीं करनी होगी। अगर हमने इन छोटे-छोटे अवसरों को

अपना लिया और तत्परता से इन्हें काम में लाने का यत्न किया तो बड़े बड़े अवसर आप-से-आप ही हमारे पास आकर उपस्थित हो जायेंगे। संसार के इतिहास में आज तक यही हुआ है। एडीशन को पहले-ही-पहले ग्रामोफोन बनाने की तरकीब नहीं सूझी थी। न्यूटन को गुरुत्वाकर्षण का नियम यों ही सहज में नहीं मालूम हो गया था। बरबंक ने वनस्पति-संसार में जो हल-चल मचा दी है उसकी पूर्ण-योजना का ज्ञान उन्हें एक बारगी या एक दिन में ही नहीं हुआ था।

एडिसन अखबार ढोने का काम करता था। गाड़ियों पर अखबारों का बंडल चढ़ाता, एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता और वहाँ उतारता। आपस में बोरों की रगड़ से जो आवाज पैदा होती थी, वही उसके इस बड़े आविष्कार का कारण हुई। क्या इसके पहले किसी ने दो ऐसी वस्तुओं को आपस में रगड़ खाते नहीं देखा होगा? सैकड़ों बार देखा होगा, पर किन्होंने इसकी परवा नहीं की थी। अति तुच्छ बात समझकर यों ही छोड़ दिया था। पर एडिसन ने इस तुच्छ अवसर को अपनाया और उससे काम लिया। आज एडिसन ने उसी तुच्छ अवसर का उपयोग कर क्या कर डाला है!

ठीक यही बात न्यूटन के साथ थी। अनन्तकाल से लोग देखते चले आ रहे थे कि पेड़ के पत्ते पीले होकर गिरते हैं तो सीधे जमीन में आकर ठहरते है। ढेला ऊपर की तरफ भी फेंका जाय तो जमीन में ही आकर ठहरता है। इसे लोगों ने साधारण बात समझ रखा था और कभी इस पर ध्यान नहीं दिया था। पर न्यूटन ने जिस दिन इस घटना को देखा, उसी दिन इसमें उन्हें कुछ नवीनता दिखलाई दी। उन्होंने यह नहीं समझा कि यह अतिसाधारण बात है। इसमें कौन दिमाग खपाए। वे उसी में

लग गए और इतना भारी आविष्कार कर डाला। आज गुरुत्वाकर्षण के नियम पर संसार नाज करता है।

बरबंक मसाचुसटे नगर के किसी बाग में टहल रहा था। उसने देखा कि एक ही फूल पौधा दो भिन्न-भिन्न स्थानों में उगने के कारण दो भिन्न-भिन्न प्रकार के फूलों से लदा है। यह एक साधारण बात थी। हम लोगों में से प्रत्येक इस बात को प्रतिदिन देखता है। पर बरबंक को इसमें एक बड़े भारी सिद्धान्त का सूत्र दिखाई पड़ा। दोनों पौधों के नीचे की मिट्टी लेकर बरबंक ने रासायनिक क्रिया द्वारा उसकी जाँच की और उसी के आधार पर वह काम करने बैठ गया। आज वनस्पति वर्ग में उन्होंने जो परिवर्तन कर दिखाया है उसका कोई अनुमान भी नहीं कर सकता था।

इस तरह उदाहरण पर उदाहरण देकर यह दिखलाया जा सकता है कि संसार में जिन लोगों ने ख्याति पाई और बड़ा-बड़ा कामकर दिखलाया है उन्हें कोई बड़ा भारी सुअवसर नहीं मिल गया था। उन्हीं साधारण अवसरों को लेकर ही उन्होंने अपना कार्य आरम्भ किया था। हाँ, उनमें एक गुण अवश्य था। जिन अवस्थाओं से उन्हें लाभ उठाना था उन पर किसी ने ध्यान तक नहीं दिया था। जो तत्परता उन्होंने दिखलाई, किसी अन्य ने नहीं दिखलाई थी। यही उनकी असफलता का रहस्य था। यदि अनुसंधान कर देखा जाय तो मालूम होगा कि कहीं-कहीं तो सबसे बड़ा काम बड़ी ही साधारण अवस्था में हुआ है।

अगर हम सदा सतर्क हैं, एक भी अवसर हाथ से जाने नहीं देते, हर एक छोटे-बड़े अवसर से लाभ उठाना चाहते हैं और जहाँ तक संभव है उनसे लाभ उठाते हैं तो हमारे लिये अवसर की कमी नहीं है और न उसकी प्रतीक्षा है। ईश्वर का नियम है कि जो एक से लाभ उठाता है उसी को दूसरा दिया

जाता है इसलिये जो अवसरों को पकड़ना जानता है, पकड़कर उनसे लाभ उठाता है, अवसर के द्वार उसके लिये सदा खुले रहते है।

कोई एक दिन में चतुर व्यापारी नहीं हो जाता। दूकान पर बैठते-बैठते ही निपुणता आती है। दूकान पर बैठकर प्रतिदिन खरीद-फरोख्त करना बड़ा व्यापारी बनने के लिये छोटा अवसर है। अगर हम बड़े व्यापारी बनना चाहते है तो हमे इन छोटे अवसरों का पूर्णतया उपयोग करना होगा। इनकी उपेक्षा हमें उस दर्जे तक कभी नहीं पहुँचा सकती। इसी तरह हम एक दिन में बड़े वकील, डाक्टर या मौलवी नही बन सकते। आरंभ में ही हमारे पास बड़े-बड़े मुवक्किल या रोगी नहीं आ सकते। हमें छोटे-मोटे से आरंभ करना होगा। अगर बड़ों की प्रतीक्षा में हम इन छोटों की उपेक्षा करते है तो हम इन छोटों से भी हाथ धोते है और बड़े तो आते ही नहीं। हम एक दिन में ही बड़े भारी नेता (लीडर) नहीं बन सकते। हमें छोटे-छोटे कामों को लेकर थोड़ा त्याग कर आगे बढ़ना होगा। इस तरह एक दिन वह आएगा जब हम बड़े-से बड़ा काम करते भी न घबराएँगे, बड़े-से-बड़ा त्याग भी आसानी से कर सकेंगे। महात्मा गाँधी एक दिन मे ही 'महात्मा' पद को नही प्राप्त हुए। लोकमान्य की प्रतिष्ठा एक दिन में नहीं हुई थी।

किसी बड़े कारखाने में जाकर काम कीजिये। कारखानेवाला आपको एकबारगी ही बड़ा मैनेजर नहीं बना देगा। छोटा-छोटा काम आपके जिम्मे देगा और देखेगा कि आप कितनी तत्परता और ईमानदारी से उसे पूरा करते है। यह एक छोटा अवसर है, पर आपका भविष्य जीवन इसी पर निर्भर है। अगर आपके दिल में यह बात समाई कि यह साधारण काम है इसमें हम अपनी योग्यता क्या दिखलाएं। यह सोचकर अगर आपने उस छोटे

काम की उपेक्षा की तो आप वहीं रह जायँगे। प्रत्युत यदि आपने उस साधारण अवसर से लाभ उठाया और पूर्ण योग्यता के साथ उस काम का निष्पादन किया तो मालिक धीरे-धीरे आपकी जिम्मेदारी बढ़ाता जायगा और एक दिन आपको सबसे बड़े और उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर नियुक्त करेगा। इस तरह साधारण से साधारण अवसर लेकर अपनी योग्यता का परिचय दो, इससे तुम्हारी शक्ति बढ़ेगी और तुम्हारी वृद्धि होगी।

हमारे जीवन का सबसे भारी अवसर उसी दिन उपस्थित होगा जिस दिन हम अपनी योग्यता की चरम सीमा तक पहुँचने का साधन प्राप्त कर सके। पर इस तरह का अवसर कभी भी आप-से-आप नहीं उपस्थित होता। अवसर को अपनी योग्यता के उपयुक्त बनाना होता है। हम इन अवसरों को उपस्थित करने में जितनी योग्यता, तत्परता, कार्यक्षमता और अध्यवसाय का परिचय देंगे उतनी ही उपयोगिता उनमें होगी।

जहाँ तक मनुष्य की दृष्टि जा सकती है वहाँ तक तो एक भी मनुष्य ऐसा देखने में नहीं आया है कि समय या सुअवसर की प्रतीक्षा कर वह कोई बड़ा काम कर सका हो। एक बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए कि इस संसार में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो आप से आप चल सकती हो। जिस वस्तु में जितनी ताकत है उससे अधिक बल का प्रयोग करके ही हम उसे चला सकते हैं।

आजकल ऐसे अनेक नवयुवक मिलेंगे जो अपने भाग्य के नाम रोते हैं। वे यही कहते सुनाई देते हैं कि दैव ने हमारे हाथ-पैर इस तरह क्यों बाँध रखे हैं। हमें इस परिस्थिति में क्यों पैदा किया कि हम हर तरह से लाचार हैं। कितनी संकीर्ण अवस्था में हमें काम करना पड़ता है। हम हर तरह से लाचार हैं। न तो हमें अनुकूल अवसर मिलता है और न मन-माफिक

विस्तीर्ण कार्यक्षेत्र इस दशा में हम कोई भी बडा काम नहीं कर सकते . अगर हमें काम करने के लिए उपयुक्त अवसर मिल जाय, काफी विस्तीर्ण क्षेत्र मिल जाय तो निश्चय ही हम बड़ा काम कर सकते है।

निश्चय जानिए कि ऐसे लोग अपने जीवन में कुछ नहीं कर सकते। चाहे उन्हें कैसा भी उत्तम अवसर क्यों न मिल जाय, उनके मार्ग में कितनी भी सुविधाएँ क्यों न कर दी जायँ वे कुछ भी नही कर सकते। यह निरी कपोल-कल्पना नहीं है। हमने अनेक ऐसे नवयुवकों को देखा है, उनकी जीवन की घटनाओं का मनन किया है और अनुकूल परिस्थिति में रखकर उन्हे देखा गया है कि वे कुछ नही कर सके।

प्रकृति का भी यही नियम है कि अगर हम उन्नति करना चाहते हें तो हमें सामने जो साधन दिखलाई दे उसी को लेकर आगे बढ़ना चाहिए, न कि इस प्रतीक्षा में बैठे रहना चाहिए कि अच्छा अवसर जब आए तभी काम करें।

सुअवसर की प्रतीक्षा हृदय की आकांक्षाओं को मार डालती है और स्फूर्ति को दबा देती है। हमने ऐसे अनेक मनुष्यों को देखा है जो काम करने के लिए बड़े ही उत्सुक और तत्पर थे पर प्रतिदिन यही कहते थे कि अच्छा अवसर आने पर ही कार्यारंभ किया जाय। इसी तरह प्रतीक्षा करते करते उनका समय नष्ट होता गया। साथ ही साथ उनकी शक्ति का ह्रास होता गया और उनका उत्साह घटता गया। एक दिन वे सर्वथा बेकार हो गए। मसल मशहूर है—"जब तक बेवकूफ अपने को तैयार करेगा तब तक अवसर उससे कहीं दूर निकल जायगा।"

यह बात सर्वसिद्ध है कि इस जीवन-संग्राम में जिसे सफल होना है—जो आज तक सफल हो सके हैं—उन्होंने अपने लिये उपयुक्त अवसर स्वयं तैयार किया है। वे सुअवसर की प्रतीक्षा

में हाथ पर हाथ रखकर कभी बैठे नहीं रहे। अपने उपयुक्त अवसर बनाने के लिए उन्होंने आकाश-पाताल एक कर डाला।

नवयुवकों ने महत्वाकांक्षाओं को लेकर ही इस संसार में जन्म लिया है। जो सफलता की चरम सीमा पर पहुँचना चाहते है, पर जो दूसरो को आगे बढ़ते देखकर अपने भाग्य के लिये रोते है और कुसमय की निंदा करते हैं, उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि उनका भाग्य उनकी मुट्ठी में है, अपने उत्थान और पतन के ही विधाता हैं, जिस शक्ति की बदौलत और लोग ऊपर उठ सके है, वही संचालिनी शक्ति सुसुप्तावस्था में उनके भीतर वर्तमान है। यदि वे उठना चाहते हैं तो उन्हें उस शक्ति को बुलाकर उससे काम लेना चाहिए और यदि वे उसके आप से आप जागरित होने की प्रतीक्षा करते है तो उनके लिए कोई अवसर नहीं है। वे जहाँ है वहीं पड़े रहेंगे।

महाकवि कारलाइल ने लिखा है—"हमने एक मनुष्य की आँखों और चेहरे मे वह ज्योति देखी जो उसे सदा ऊपर उठने में सहायता दे रही थी।" इस तरह की ज्योति प्रत्येक मनुष्य मे है। केवल उसके प्रयोग की उसमें योग्यता होनी चाहिए।

प्रकृति की शक्ति सबसे प्रबल है। यद्यपि हम उसे देखते नहीं तथापि संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो उसकी तुलना कर सके। अमेरिका के वैज्ञानिकों ने अनुसंधान करके निकाला है कि वर्तमान युग में अमेरिका में जितने कल कारखाने चलते हैं और उनके चलाने के लिए जितनी ताकत की आवश्यकता पड़ती है, वह सब चंद एकड़ भूमि में मौजूद है। पर यदि हम इस आशा से खेतों में जाकर खड़े होते हैं तो पक्षियों के कलरव के अतिरिक्त कुछ नहीं सुनाई अथवा दिखाई देता। सामने नदी बह रही है और हवा पेड़ों से टकरा रही है। इसके अतिरिक्त समस्त प्रकृति शांत है कही कुछ सुनाई नहीं देता। पर हम

एक बात अवश्य अनुभव करते है कि यहाँ छिपी हुई कोई अति बलिष्ठ शक्ति काम कर रही है, जिसकी ताकत का अनुमान कर बड़े-बड़े दार्शनिक अपनी संकीर्ण विद्वता पर पछताते है।

कहीं मैदान में जाकर खड़े हो जाइए। सूर्य के बदलते हुए रंग को गौर से देखिए। क्या यह साधारण शक्ति का काम है। बाग-बगीचों में जाकर देखिए फूलों और पौधों का पालन-पोषण, विविध रंगों का उनमें फूल उपजना क्या साधारण शक्ति का काम है। वह शक्ति कितनी प्रबल और प्रौढ़ है, जो भिन्न-भिन्न रंगों को एक में लाकर इस तरह मिला देती है कि कहीं से भी उसका सौंदर्य घटने नहीं पाता। आह! यदि एक बार भी हम उस महान् शक्ति को पकड़ पाते और उसका प्रयोग कर पाते। इनको काम करते न कोई देखता है और न कोई सुनता है, पर वे चुपचाप कितना बड़ा काम कर रही है, यदि इनके मार्ग में एकबार हिमालय भी आ जाय तो वे उसे पीसकर चूर-चूर कर सकती हैं। समुद्र को भी सुखा दे सकती हैं।

इसी तरह की शक्ति हम सब में विद्यमान् है, पर वह सुषुप्तावस्था में पड़ी है। हम इस शक्ति को जगाने के लिए जितनी तत्परता दिखावेंगे जीवन में हम उतने ही सफल हो सकेंगे, ईश्वर को हम उतना ही अधिक अवसर देंगे कि वह हमारा प्रयोग कर सके।

४

साधारण गुण की विजय

एक दिन रस्किन अपने एक मित्र के साथ लंदन की गलियों से होकर जा रहे थे। रास्ता गंदा था, कीचड़ से भरा था। रस्किन का साथी रह-रहकर नाक-भौं सिकोड़ता था और कहता था कि इस गन्दगी में चलने में कितना कष्ट हो रहा है। रस्किन उसकी बातें सुनते रहे। हँसकर बोले—"भाई, यदि तुम विचार कर देखो तो हम हीरा-पन्ना और जवाहिरों पर होकर चल रहे हैं।" रस्किन की बात से उस व्यक्ति को विस्मय हुआ और वह रस्किन का मुँह देखने लगा। रस्किन कहने लगे—"तुम्हीं बतलाओ कि यह काली मिट्टी क्या है? क्या यह उसी खान से नहीं निकलती जिसमें से हीरा निकलता है? क्या दोनों एक ही जाति के नहीं है? क्या इस गर्द का भी जवाहिरों के साथ उसी तरह का संबंध नहीं है? इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस संसार में गंदी या नाचीज कहलाने लायक कोई वस्तु नहीं है। जिसे हम लोग नाचीज समझते है, वह बहुधा सबसे बढ़कर उपयोगी निकल आती है, केवल उसे अपनाने और उसे लेकर आगे बढ़ने का हौसला चाहिए।"

क्या रस्किन का कहना सर्वथा सत्य नहीं था। क्या उसी तरह का संबंध इस हमारी सांसारिक आत्मा और उस परमपिता परमेश्वर से नहीं है? अगर हम लोग थोड़ी देर के लिए भी इसपर विचार करें और इसे स्वीकार करें तो हमारा जीवन कितना उच्च और आनन्दमय हो जाता है। उस समय क्या हमारी अवस्था यही रह जायगी? जो हतोत्साह होकर पीछे रह

गए हैं, उन्हें इससे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा, जो हताश हो गए हैं, उन्हें साहस मिलेगा और मानव-समाज में ऐसी-ऐसी आशाओं का संचार होगा कि साधारण से साधारण व्यक्ति भी कोई न कोई असाधारण काम करने के लिए तत्पर हो जायगा।

वैज्ञानिकों का मत है कि प्रकृति के रहस्य का हम लोग जो आज तक उद्घाटन नहीं कर सके, इसका एक प्रधान कारण यह है कि हम लोगों की विचार-शैली जटिल है, हम लोग प्रकृति के भेद का पता लगाने में सदा असाधारण और असंभावित बातों की कल्पना करते हैं और प्रकृति की गुप्त बातें इतनी सरल और साधारण हैं कि हम उन्हें देखकर भी चुप रह जाते हैं, उनकी परवा नहीं करते।

इस जीवन में एक सीमा तक सुख और आनन्द प्रत्येक व्यक्ति के लिये समान बना दिया गया है। पर कितने लोग ऐसे मिलेंगे, जिन्हें उतना भी सुख नसीब नहीं होता, क्योंकि लोगों ने कल्पना कर ली है कि सुख और सफलता की प्राप्ति का मार्ग अति दुस्तर है। यह मान लिया गया है कि इस संसार में जिसे सुख भोगना बदा रहता है, उसे ईश्वर समृद्ध अवस्था, असाधारण परिस्थिति में उत्पन्न करता है। जिससे वह बिना प्रयास सुख और आनन्द की चरम सीमा तक पहुँच जाता है।

ऐसे लोग बहुत कम मिलेंगे जो इस बात को स्वीकार करेंगे कि सफलता का द्वार सबके लिए बराबर खुला है। उसमें प्रवेश करने के लिए किसी असाधारण योग्यता की आवश्यकता नहीं है। केवल समृद्ध धनी या शक्तिमान लोग ही उसमें प्रवेश पाने के अधिकारी नहीं हैं। बल्कि उसमें वे ही लोग प्रवेश पा सकते हैं जो ईमानदारी से, नेकनीयती से, तत्परता के साथ अपने कर्तव्य का पालन करते हैं और आदमी का जीवन व्यतीत करते

है। यदि हम जीवन मे सफलता प्राप्त करना चाहते है, सच्चे विजयी की भाँति रहना चाहते हैं तो हमें अपने साधारण गुणों को व्यक्त करना होगा, जो कुछ काम करें नेकनीयती और ईमानदारी से करें, हृदय साफ और स्वच्छ रखें, मित्रो के साथ सद्-व्यवहार और परिजनों के साथ दया का वर्ताव करें, जिस उच्च आदर्श को सामने रखकर आगे बढ़े हैं उसमें पूर्ण तत्परता और सौजन्य दिखलाएँ।

कुछ लोगों का ख्याल है कि हम तभी सफल कहे जा सकते है जब हम इस जीवन में कुछ असाधारण काम कर दिखाएँ, हम किसी असाधरण योग्यता का परिचय दे, बिना इन दोनों बातों के हम सफल नहीं कहे जा सकते। हम किसी सफल आदमी को देखते हैं अथवा उसकी सफलता का वृत्तान्त सुनते हैं तो हम उसकी सफलता के कारणों को जानने की चेष्टा करने के पहले यह मान लेते हैं कि उसमे कुछ असाधारण योग्यता रही होगी, उसने कुछ ऐसा काम किया होगा जो सर्व साधारण नही कर सकते थे। यदि कोई आकर हमसे कहे कि तुम्हारी कल्पना निर्मूल है, उसमें कोई भी ऐसी असाधारण योग्यता नहीं थी जिसकी तुमने कल्पना की है, ईश्वर ने जो गुण तुममें दिए हैं जो योग्यता तुम्हें दी है वही उसमे भी है तो हम कभी भी उसकी बात को मानने के लिये तैयार नहीं होंगे।

मुझे अपने जीवन की घटना स्मरण है। जिस स्कूल में मै पढ़ता था उसके हेडमास्टर साहब बड़े ही उदार, दयालु और शुभ-चिन्तक थे। वे छात्रों को ऊपर उठने के लिये सदा उत्साहित किया करते थे। एक दिन हम लोगों को वे विलायत जाकर शिक्षा प्राप्त करने की प्रेरणा कर रहे थे। एक छात्र बोल उठा—'पंडितजी' आप किससे क्या कह रहे है? हम लोगों में योग्यता होती तो क्या यों ही बैठे-बैठे हम लोग मक्खी मारते। व्यर्थ ऊंची

ऊँची आशाओं का सब्जबाग दिखलाकर हम लोगों का दिमाग खराब कर रहे हैं। इंट्रेंस पास कर क्लर्की पा जाय यही बहुत है। आप हेडमास्टर हो गये तो आप समझते हैं कि सबमें आप की ही तरह योग्यता होगी।" उसकी बात सुनकर पंडितजी हँस पड़े और अनेक तरह की बातों से उसका भ्रम दूर करने का यत्न करने लगे।

उस समय मेरी भी यही धारणा थी। मैं भी यही समझता था कि "होनहार बिरवान के होत चीकने पात।" पर अनुसंधान कर देखने से यही मालूम होता है कि संसार में जिन्होंने बड़े से बड़ा काम कर दिखाया है जिसके कारनामों पर मानव-समाज आज इतरा रहा है उनमें होनहार के कोई भी लक्षण पहले ही गोचर नहीं हुए थे। जार्ज स्टेवेंसन को ही ले लीजिए। उसकी आरम्भिक जीवनी पढ़कर उसे कोई भी होनहार नहीं कह सकता। लिखने-पढ़ने में उसकी प्रवृत्ति नहीं थी। पर वह अपनी अमर कीर्त्ति छोड़ गया है। न्यू कासिल का पुल उस साधारण व्यक्ति के असाधारण कारनामे का नमूना है। लार्ड क्लाइव के नाम से भारतवर्ष का बच्चा-बच्चा परिचित है। आज भी कलकत्ते का क्लाइव-स्ट्रीट उसकी विजय का डंका पीट रहा है। क्लाइव क्या था? अवारा और घर का निकलुआ, पर उसी साधारण और नाचीज क्लाइव के असाधारण कारनामे का नमूना यह विस्तृत ब्रिटिश साम्राज्य है। एक साधारण क्लर्क से वह लार्ड बना और इस देश में उसने ब्रिटिश साम्राज्य की दृढ़ नींव डाली। एक उदाहरण श्रीयुत सी० वाई० चिंतामणि का है। इनकी जीवनी पढ़ कर इन्हें कोई भी होनहार नहीं कह सकता। किसी समय काशी के किसी रईस के यहाँ आप प्राइवेट ट्यूटर थे, अर्थात् घर पर उनके लड़के को पढ़ाते थे। वे ही चिन्तामणि आज वास्तव में मणि-तुल्य हो रहे हैं। सर तेजबहादुरसप्रू के पिता ने तीन बार उन्हें

डिप्टी कलेक्टरी दिलाने का यत्न किया और तीनों बार वे असफल रहे। आज उन्हीं सर सप्रू को कितने डिप्टी और कलक्टर सलाम कर अपने को धन्य मानते है। अलीपुर बम के अभियोग के पहले कौन जानता था कि देशबंधु दास एक दिन इस ऊंचे दर्जे को पहुँचेंगे।

इस तरह के सैकड़ों उदाहरण दिए जा सकते हैं और उनसे दिखलाया जा सकता है कि जिन्हें हम साधारण समझते थे उन्होंने वह कर दिखाया है, जिसकी कोई समता नहीं हो सकती।

अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले हार्वर्ड विश्वविद्यालय के अध्यापक विलियम जेम्स ने एक लेख में लिखा था—"जिस तरह शमीके गर्भ में आग रहती है उसी तरह हमारे अंदर अतुलनीय शक्ति छिपी पड़ी है। हमारा कर्तव्य है कि हम उस शक्ति को प्रगट करें, उसका प्रयोग करें। भ्रम में पड़कर अपने को अयोग्य और हीन समझकर कायरों की भाँति बैठ न जायँ।" जिस समय यह लेख प्रकाशित हुआ, चारों ओर इसकी चर्चा होने लगी। लोग बड़ी उत्सुकता से इसे पढ़ते थे। न जाने कितनी भाषाओं में इसके अनुवाद हुए, मानो साधारण लोगों के लिए इसमें विचित्र सन्देश था। जो लोग कुछ करना चाहते हैं, जो लोग अपने जीवन को वास्तव में सार्थक बनाना चाहते हैं, उनके लिए यही अवसर है।

हम ऊपर कह आए हैं कि जिन लोगों से संसार का बड़ा उपकार हुआ है, जिन लोगों ने संसार के लाभ के लिए बड़ा-बड़ा काम कर दिखाया है उनमें कोई असाधारण योग्यता नहीं थी, बल्कि उसी सर्वसाधारण योग्यता और निष्पत्ति का उन्होंने पूर्ण उपयोग किया और इतना भारी काम कर दिखाया।

यहीं पर हम एक बात और कह देना चाहते हैं। जिसे हम असाधारण योग्यता या निष्पत्ति समझते हैं, उसमें एक न एक

दोष लगा रहता है कोई साधारण व्यवहारिक ज्ञान शून्य है, तो कोई विचारहीन है, तो किसी में स्फूर्ति ही नहीं है। इस तरह एक न एक दोष दिखलाई ही देंगे या यों कहिए कि जिसे हम असाधारण निष्पत्ति कहते हैं वह एकांगी विकास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, अर्थात् किसी अंग का विकास विशेष रूप से हो गया और कोई अंग अकुल अवस्था में ही पड़ा रह गया।

महाकवि कारलाइल ने असाधारण बुद्धि की परिभाषा यों दी है—"सहिष्णुता की पराकाष्ठा"। हमारी सफलता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा यही है कि हम जरा भी कष्ट सहने के लिये तैयार नहीं। परिश्रम के भय से हम सदा घबराते हैं और जहाँ तक हो सकता है काम से जी चुराते हैं। हम लोग उसी तत्परता और परिश्रम से काम करने के लिये तैयार नहीं हैं जिस तत्परता और परिश्रम के साथ उन लोगों ने काम किया है जिन्हें आप सफल कहते हैं, जिन्होंने अपने काम से संसार को लाभ पहुँचाया है और भावी सन्तति के लिये आदर्श छोड़ दिया है। हम लोग सदा इसी फिक्र में रहते हैं कि अगर कोई हमारा हाथ बँटानेवाला हो जाय तो अच्छा है, हमारे लिए वह काम कर दे और हमें कष्ट न उठाना पड़े तो अच्छा हो। ऐसे व्यक्ति विरले ही देखने में आते हैं जो सफलता की चरम सीमा तक पहुँचने की आकांक्षा रखकर भी कठिन परिश्रम करने के लिये तैयार हैं।

सच बात तो यह है कि एक व्यक्ति जो कुछ कर सका है वही दूसरा भी कर सकता है अगर वह उतने त्याग के लिये तैयार है जितने की आवश्यकता है और जितना एक को करना पड़ा है। नवयुवकों के दिमाग में यही बात बैठानी चाहिए। जो नवयुवक इन बातों से साहस नहीं ग्रहण कर सकता उसके लिए संसार में कोई भी द्वार खुला नहीं है। जिन लोगों ने बड़े-बड़े काम कर

दिखाए हैं वे कोई सिद्ध-महात्मा नहीं थे। हम भी उन्हीं के समान हैं और उनकी तरह काम कर वैसे ही हो सकते हैं।

जिस सिद्धि के लिये हम सदा लालायित रहते हैं वह कोई अमूल्य पदार्थ नहीं है। बड़ी ही साधारण बात है। हमारी साधारण योग्यता, बुद्धि, बल, नेकनीयती तथा परिश्रम का फल है।

जिसे हम इस जीवन में विजयी समझते हैं उसकी विजय के मूल्य का पता लगा कर देखिये। आपको मालूम हो जायगा कि उन्हीं सर्व साधारण गुणों—जो आप में भी विद्यमान् हैं और कम या बेश प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान् रहते हैं—के प्रयोग से ही इतना बड़ा काम कर सके हैं। केवल उन्होंने असाधारण श्रम किया और जो कुछ किया सोच-समझकर और विचारपूर्वक किया।

महात्मा गाँधी इस युग के सबसे बड़े आदमी गिने जा रहे हैं। उन्होंने अपनी आत्मकथा हाल में ही लिखी है। उसे पढ़ जाइए। एक भी बात उसमें ऐसी नहीं मिलती जिसे हम असाधारण कह सकते हैं अथवा जो साधारणतः लोगों में नहीं पाई जाती। जीवन में उन्हें इतनी सफलता उन्हीं साधारण गुणों की बदौलत प्राप्त हुई और वे आज महात्मा के पद पर पहुँच गए हैं। उनकी आत्मकथा में उनके जीवन चरित्र को पढ़कर हमें यह बात प्रत्यक्ष मालूम हो जाती है कि अध्यवसाय और परिश्रम की बदौलत साधारण-से-साधारण आदमी भी बड़े-से-बड़ा बन सकता है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय में रूजवेल्ट साधारण छात्र था। न तो पढ़ने लिखने में ही तेज था और न खेल-कूद में ही। निशानेबाजी में भी वह दक्ष नहीं था। एक तो उसकी आँखें कमजोर थीं, दूसरे उसके हाथ काँपते थे। पर केवल अभ्यास के बल उसने शिकार में भी नाम कमाया। सुधारक की हैसियत से भी उसने समाज का बहुत कुछ उपकार किया, यद्यपि समाज-सुधार के लिये उसके हृदय में वह उत्साह नहीं था जो फिलिप आदि में था।

इसी तरह थियोडर बलवान सैनिक था यद्यपि सैनिक की निष्पत्ति उसमें कभी देखन में नही आई। उसकी योग्यता और उसके कार्यों को देख कर यही कहना पड़ता है कि थियोडर एक ऐसा उदाहरण है जिससे हमें उत्साह ग्रहण करना चाहिए कि हमारी योग्यता कितनी भी साधारण क्यों न हो परिश्रम और अध्यवसाय से हम बहुत कुछ कर सकते है।

एक समय किसी व्यक्ति ने रूजवेल्ट की योग्यता की बड़ी प्रशंसा की। उत्तर में रूजवेल्ट ने कहा—"मैंने अनुसंधान किया तो मुझे मालूम हुआ कि इस जीवन में सफल होने के अथवा बड़ा बनने के दो साधन हैं। एक तो वह काम करना जिसे असाधारण योग्यता के लोग ही कर सकते है। पर इस तरह के एकाध ही मनुष्य हो सकते हैं। इसलिये इस तरह की सफलता की आशा सबको नहीं करनी चाहिए। दूसरा उपाय उस काम को करना है जिसे प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है, पर जिसे वास्तव में कोई नही करता। यह साधारण बड़प्पन है। मुझ में कोई असाधारण गुण नहीं है मैं कोई नई बात नही कहता। ये तो उचित और अनुचित के साधारण सिद्धांत हैं।" रूजवेल्ट लोगों से यही कहते रहे कि मनुष्य में जो साधारण गुण वर्तमान है अगर वह उन्हीं का प्रयोग करे—जैसे समझदारी, ईमानदारी, सचाई, सफाई, स्पष्टवादिता, सम-व्यवहार—तो जीवन में उसे पूरी सफलता अवश्य मिल सकती है। अमरीका में रूजवेल्ट की इन बातों का जितना प्रभाव पड़ा उतना और किसी का नही।

जिस समय लिंकन पहले-पहल न्यूयार्क में व्याख्यान देने जा रहा था वह बड़ी कठिनाई में पड़ गया। उसने अनुमान किया कि उस मजलिस में उत्कट विद्वान् उपस्थित होंगे, जिनका यश चारों ओर छाया हुआ है, उनके सामने हम क्या बोल सकेंगे! इस भाव का प्रधान कारण यह था कि उसने उन उत्कट विद्वानों

को असाधारण व्यक्ति समझ लिया था। पर यहाँ से लौटने पर उसके हृदय के भाव एकदम बदल गए। उसने देखा कि जिन्हें हम आज तक अपने से बहुत ऊँचा समझ रहे थे वे हमारे ही समान हैं और हम उनकी बराबरी आसानी से कर सकते हैं।

बात यह है कि जिन्होंने कुछ ख्याति प्राप्त कर ली है, जो संसार में गण्य-मान्य हो गए हैं उनके बारे में लोगों के—विशेष कर नवयुवकों के—जिन्होंने स्वयं कुछ नहीं किया है, ऐसे असाधारण भाव हो जाते हैं कि उनका अनुमान नहीं किया जा सकता।

लिंकन अमरीका के नवयुवकों का आदर्श रहा है। अमरीका के नवयुवक लिंकन के नाम पर जितना उत्साह और जोश दिखा सकते थे उतना किसी अन्य के नाम पर नहीं। पर लिंकन के जीवन-चरित को पढ़कर देखिए। आपको मालूम हो जायगा कि उसमें बड़े ही साधारण गुणों का समावेश था। पर उसने काफी काम लिया था। जो लोग देवता समझकर उसकी उपासना करते हैं वे अगर अपने को लाख दर्जे अच्छा पाएँगे। साधारण योग्यता को अध्यवसाय से असाधारण कार्यक्षम बनाने का लिंकन सबसे स्थूल उदाहरण है।

हमारे नवयुवक लिंकन का आदर्श जीवन-चरित इसी आशा से प्रेरित होकर पढेंगे कि देखें उनमें कौन-सी असाधारण बात थी, जिसके कारण वे इस तरह सफल हुए। पर उन्हें यह पढ़कर विस्मय होगा कि लिंकन के जीवन में एक भी ऐसी बात नहीं थी जिसे असाधारण कहा जा सके। अगर उनमें कोई असाधारण और प्रशंसा के योग्य बात थी तो उनकी ईमानदारी, सचाई, उदारता, तत्परता, संलग्नता, सदाचारिता, न्यायप्रियता, परिश्रम, अध्यवसाय तथा महत्वाकांक्षाएँ। ये ही उनकी सफलता के साधन थे और ये ऐसी बातें हैं जिन्हें प्रत्येक युवती या युवक कर सकता है।

लिंकन के हृदय में बड़ा होने की आकांक्षा थी। उन्होंने अपने इस मनोरथ को पूरा करने के लिये अपनी सारी शक्ति लगा दी। उन्हें अभीष्ट फल मिला। आज इतिहास में लिंकन का सानी दूसरा वीर नहीं। न तो उन्हें यश की आकांक्षा थी और न वे बड़े-बड़े ओहदों के लिये लालायित थे। उनके हृदय में यही एक उत्कट इच्छा थी कि इस शरीर का जितना अधिक उपयोग हो सके किया जाय। वे समाज के लिये कुछ करना चाहते थे, यही उनके हृदय की आकांक्षा थी।

महात्मा गांधी को ही लीजिए। उन में कौन-सी ऐसी बात है जो इतर व्यक्तियों में नहीं है, वे कौन-सा ऐसा काम करते है जो अन्य लोग नहीं कर सकते। उनकी सफलता और बड़प्पन का कारण यही है कि वे तत्परता के साथ काम करते रहते हैं, हार-पर-हार खाकर भी अपने पथ से नहीं हटते। जिस काम से वे मानव-समाज का सबसे अधिक हित-साधन समझते हैं उसे वे करके ही छोड़ते हैं और दूसरे लोग साधारण हार खाकर ही घबरा जाते है और मुँह मोड़ लेते हैं।

इस तरह के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं और उन उदाहरणों द्वारा यह दिखलाया जा सकता है कि संसार का विरला ही व्यक्ति असाधारण बुद्धि, योग्यता और निष्पत्ति लेकर जन्म लेता है। अधिकांश लोग समान बल, बुद्धि और योग्यतावाले ही होते हैं। जो लोग उसी का समुचित प्रयोग करते हैं वे ऊपर उठ जाते हैं और जो लोग जी चुराकर बैठे रहते हैं वे कुछ नहीं कर पाते।

हम लोगों में बहुत-से ऐसे मिलेंगे जो ईमानदारी और तत्परता से काम करना नहीं चाहते। वे काम से जी चुराते हैं और सदा किसी सरल और सुविधाजनक उपाय की तलाश में

रहते है जिससे कम परिश्रम से ही वे अपना काम पूरा कर लें। हम लोग सदा इसी धुन में रहते हैं कि कोई ऐसी युक्ति निकल आए जिससे हम लोग बिना हाथ-पैर हिलाए ही काम कर ले। हम लोग अपने आदर्श तक तो अवश्य पहुँचना चाहते हैं, पर रास्ता चलने का कष्ट नहीं उठाना चाहते। इतने पर अगर हमें सफलता नहीं मिलती तो हम अपने भाग्य के नाम रोते है और ईश्वर को बदनाम करते है कि उसने हमें नीचे गिरे रहने के लिये ही उत्पन्न किया है। अपने ध्येय तक पहुँचने के लिये जिस बड़े परिश्रम की आवश्यकता है उससे तो हम लोग जी चुराते है और सदा किसी ऐसी छिपी शक्ति के अनुसंधान में रहते हैं जो बिना परिश्रम हमारे सभी काम संपन्न कर दें। इस तरह हम सदा उस योग्यता को प्राप्त करने से जी चुराते हैं जिसकी बदौलत हम लोग अपने ध्येय तक पहुँच सकते थे। जो अवसर हम लोगो के सामने उपस्थित है हम लोग उसका उपयोग करने के लिये तैयार नहीं है। न तो हम लोग आँख से देखते हैं और न साधारण बुद्धि से काम लेते है और न हम कभी यही बात सोचते है कि असाधारण योग्यता की यहाँ आवश्यकता नहीं। यहाँ तो वही विजयश्री को पाएगा जो चोटी का पसीना एड़ी तक बहाने के लिये तैयार रहेगा।

प्रतिदिन सैकड़ों उदाहरण हमारी आँखों के सामने आते है जिनसे हमें यही मालूम होता है कि इस जीवन को सफल बनाने के लिये किसी साधारण गुण की आवश्यकता नहीं है। केवल परिश्रम और अध्यवसाय के बल हम अपनी आकांक्षा की चरम सीमा तक पहुंच सकते हैं। फिर भी हमे यह देखकर विस्मय होता है कि अधिकांश मनुष्यों की यही धारणा है कि जीवन में सफल होने के लिये असाधारण गुण और योग्यता की आवश्यकता है। जैसे—असाधारण भाग्य, असाधारण संपत्ति, बाहर की

असाधारण सहायता अथवा किसी जातीय या संबंधी का छोड़ा हुआ असाधारण वैभव।

डैनियल वेबस्टर बड़ा ही साधारण बालक था। पढ़ने के लिये वह न्यू हैंक शायर के फिलिप्स एक्सटर एकेडमी में भेजा गया। एक दिन यह रोता हुआ घर की ओर लौटा जा रहा था। पूछने पर उसने कहा—"मैं कक्षा में सदा नीचे रहता हूँ, सहपाठी-गण सदा मेरी हँसी उड़ाया करते हैं। मैं पढ़-लिखकर पण्डित नहीं हो सकता, क्योंकि विद्या मुझे नहीं लिखी है। इसलिये मैंने यही तै किया कि पढ़ना-लिखना छोड़ दूँ और घर चला जाऊँ।" उसके मित्रों ने कहा—"एक बार और कोशिश करो। देखो कड़े परिश्रम का क्या परिणाम निकलता है।" इस बार वेबस्टर जी-जान से पढ़ने में लग गया। उसने दृढ़ कर लिया कि या तो हम विद्वान् हो जायँगे या इस जीवन से ही हाथ धो बैठेंगे। इस दृढ़ संकल्प का फल भी उसे मनोहर मिला। थोड़े ही दिनों में वह क्लास में सबसे आगे बढ़ गया और जो लोग उसकी हँसी उड़ाया करते थे उनका सिर नीचा कर दिया।

आज भी अनेक नवयुवक ऐसे हैं जो यही कहा करते हैं कि अगर हमें इस बात का पूरा विश्वास हो जाय कि परिश्रम और अध्यवसाय के बल वेबस्टर, एडिसन अथवा वेनमेकर की भाँति हम विद्वान् और धनी हो सकते हैं तो हम तन-मन से पढ़ने में लग जा सकते हैं। ख्याल कीजिए ये लोग वेबस्टर, एडिसन अथवा वेनमेकर होने के लिये सब कुछ करने को तैयार हैं, पर साथ ही 'अगर' शब्द लगा हुआ है। उन्हें अपनी योग्यता पर विश्वास नहीं है। उनकी यही धारणा है कि इन लोगों में जो असाधारण योग्यता थी जिसकी वजह से ये लोग इतने ऊँचे पहुँच सके, वह हम में नहीं है।

हम लोगोंमें से अधिकांश की मानसिक कल्पना का गठन इस

तरह से हुआ है कि हम लोगों की समझ में बातें ठीक तरह से आती ही नहीं। जहाँ कहीं हम लोग किसी को ऊँचे उठते देखते हैं, हम यही मान लेते हैं कि उसमें कोई असाधारण बात है। पर यह न करके यदि हमारे नवयुवकगण उन लोगों की चिन्ता छोड़ दें और अपने अन्दर छिपी शक्ति के जगाने का यत्न करें तो वे देखेंगे कि उनमें जो शक्ति है वह उन लोगों से अधिक काम कर सकती है जिनकी वे उपासना और अभ्यर्थना करते हैं।

हम जानते हैं कि बड़े-बड़े कारखानो में काम करने वाले साधारण वेतनभोगी क्लर्कों में इतनी योग्यता रहती है कि अगर वे ठीक तरह से उसका प्रयोग करें तो स्वयं वैसे-वैसे कारखानों के अधिपति बन सकते है और इस अधम वृत्ति से छुटकारा पा सकते है, हम कितने ही आदमियों को जानते है जो बुरी अवस्था में जीवन-यापन कर रहे है। उनमें इतनी योग्यता है कि अगर वे चाहें तो उस अवस्था से ऊपर उठ सकते है। पर उनके न उठ सकने के दो ही कारण हैं या तो उन्हें अपनी शक्ति पर आशा और भरोसा नहीं है या वे परिश्रम करने से जी चुराते हैं।

एक ओर तो ये बातें हैं और अगर हम दूसरी ओर आँख उठाकर देखते हैं तो हमें दिखाई देता है कि धन की लिप्सा में संसार मरा जा रहा है। लोग धन बटोरने के लिए प्राण दे रहे हैं।

हम लोग बहुधा देखते हैं कि लोग बड़े-बड़े पेड़ों के दिखौआ खूब सूरत फूलों के पाने के लिये उस पेड़ के आसपास उगे छोटे-छोटे सुन्दर फूलों की परवाह न करके उन्हें कुचल डालते हैं, जो रूप और सौन्दर्य में उन बड़े पेड़ों के फूलों से कहीं बढ़-चढ़कर होते हैं। उसी तरह हम लोगों में कितने ऐसे लोग हैं जो लोग असाधारण और विचित्र साधना के फेर में पड़कर अपने साधा-

रण गुणों को भूल जाते है और उस सुख तथा सफलता से वंचित रहते हैं जो उन्हें सहज में ही प्राप्त हो सकती है।

मुझे एक ऐसे आदमी का पता है जिसे शायद ही कोई जानता हो। न तो किसी ने उसका कभी नाम ही सुना है और न किसी ने उसे देखा है। साधारणतः छोटे-छोटे अखबारों में भी उसकी चर्चा कभी सुनने में नहीं आई। गाँव के लोगों को छोड़कर उसे कोई नहीं जानता था वह रोज मजूरी करके अपने घरवालों का पेट पालता था। पर हम दावे से कह सकते हैं कि उसका जीवन सफल था। उसकी आमदनी परिमित थी, फिर भी वह अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण आराम से करके प्रतिवर्ष कुछ न कुछ बचा लेता था। उसे धन कमाने की उतनी फिक्र नहीं थी जितनी अपने कुटुम्बियों और परिजनों को सुखी तथा सन्तुष्ट रखने की। वह अपनी सन्तति को स्वावलम्बी, परिश्रमी, मितव्ययी और उदार बनाने का सदा यत्न करता था। वह सदा उन्हें इसी बात की शिक्षा दिया करता था कि संसार में सबसे बड़ी पूँजी तुम्हारे ही अन्दर छिपी है, उसी का प्रयोग कर तुम संसार में सबसे बड़े हो सकते हो। वह उन्हें धनी और सम्बृद्ध नहीं बनाना चाहता था, बल्कि वह उन्हें ईमानदार और सादा बनाना चाहता था, ताकि वे निर्भय वीरों की भाँति अपना कर्तव्य पालन करें, न्याय का पल्ला पकड़े रहें और संसार में अपने हिस्से का काम करने से कभी भी मुँह न मोड़ें। वह आदमी कठिन परिश्रमी था और इससे वह सुखी था। काम करके शाम को जब वह घर लौटता था तो पुत्र-कलत्र को लेकर वह अपने छोटे पुस्तकालय में बैठकर अपनी चुनी हुई पुस्तकों में से एक को उठा लेता और पढ़ता। अपनी जाति में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। जो लोग उसे जानते थे उसका बड़ा आदर करते थे, क्योंकि वह जानते थे कि वह आदमी ईमानदार और विश्वसनीय है। सब लोग उसका सम्मान करते

थे, क्योंकि समय पड़ने पर वह सबकी सहायता करने के लिये तैयार रहता था। किसी की निन्दा उसके मुँह से नहीं सुनी गई। वह वीर था, अपनी बात का धनी था। किसी भी व्यक्ति ने उसे ऐसी बात कहते या ऐसा काम करते न सुना और न देखा था जो सर्वसाधारण के कहने या करने लायक न था। इस मनुष्य को सफल नहीं कहा जा सकता तो हम यही कहेंगे कि सफल शब्द का कोई अर्थ नहीं है।

प्रत्येक देश में, प्रत्येक जाति में, प्रत्येक समाज में ऐसे नर-रत्न पाये जाते हैं जिन्होंने अपने साधारण गुणों का प्रकाश इस तरह किया है कि उसे देखकर यह बोध हो जाता है कि सबसे महत्त्व पूर्ण बातें प्राप्त करना कितना सरल है।

वीर प्रवर प्रोफेसर राममूर्ति ने अपने भाषण में एक बार कहा था कि अगर नियत व्यायाम प्रतिदिन नियम से किया जाय तो कोई कारण नहीं कि एक दिन सबमें हमारी समता करने की योग्यता आ जाय। साधारण ब्रह्मचर्य-पालन, नियत व्यायाम की ही बदौलत आज हम इस पदवी को पहुँच सके हैं।

अगर तुम सच्चे हृदय से अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहते हो तो जो कुछ तुम करना चाहते हो सहज में कर सकते हो। कठिनाई केवल इस बात की है कि हम साधारण योग्यता की परवा नहीं करते, उसके प्रयोग की चिन्ता नहीं करते और यही कहने लग जाते हैं कि इस काम को करने के लिये हमें असाधारण परिश्रम और अध्यवसाय की आवश्यकता है, जिसे हम सम्पन्न नहीं कर सकते। इस तरह हम असाधारण सफलताओं से भी हाथ धो बैठते हैं, जिनका योग एक दिन हमारे जीवन को प्रकाशमय बना सकता है। परिणाम यह होता है कि जन्म भर तो हम इस असाधारण के चक्कर में पड़े रहते हैं और अन्त में देखते हैं कि

हमें इस बीच में अनेक अवसर मिले, जब हम अपने जीवन को सार्थक, सफल और समुन्नत बना सकते थे, पर इस झूठी मृगतृष्णा के फेर में पड़कर उससे भी हाथ धोना पड़ा। उस समय पछताते हैं, पर क्या होता है।

इतना लिखकर हमने यही दिखलाने का यत्न किया है कि सफल जीवन के कोई रहस्य नहीं हैं। चुपचाप काम करते रहो, किसी तरह का शोरगुल मत करो, अपनी साधारण योग्यताओं का प्रकृत प्रयोग करो, सफलता आप से आप तुम्हारा हाथ चूमेगी।



५

दृढ़ता

एक देहाती घटना है। एक गाँव में दो पहलवान रहते थे। एक ने दूसरे को एक-एक करके ग्यारह बार पटका। ग्यारहवीं बार परास्त करने के बाद उसने कहा—"अब तो मुझसे कभी लड़ने का साहस नहीं करोगे, क्योंकि तुमने समझ लिया होगा कि मुझे कभी नहीं हरा सकते।" उत्तर में दूसरे ने कहा—"मुझे विश्वास नहीं है कि मैं सदा हारता जाऊँगा, क्योंकि मेरा उत्साह और साहस जरा भी नहीं घटा है।"

यह एक साधारण बात है। पर इसके द्वारा हम यह दिखलाना चाहते हैं कि अगर हम अपना चरित्र पूर्णरूप से गठित करना चाहते हैं तो उचित है कि हम काम उठाएँ उसे अंत तक करते रहें। सफलता का रहस्य इसी में है कि हम जो कुछ करने बैठें उससे कभी न हटें, चाहे हमारे मार्ग में कैसी भी विपत्तियाँ क्यों न पड़ें, निराशा के कैसे ही काले बादल क्यों न दिखाई दें, पग-पग पर असफलता के ही लक्षण क्यों न दीख पड़ें।

कुत्तों में एक 'बुलडाग' होता है। वह सबसे भयंकर होता है, क्योंकि जिस वस्तु को वह पकड़ लेता है फिर उसे छोड़ना नहीं जानता। उसके बच्चों में भी ये ही बातें देखने में आती हैं। अगर हमारे नवयुवक और नवयुवती उस कुत्ते का ही अनुकरण करें और पीछे पैर न रखने का दृढ़ संकल्प कर लें, तो वे क्या नहीं कर सकते।

मन के अनुकूल सुविधा, सुव्यवस्थित स्थिति, प्रभाव, धन, आदि पर हमारी सफलता नहीं निर्भर करती। सफलता का

साधन हमारे अंदर है। हममें जितनी दृढ़ता होगी, तत्परता होगी, विरोध और निराशा को बरदाश्त करने की जितनी शक्ति होगी, उतनी ही अधिक सफलता की हमें आशा करनी चाहिये। प्रत्येक नवयुवक को चाहिये कि इस तरह की दृढ़ता को अपना साधारण धर्म बना ले।

संसार में यदि किसी गुण का सबसे अधिक आदर है तो वह इसी दृढ़ता और तत्परता का। जो आदमी अपनी धुन का पक्का है, अपने इरादे का दृढ़ है, पीछे हटना नहीं जानता, हिचकता नहीं, उत्साह हीन नहीं होता, जहाँ और लोग पीछे हट रहे हैं वह निरंतर आगे कदम बढ़ाता चला जा रहा है, जहाँ जहाँ औरों की मुट्ठी ढीली रही है वहाँ वह उसे और भी कड़ाई से पकड़ रहा है, वही व्यक्ति सफलता की विजय-श्री से विभूषित हो सकता है। ऐसे आदमी की सब जगह पूछ है, जहाँ-कहीं वह जाता है उसका सादर स्वागत किया जाता है, उसे लोग अपनाते हैं।

दृढ़ता ऐसा गुण है जो कभी अकेला नहीं रह सकता। जिसने यह गुण हासिल कर लिया है उसमें और भी योग्यताएं आप-से-आप आ जाती हैं, जो सफलता के अनिवार्य अंग हैं। जिनमें इतने गुण हैं उनमें कुछ कमजोरियाँ, कुछ कमी, कुछ अनुचित बातें भी हो सकती हैं पर उनमें सदा अनुकरणीय गुण वर्तमान रहते हैं। ऐसे लोगों में केवल तत्परता ही नहीं रहती, बल्कि उन्हें अपनी शक्ति पर पूरा भरोसा भी रहता है। हम लोग धन, पूँजी, प्रभाव तथा बाहरी सहायता के इतने कायल हो गए हैं कि हम अपने अंदर छिपी शक्ति को सर्वथा भूल जाते हैं। हम इस बात पर कभी ध्यान नहीं देते कि सफल होने का सबसे बड़ा साधन तत्परता और दृढ़ता है।

महात्मा गाँधी की सफलता का मूलमंत्र क्या है? वही दृढ़ता और तत्परता। जो कुछ काम वे उठाते है उसे फिर छोड़ना नहीं

जानते जब तक कि उसका निपटारा न कर दें। चाहे उन्हें हार-पर-हार खानी पड़े, पर वे उसमें लगे ही रहते हैं। मनुष्य की बुरी-से-बुरी गति क्यों न हो जाय, घोर-से-घोर संकट उसे क्यों न झेलने पड़े, पर यदि वह अपनी धुन का पक्का है, हृदय का कड़ा है, मुट्ठी का मजबूत है तो उसका कुछ नहीं बिगड़ सकता। सब कुछ झेलता हुआ वह उसी तरह पर्वत की भाँति अटल खड़ा रहेगा।

यदि आप किसी मनुष्य की धुन और तत्परता का पता लगाना चाहते हैं तो आप उसके कार्यों की उस समय परीक्षा कीजिए जब वह हर तरह की मुसीबतें झेल चुका है, असफलता के भँवर को पार कर चुका है और उसके अन्य साथी अपना काम छोड़कर अलग हो गए हैं, पर वह ज्यों-का-त्यों अड़ा है। ऐसा आदमी सबकी उपेक्षा करता है उसे इस बात की परवा नहीं रहती कि कौन अड़ा है और कौन हट गया है, वह तो अपनी धुन में लगा रहता है।

इससे एक लाभ और होता है। हमारी मानसिक शक्ति प्रबल हो उठती है और हमारा साहस बढ़ता है। बाधाओं और कठिनाइयों को सामने देखकर अगर हम अपना पैर मोड़ लेते हैं तो हम अपने साहस पर एक धक्का देते हैं और मनोबल को कायर बनाते हैं। चाहे तुम्हें निराशा की काली घटा ही क्यों न दिखाई दे तुम्हें दृढ़ और अटल बने रहना चाहिए। इससे तुम्हारा साहस बढ़ेगा, आत्मविश्वास अटल रहेगा और तुम्हार मार्ग निश्चय ही साफ हो जायगा। अगर तुम अपनी धुन के पक्के हो विघ्नबाधाओं की परवा न करके अपने ध्येय की ओर कदम बढ़ाते चले जा रहे हो, कोई ऐसा भी समय आ सकता है कि तुम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ने पाते। पर इससे तुम्हारी हानि नहीं हो सकती, अगर तुम में अटल खड़े रहने की दृढ़ता है तुम्हारी शक्ति बढ़ेगी।

हमारी सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि हम जल्दी ही धैर्य खो बैठते हैं। ध्येय तक पहुंचने के लिये जो मार्ग तै करना पड़ता है उसे तै करने की हममें क्षमता नहीं रह जाती। हम छलांग मार कर पहुँचना चाहते हैं और अगर इस तरह नहीं पहुँच सकते तो छोड़कर अलग हट जाते हैं।

इस संबंध में हमने कितने ही आदमियों से बातचीत की, उन्होंने अनुभव की बात मुझसे कही—"इतने दिनों के बाद आज हमें खेद हो रहा कि हम अपने काम में लगे न रहे।" बात यह थी कि एक काम उन्होंने देखा कि जितनी जल्दी हम उसे पार कर जाना चाहते हैं उतनी जल्दी नहीं कर सकते। उनका उत्साह घट गया और वे उस काम से हट गए। इसी तरह वे सदा एक को छोड़कर दूसरा काम हाथ में लेते रहे और कुछ भी न कर सके।

ऐसे लोग अपने जीवन में कोई भी काम नहीं कर सकते। वे सदा एक काम छोड़ते और दूसरा थामते रहते हैं। परिणाम यह होता है कि वे जिन्दगी-भर नये-के-नये बने रहते हैं। जिस काम को वे हाथ में लेंगे उसे अधूरा छोड़ देंगे, क्योंकि थोड़ी दूर आगे बढ़े कि कठिनाइयाँ नजर आईं और वे घबराकर पीछे फिरे। उनमें इतनी क्षमता नहीं कि धैर्य के साथ आगे बढ़ें और अपने परिश्रम का मधुर फल चखें। खेत जोतना तो वे भले ही जानते हैं, पर बीज बोकर फल चखने तक नहीं ठहर सकते। जीवन में किसी ओर दृष्टि उठा कर देखिये आपको वही सफल मिलेगा जिसमें धुन है, जो अपने इरादों का पक्का है और दृढ़ता से काम कर सकता है।

वर्तमान समय की सभ्यता का जिसे आप नमूना कहते हैं, जिसके होने से आप इतने आराम से रह सकते हैं, जो आपके पग-पग पर सहायक हो रहे हैं, उनकी उत्पत्ति कैसे हुई है, यदि वे आविष्कारक अपनी धुन के पक्के नहीं होते, यदि अथक परि-

श्रम के साथ वे अपना काम न करते गए होते, यदि अपनी सफलता की पूरी आशा से आशान्वित होकर वे अपने काम में तन मन से लगे न रहते तो क्या आज संसार में टेलीफोन, बेतार-के-तार, सीने की कल, मशीन, हवाई जहाज आदि का नाम भी कोई सुन पाता ! किसी दिन जगदीश चन्द्र बोस की रसायनशाला में चले जाइए और उन्हें काम करते हुए देखिए। तब आपको मालूम हो जायगा कि सफलता और तत्परता में कितना सम्बन्ध है। यदि हमें जीवन को सुखमय बनाना है तो हमें दत्तचित्त होकर अपने काम में लगे रहना होगा।

अभी हाल की बात है, मैंने एक आदमी से पूछा कि क्या आपने अपनी कालेज की पढ़ाई पूरी की है। उसने उदास होकर कहा—"नहीं, यही तो मुझमें भारी कमी रह गई। घर रहने की लालसा इतनी प्रबल हो उठी कि पढ़ने से मेरा उत्साह एक दम घट गया। और मैं कालेज छोड़कर घर बैठ गया। उस उतावलेपन के लिये मुझे सदा खेद रहा। आज तक कुछ-न-कुछ हो गया होता।"

इस नवयुवक में जरा भी सहनशीलता नहीं थी और इसी से इसका सर्वनाश हो गया। हम लोगों में से अधिकांश की यही हालत है। घर की चिन्ता अथवा भविष्य की निराशा का प्रभाव हम पर इतना अधिक पड़ता है कि हमलोग बिना विचारे पढ़ना-लिखना छोड़कर अलग हो जाते हैं और फिर उस ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते। अगर उनमें सहिष्णुता होती और वे कुछ समय तक ठहर गये होते और परिस्थिति को भली भाँति समझ लिया होता तो मुझे पूरी आशा है कि फिर वे कभी भी मुह न मोड़ते।

मुझे अनेक ऐसे उदाहरण याद हैं जिनमें काम करनेवाले ढंग से उस काम को करने की पूरी योग्यता थी, पर उनमें दृढ़ता नहीं

थी और वे जल्दी निराश होकर उस काम से अलग हो गए, और उसके लिये आजीवन पछताते रहे।

क्षणिक निराशा के कारण हतोत्साह होकर किसी काम से मुँह मोड़ लेना महाभयानक है। जिस समय निराशा के काले बादल हमारी आँखों के सामने मँडराने लगते हैं उस समय हमारी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती थी कि यह निर्धारित कर लें कि इस समय हमें क्या करना चाहिए। उस समय दिमाग खस्त हो जाता है, अक्ल गुम हो जाती है, स्थिति का स्पष्ट ज्ञान हमें नहीं रहता, हमारा विवेक दूषित हो जाता है हजारों ऐसे व्यक्ति पेश किये जा सकते हैं जिनको असफलता का केवल यही कारण रहा है। यदि उनमें साहस होता, तत्परता होती, उत्साह होता तो वे संसार के बड़े आदमियों में गिने जाते।

जिन लोगों ने दृढ़ता और तत्परता को अपने जीवन का कानून बना लिया था उन्होंने जो कुछ कर दिखाया है उसकी समता बड़े-बड़े असाधारण बुद्धि वाले भी नहीं कर सके हैं। इसने कितने मूर्खों को विद्वान् बनाया है, निर्धनों को धनी बनाया है, असंभव को संभव कर दिया है।

कोलंबस जहाजी बेड़ा लेकर नये देश का पता लगाने निकला। चलते-चलते महीनों बीत गए, पर कहीं थल मिलता नहीं दिखाई पड़ा। जहाजी घबरा गए, उन्होंने जहाज खेना बन्द कर दिया और कोलंबस से कहा—"यदि अब आपने चूँ भी किया तो हथकड़ी पहनाकर जहाज में डाल देंगे।" पर क्या इससे कोलंबस का उत्साह कम हुआ? वह अपनी धुन में लगा ही रहा। उसने मल्लाहों को अपने पास बुलाया और उन्हें आशा तथा विश्वास से उत्साहित करने का यत्न करने लगा। इस पर एक जहाजी ने कहा—"सरदार! हम आपकी आज्ञा मानने के लिये तैयार हैं, पर जब आशा की क्षीण रेखा भी शेष नहीं रह जायगी तो हम लोग क्या

करेंगे !" "कुछ नहीं, केवल जहाज चलाते जायँ", एक मात्र यही कोलंबस का उत्तर था।

साधारण योग्यता का आदमी भी अनुकूल परिस्थिति में कारबार आसानी से चला सकता है, पर उसके हृदय की जाँच तभी होती है जब निराशा के बादल उमड़ आए हैं, सब कोई अपना अपना प्राण लेकर भाग गए है, यहाँ तक कि आशा भी उससे दूर होना चाहती है, पर वह वहीं चट्टान की भाँति अटल खड़ा रहता है।

अगर तुम में इतनी दृढ़ता है कि तुम उस अवस्था में पहुँच कर भी पग न मोड़ो, जिस अवस्था में अनेक असफल हुए है तो निश्चय जानों कि कोलंबस की तरह विजय-श्री तुम्हें भी मुकुट पहनाने के लिये उत्सुक खड़ी है। जब तक मनुष्य इस अवस्था को नहीं पार कर जाता, हम लोग उसके चरित्रबल के बारे में कुछ नही कह सकते। जहाँ पहुँच कर अनेक ने पीछे कदम हटाया है, वहाँ पहुँचकर भी अगर वह अड़ा रहता है और कठिनाइयों से संग्राम कर आगे बढ़ता है, पीछे हटाना स्वीकार नहीँ करता तो हम दृढ़ता से कह सकते हैं कि वह इस जीवन में कभी भी असफल नहीं हो सकता। उसके चरित्र में इतना बल है कि वह सदा सफल होता रहेगा।

इस तरह यदि इस बात की परीक्षा की जाय कि कौन मनुष्य कहाँ तक आगे बढ़ सका और कहाँ जाकर उसने पीछे कदम हटाया तो हम लोग कई गिरोह बना सकते है। कितने ऐसे मिलेंगे जो इस जीवन-संग्राम में पड़ते ही पछाड़ खा जाते हैं या निराश होकर बैठ जाते हैं, कितने कुछ दूर आगे बढ़कर हार मान लेते है, कितने उस अवस्था तक पहुँच जाते हैं कि अगर वे एक कदम और आगे बढ़ें तो विजय उनकी है, मर वे वहीं बैठ जाते हैं।

ऐसे बहुत कम लोग है जिन्हें इस जीवन मे निराशा या असफलता दिखाई ही नहीं देती। उनके हृदय की बनावट ही भिन्न तत्त्वों से हुई है। जहाँ और असफल हुए वहाँ उन्हें सफलता दिखाई देती है, जहाँ औरों को निराश होना पड़ा वही उन्हें आशा का प्रकाश मिला, जहाँ लोग पराजित हुए वही उन्हे विजय मिली।

बस, एक दृढ़ता ही बतला देती है कि इस मनुष्य का भविष्य कैसा होगा। अगर तुम में दृढ़ता और तत्परता है तो तुम्हारी विजय धरी है, नहीं तो अन्य सभी गुण तुममें क्यों न हों अगर तुममें दृढ़ता नहीं है तो तुम कुछ नहीं कर सकते।

अगर लक्षणों से मालूम हो जाय कि अमुक नवयुवक में धुन है, दृढ़ता है, तत्परता है, तो उसके भविष्य की कभी भी चिंता नहीं करनी चाहिए। दृढ़ता एक ऐसा सजीव गुण है कि मनुष्य में फौलादी शक्ति का संचार हो जाता है और उसका कदम सदा ध्येय की ओर बढ़ता रहता है। चाहे अवस्था अनुकूल हो अथवा प्रतिकूल हो, निराशा के कितने ही भीषण और काले बादल क्यों न उठ रहे हों, बाधाएँ कितनी ही प्रबल होकर मार्ग में क्यों न आ-आकर खड़ी होती हों, साधन कितने ही कमजोर क्यों न हों वह अपना काम निरंतर करता जायगा, केवल मृत्यु ही उसे अलग कर सकती है, वह काम करता-करता ही मरेगा।

जितने काल तक, जितनी दृढ़ता के साथ तुम किसी काम में लगे रह सकते हो उसी हिसाब से तुम्हें सफलता भी मिलेगी। मैं एक आदमी को जानता हूँ। कोई भी नई चीज उसके सामने पेश कीजिए वह तन-मन से उसमें लग जायगा। उसकी तत्परता देखकर कोई भी नहीं कह सकता कि यह विजयी नहीं हो सकता। पर उसमें एक बड़ा भारी दोष है। थोड़े दिन के बाद ही उसका

उत्साह घटने लगता है। वह उस काम को छोड़कर अलग हो जाता है।

एक बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए। जिस काम को हाथ में ले लिया, फिर उसे पूर्ण तत्परता के साथ करते रहना होगा। उस काम को पूरा करने की अपनी क्षमता में हम यदि थोड़ा भी संदेह करते हैं यदि हमें भविष्य की असफलता का जरा भी भय है तो इससे हम अपना असीम नुकसान करते है। हम अपना साहस घटाते हैं, दृढ़ता को कम करते है और धुन में घुन लगा देते है।

औरों की परवा मत करो। वे जो कुछ कहते या करते हों, करने और कहने दो। तुम्हें अपनी धुन का पक्का होना चाहिए। अपने ध्येय को आँखो के सामने रखकर आगे बढ़ो। चाहे स्वर्ग का भी प्रलोभन क्यों न दिया जाय, पर अपने मार्ग से रत्ती-भर भी न हटो। बस, सीधे अपने ध्येय की ओर बढ़ते जाओ, यह मत देखो कि प्रलोभन में कितना सार है। दुर्बल चरित्रवाला पुरुष—जो निंदा से डरता है, जनापवादभीरु है और सदा कातर नेत्रों से लोकमत की अपेक्षा करता है—उसे विजय नहीं मिल सकती। उसके चरित्र में इतना बल नहीं कि वह अपने ध्येय की ओर निरंतर बढ़ सके।

किसी जहाज का कप्तान बंदरगाह से जहाज लेकर रवाना हुआ। कुछ दूर आगे जाने पर उसे भीषण तूफान की संभावना मालूम हुई। अगर डरकर वह जहाज का मुंह फेर दे और जहाँसे चला था वहीं लौट आए तो उसकी क्या दशा होगी। पहले तो वह नौकरी से निकाल दिया जाय और दूसरे उसकी गणना कायरों और अयोग्यों में होने लगे। प्रत्येक जहाज के कप्तान कंपास लेकर बैठ जाते हैं और एक दृष्टि से अपने निर्दिष्ट मार्ग की ओर चलते हैं, चाहे तूफान आए, चाहे पानी बरसे, इन्हें

दूसरा कुछ नहीं सूझता, बस चलते रहना यही उनका उद्देश्य है तुम्हारा जीवन एक नौका है, तुम उसके कप्तान हो, उसे इस भवसागर के पार ले जाना है। अगर तुममें योग्य कप्तान के गुण नहीं हैं तो तुम अपनी जीवन-नौका इस भवसागर के पार नहीं लगा सकते। जीवन की सफलता के ये ही साधन हैं, पूर्ण परिश्रम, सात्त्विक उद्देश्य, अदम्य दृढ़ता और तत्परता।

एक विद्वान ने लिखा है—"संसार के साहित्य में एक भी पुस्तक ऐसी नहीं है जिसे स्थायी साहित्य कह सकें, पर एक भी बिना कड़े परिश्रम के तैयार नहीं की गई है। एक-एक लाइन और एक-एक पृष्ठ लिखने के लिये सप्ताह-भर लग गए हैं। सच्चा लेखक वही है जो जन्म-भर की शिक्षा और अनुभवों का सार एक पुस्तक में भरकर रख देता है। वह उसके जीवन का अमूल्य रत्न होता है।"

इसलिये हमें दृढ़ता और तत्परता से कभी भी मुँह नहीं मोड़ना चाहिए। यह जगत दृढ़वती और तत्पर आदमी के सामने सिर झुका देता है, क्योंकि उसके लिये कोई दूसरा चारा नहीं है। एक बार राणा प्रताप का स्मरण करो। मुगल-सम्राट् अकबर का दुश्मन बनकर उन्हें क्या-क्या नहीं करना पड़ा था। लोगों ने संधि करने के लिये कितना समझाया, पर प्रताप निराश नहीं हुए। अगर एक बार भी वे निराश होकर अकबर के साथ संधि करने के लिये तैयार हो गए होते तो क्या आज संसार में उनकी यह कीर्ति रहती? महात्मा गांधी का स्मरण करो। सत्याग्रह-संग्राम की निराशा-जनक स्थिति देखकर अगर वे हतोत्साह हो गए होते और अपना कदम पीछे हटा लेते तो क्या आज उनकी यही प्रतिष्ठा रहती? नेपोलियन की आल्प्स् यात्रा का विवरण पढ़िए। जाड़े का दिन, कड़ाके की सर्दी, चट्टान की भाँति बरफ जमी थी, पर वह हताश नहीं था। यदि किसी ने उसे रोका भी तो उसने केवल हंस दिया। वाशिंगटन का जीवन-चरित्र पढ़िए। अमरीका की

स्वाधीनता के संग्राम में बेलो फोर्ज में उनके लिये कितनी विकट समस्या थी। जीवन मरण का प्रश्न था। लोगों ने लाख समझाया कि लौट जाइये और युद्ध मत कीजिए। पर उन्होंने क्या कहा था— "अभी या कभी नहीं।" उसी दृढ़ता और तत्परता का फल है कि आज अमरीका स्वतंत्रता का आनंद भोग रहा है।

आजकल के नवयुवक केवल असाधारण योग्यता की ही डींग मारा करते हैं। उनकी यही धारणा है कि इस संसार में जिस किसी ने कोई बड़ा काम किया वह असाधारण योग्यता की बदौलत हुआ है, पर सच बात तो यह है कि उनमें वही सर्वसाधारण योग्यता थी, केवल उन्होंने उसका प्रयोग असाधारण तरीके से किया अर्थात् साधारण परिस्थिति में भी उन्होंने पूर्ण तत्परता और दृढ़ता दिखलाई और यही उनकी सफलता का मूलमंत्र था।

चातुरी और शक्ति-बल

कल-कारखानों को सफलता पूर्वक चलाने में आवश्यकता इस बात की है कि पूँजी तो कम लगे, पर काम अधिक हो और साथ ही साथ कल-पुर्ज़े घिसें कम। मानव-समाज के सामने इस समय यही एक प्रश्न सबसे बड़ा उपस्थित है कि कम से कम पूँजी से अधिक से अधिक लाभ किस तरह उठाया जाय। इतने पर भी कितने ही मनुष्य ऐसे मिलेंगे जो कारबार में लगाई हुई पूँजी के व्यय में तो बड़ी होशियारी से काम लेंगे और गिन-गिनकर पैसे खर्च करेंगे, पर वे ही लोग शरीर में वर्तमान शक्ति-रूपी पूँजी के अपव्यय में जरा भी नहीं हिचकते या सकुचाते।

संसार में ऐसे हजारों आदमी मिलेंगे जिनका जीवन बहुत ही निराशाजनक है और इसका एकमात्र कारण यही है कि वे अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति का प्रयोग इस तरह नहीं करते कि वे अपनी योग्यता के अनुसार सबसे बड़ा या महत्त्वपूर्ण काम कर सकें। हमें ऐसे अनेक नवयुवकों का नाम मालूम है जो इतने दिनों के बाद भी जीवन संग्राम में उसी स्थान पर पड़े हैं जहाँ से उन्होंने आरम्भ किया था। उनका उत्साह न जाने कहाँ गायब हो गया, काम उन्हें नीरस मालूम होने लगा है। इसका एक मात्र कारण यही है कि वे उस काम को रोचक नहीं बना सकते। शारीरिक शक्ति का भी उनमें ह्रास हो गया है, इससे यह जीवन-संग्राम उन्हें सरस न प्रतीत होकर नीरस और रूखा दिखाई देता है। इनमें तो कितने ऐसे भी हैं जो आगे कदम न बढ़ाकर पीछे ही हटने लगे हैं।

स्थान-स्थान पर आपको ये बातें देखने को मिलेंगी। अनेक नवयुवक अपार योग्यता होते हुए भी आलसी की भाँति साधारण कामों में ही अपना दिन काटते हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि उनमें इतनी शक्ति नहीं कि वे मार्ग की कठिनाई को ढकेल कर किनारे करें और आगे बढ़ें।

अगर किसी लेखक की कोई पुस्तक पाठकों को नहीं जँचती तो उसका एक मात्र कारण यही समझना चाहिये कि लेखक में मानसिक शक्ति और उत्साह नहीं रह गया है, जिसे वह उस पुस्तक में भर देता। लिखते समय लेखक ने किसी असाधारण उत्साह का परिचय नहीं दिया था, इसलिये यह पुस्तक भी पाठकों के हृदय में उत्साह का संचार नहीं करती। उन गुणों का उसमें अभाव था, इसलिये अपनी पुस्तक में भी वह उनका समावेश नहीं कर सका और यही कारण है पाठक भी उसके पढ़ने में आनंद नहीं पाते।

अगर धर्माचार्य की धार्मिक शिक्षा का जनता पर प्रभाव नहीं पड़ता तो इसका कारण यही है कि धर्माचार्य में शारीरिक शक्ति का अभाव है। शारीरिक शक्ति की शून्यता से मानसिक शक्ति का भी लोप हो गया है। गुरु का प्रभाव शिष्य पर तभी नहीं पड़ सकता जब गुरु में उत्साह और मानसिक बल का अभाव है। उसके ज्ञानसूत्र ढीले पड़ गए हैं। दिमाग कमजोर हो गया है, शक्ति गायब हो गई है, क्योंकि या तो उसने आवश्यकता से अधिक श्रम किया है अथवा अपने शरीर की परवा नहीं की है।

ऐसे क्षणिकशक्ति और हतोत्साह लोगों को बेदम, बेमन तथा निःशंक होकर काम करते देखकर दया आती है। वे लोग तेजी से आगे बढ़ने के लिये जोर मारते हैं, पर उनका शरीरबल जवाब दे देता है।

कितनों की यह धारणा है कि जिसे बड़ा काम करना है उसे अनवरत परिश्रम करना चाहिये अर्थात् जितना उस काम में लगे रहेंगे उतनी ही अधिक सफलता उन्हें मिलेगी, बनिस्बत इसके कि वे काम करें कम और खेलें अधिक। पर इससे बढ़कर दूसरी भूल नहीं हो सकती। हमारी सफलता हमारे काम करने के ढंग पर निर्भर करती है। अगर आप जोर मार कर मस्तिष्क से अच्छा काम लेने की आशा करते हैं तो आप भूले हुए हैं। मस्तिष्क का कर्म स्वेच्छापूर्ण होना चाहिये। अपनी निजी प्रेरणा के अनुसार ही वह उमदा काम कर सकता है।

हम ऐसे अनेक आदमियों को जानते हैं जो थके हुए दिमाग को जगाने के लिये उत्तेजक पदार्थ का प्रयोग करते हैं—नशा पीते हैं। पर इसका परिणाम सदा विपरीत होता है। मानसिक शक्ति क्षीण और दुर्बल होती जाती है। ताजे उत्साहपूर्ण मस्तिष्क से ही नयी और प्रौढ़ कल्पना का आविर्भाव होगा। ये बातें जोर या दबाव देकर नहीं पैदा की जा सकतीं।

फैक्टरी ऐक्ट के अनुसार जिस समय मजूरों के काम करने का समय ९ घंटे से ८ घंटे कर दिया गया उस समय बहुत-से कार-खानेदार घबराकर कहने लगे कि इसमें हम लोगों का बड़ा नुक-सान होगा, प्रतिदिन प्रति मजूर १० प्रति सैकड़े का नुकसान होगा। पर इसके परिणाम को देखकर यही कहा जा सकता है कि उनकी कल्पना निराधार थी। काम की मात्रा में कमी तो हुई ही नहीं; उलटे एक लाभ और हुआ, कम घंटों तक काम करने से मजूरों में उतनी अधिक थकान नहीं आ जाती, उनमें जोश और बल कायम रहता है, इससे वे अधिक उत्साह से काम करते हैं अर्थात् उनका काम अच्छा होने लगता है। शाम होते-होते उनकी शक्ति का ह्रास नहीं हो जाता, उनमें जोश और बल दोनों मौजूद रहते हैं, इससे वे अधिक उत्साह और आशा के साथ काम करते हैं।

उन्हें यह चिंता नहीं रहती कि किसी तरह समय काटो। आराम के लिये जो एक घंटा और मिल गया उससे दूसरे दिन के लिये वे अधिक बल-संचय कर लेते हैं।

इससे बढ़कर भ्रम उत्पन्न करनेवाली दूसरी बात हो ही नहीं सकती कि प्रतिदिन अधिक-से-अधिक परिश्रम करके शरीर और मस्तिष्क को पूरी तरह से थकाकर ही हम सफलता प्राप्त कर सकते है, न कि कम घंटों तक काम करके, दिमाग पर कम जोर पहुँचाकर और कम थकावट पैदा करके, जिससे हममें उत्साह और जोश ज्यों-का-त्यों बना रहे।

आराम और नींद के अभाव के कारण जो दिमाग थक गया है उससे कुछ भी अच्छा काम नहीं हो सकता। जिस दिमाग को विषैले और अशुद्ध रक्त से पौष्टिक पदार्थ मिलता है वह दिमाग कभी भी समर्थ नहीं रह सकता, चाहे वह नेपोलियन का ही दिमाग क्यों न हो। विषैले रक्त के संसर्ग से मस्तिष्क तथा ज्ञानसूत्र के जीवाणु (Cells) सुस्त पड़ जाते हैं, उनकी धारणा-शक्ति मन्द पड़ जाती है। इससे दिमाग ढीला पड़ जाता है और उत्साह क्षीण हो जाता है, काम की ओर से मन हट जाता है।

कितने आदमी ऐसे हैं जो अपने समस्त शारीरिक और मानसिक बल का प्रयोग कर डालते हैं और जब उन्हें उतने से सन्तोष नहीं होता तो उत्तेजक पदार्थों के योग्य प्रयोग से संचित शक्ति को भी खींचकर काम में लगाते है। परिणाम यह होता है कि उनके दिमाग का जल्द ही दिवाला निकल जाता है। प्रतिदिन कार्य आरम्भ करते समय उसके दिमाग की ठीक वही अवस्था रहती है जो उस घोड़े की जो दिन-भर दौड़ता है, पर पेट-भर भोजन कभी नहीं पाता।

मान लीजिए कि आपने एक घोड़ा पाल लिया। उसको न तो खरहरा कीजिए और न मालिश, उसे एक अँधेरे बन्द अस्तबल

में रख दीजिए, नियत समय पर पेट-भर चारा भी उसे न दीजिए। थोड़े ही दिनों के बाद आप देखेंगे कि उसकी हालत खराब हो गई है। वह पहले से आधा काम कर सकता है और आधे मूल्य का रह गया है। यही हालत इस शरीर की है। अगर आप इसका प्रयोग ठीक उसी घोड़े की तरह करना चाहते हैं तो आप इससे अच्छी आशा नहीं कर सकते।

यदि कोई चाहता है कि मुझमें अध्यात्म की पूरी योग्यता आ जाय तो उसके लिये आवश्यक है कि वह मस्तिष्करूपी पीपे को ज्ञानरूपी जल से सदा भरता रहे। यह बात सब जगह एक-सी लागू है। साधारण जल के पीपे को ले लीजिए। अगर उसमें पानी आने का मार्ग न हो तो उसमें से सदा पानी कहाँ से निकाला जा सकता है। एक-न-एक दिन तो खाली हाथ लौटना ही पड़ेगा। इतना होते हुए भी ऐसे अनेक मनुष्य मिलेंगे जिनकी धारणा है कि ठीक भोजन, शयन और आराम देकर शारीरिक बलकी रक्षा किए बिना ही, सुव्यवस्थित रूपसे रहे बिना ही वे इस शरीर से इतना काम कर लेंगे मानो वे स्वास्थ्य के सभी नियमों का पालन करते आ रहे हैं। वे यह बात भूल जाते है कि व्यापार में, व्यवहारमें व्यवस्थित रहने की अपेक्षा—शरीर की रक्षा में अधिक व्यवस्थित रहने की आवश्यकता है, क्योंकि व्यावसायिक अथवा इस तरह की अन्य सफलता के लिये स्वस्थ शरीर ही सबसे अधिक आवश्यक है।

इधर-उधर दो-चार गिने-गिनाए उदाहरण अवश्य दिखाई देते हैं जहाँ खराब स्वास्थ्यवाले भी सफल हो सके है। पर इतना तो निश्चय है कि साधारणतया प्रत्येक नर और नारी के लिये बिना तन्दुरुस्ती के कोई भी बड़ा काम कर डालना असंभव है।

इसलिए प्रत्येक मनुष्य का यह कर्म होना चाहिए कि वह अपने

शारीरिक और मानसिक बल की सदा रक्षा करता रहे नहीं तो जो संदेश लेकर वह इस संसार में अवतीर्ण हुआ है उसे लोगों तक नहीं पहुँचा सकेगा। मनुष्य इससे बढ़कर दूसरा कोई पाप नही कर सकता कि वह अपने शारीरिक बल का ह्रास कर डाले और जीवन की उपयोगिता को व्यर्थ कर दे तथा परमपिता के उस संदेश का भुगतान न कर सके जिसे लेकर वह यहाँ आया है।

अवसर आपके सामने उपस्थित है, अगर आप ठीक तरह से उसका उपयोग करते हैं तो बहुत बड़ा काम कर सकते हैं। पर आपने पहले ही व्यर्थ और वाहियात कामों में अपनी शक्ति क्षीण कर दी है, तब आप देखते है कि या तो मैं इस सुअवसर से लाभ नही उठा सकता या मै हीन, क्षीण और सुस्ती के साथ इसका प्रयोग कर सकता हूँ। साथ ही न तो आपको अपने पौरुष पर विश्वास है और न सफलता पर। क्या इससे भी विपन्नावस्था किसी मनुष्य के समक्ष उपस्थित हो सकती है।

अगर आप हृदय से यह बात चाहते है कि मैं इस जीवन का सबसे उत्तम प्रयोग कर सकूँ तो आपको उचित है कि आपकी शक्ति पर जो काई जम गई है उसे निकाल फेंकिए। आपके हाथ पैर को जिस शिथिलता ने जकड़ रखा है उसे दूर कीजिए, जिन कारणों से आपके बल का अपव्यय हो रहा है, आपका इन्द्रिय-बल घट रहा है उनका नाश कीजिए। जिस तरह से हो अपनी योग्यता का पूर्ण निष्पादन करने की शक्ति प्राप्त कीजिए। किसी भी अवस्था में यह अभिप्रेत नही है कि आप मृतप्राय शरीर को भार की तरह ढोते फिरिए और बुरी आदतें डालकर अपना बल क्षीण और जीवन की शक्ति का ह्रास कर दीजिए। ऐसा कोई काम न कीजिए जिससे आपके बल का ह्रास हो अथवा आपके उत्थान के मार्ग में बाधा पहुँचे। प्रत्येक काम में हाथ डालने के पहले एक बार यह सोच लीजिए कि इसमे ऐसी क्या बात है जिससे मेरे

जीवन के कार्य में सहायता मिलेगी, यह मेरे पौरुष को बढाएगा और सदा के लिये अपनी उपयोगिता बनाए रखेगा.

अगर हम लोग अन्न-पानी का विचार रखें और सादगी से जीवन यापन करें तथा खुली हवा में कसरत करें तो हमें वैद्य और डाक्टरों की कभी आवश्यकता न पड़े। पर हम लोगों में से अधिकांश व्यक्ति जिस प्रकार जीवन-यापन करते है उसे देखकर यही कहना पड़ता है कि प्रकृति तथा इस शरीर के साथ इससे बढ़कर अन्याय किया ही नही जा सकता।

कितने लोग ऐसे हैं जो बराबर प्रकृति तथा स्वास्थ्य के साधारण नियम की अवज्ञा करते रहते हैं। अपनी पाचन-शक्ति की परवा न कर मनमानी भारी और गरिष्ठ वस्तु पेट में भर लिया करते हैं। उसकी जरा भी परवा नहीं करते कि उनका पेट इसे बरदाश्त कर सकता है या नहीं। कभी-कभी तो पेट की यह अवस्था रहती है कि वह साधारण (सादा) भोजन भी बरदाश्त नही कर सकता। इस तरह गरिष्ठ और देर से पचनेवाली वस्तुओं को पेट मे भरकर वे उसे पचाने के लिये तरह-तरह के पाचक खाकर पाचन-शक्ति को नष्ट कर डालते है। इस तरह अपने हाथों अपना नाश करके वे दूसरों के सामने अपना दुखड़ा रोते हैं कि न जाने क्यों हमारी शक्ति क्षीण होती चली जा रही है। जीभ के स्वाद के वशवर्ती होकर जो भूल करते हैं उसका प्रायश्चित वे उत्तेजक पदार्थों द्वारा करना चाहते हैं। जहाँ ये लोग एक छोर पर हैं वहाँ दूसरे लोग दूसरे छोर पर हैं अर्थात् या तो वे इतने प्रकार के सामान नहीं खाते, जो आवश्यक हैं अथवा वे पेटभर भोजन नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि एक अङ्ग को तो काम से फुरसत नहीं मिलती, परिश्रम करते-करते उनकी नाकों दम हो जाता है और दूसरी ओर कुछ दूसरे अङ्ग हैं जिन्हें कोई काम नहीं है, वे सुस्त बैठे-बैठे मरते जा रहे हैं। शरीर के भीतर ठीक

वही अवस्था उत्पन्न हो जाती है जो अति वृष्टि और अनावृष्टि से उत्पन्न होती है। कहीं तो अतिवृष्टि से नाकों दम है और कहीं अनावृष्टि से लोग त्राहि-त्राहि पुकार रहे रहे हैं। इससे भूख की व्यवस्था भी ठीक नही रहती। कभी रुचि नहीं तो कभी बड़ी भूख की परेशानी। इसे दूर करने के लिये नशे के प्रयोग की कामना उत्पन्न होती है। कभी-कभी तो जो काम ठीक भोजन से हो सकता है उसीके लिये लोग तरह-तरहकी हानिकारक औषधियो का सेवन करना आरम्भ कर देते है।

हम लोगों में अनेक ऐसे मिलेगे जो अपने शरीर के दुश्मन है, अपने हाथों अपना गला काटने के लिये उद्यत रहते है, हम इस शरीर से बहुत कुछ आशा करते हैं, पर हम अपने को कभी भी इस अवस्था मे रखने का यत्न नही करते कि हमारी आशाऐं पूर्ण हो। या तो हम अपने शरीर के पीछे बुरी तरह पड़ जाते हैं या हम उसकी परवा तक नहीं करते। या तो हम उसकी उन्नति रोक देते है या उससे सर्वथा उदासीन हो जाते है; दोनों तरह से हम उसके दुश्मन बन जाते हैं, पर हम यह नही कह सकते कि कौन तरीका ज्यादा हानिकर है। ऐसे बहुत कम मिलेंगे जो इस शरीर की रक्षा का उतना ही ख्याल करते हैं जितना ख्याल वे उस मशीन या संपत्ति का करते है जिससे उन्हें गहरी रकम मिलने की आशा होती है।

पर हमारी समाज में संसार में ऐसी कोई सम्पत्ति नही है जिससे इतना लाभ हो सके जितना लाभ इस शरीर से हो सकता है। हमें उचित है कि हम इस शरीर को ठिकाने में रखें, स्वास्थ्य को बनाये रखे और जहाँ कहीं इसका प्रयोग करना हो पूर्ण सावधानी से करें। स्वास्थ्य बनाए रखने के लिये उचित यही होगा कि हम बहुधा काम बन्द कर घूमने या खेलने चले जाया करें।

इञ्जन को ही ले लीजिये। केवल कोयला और पानी ही

देते रहने से वह पूरा काम नहीं दे सकता। समय समय पर उसे बन्द कर देना होगा ताकि वह पूरी तरह ठंढा हो जाय, नहीं तो गरम होकर फट जायगा। समय-समय पर उसे बन्द कर रखना नितान्त आवश्यक है ताकि उसके पुरजे लगातार रगड़ खाकर खराब न हो जायँ। जब यह हालत निर्जीव पदार्थ की है तो कल्पना कीजिये कि सजीव पदार्थ की क्या अवस्था होगी। अगर उसे आराम करने का समय नहीं दिया जाता और उससे लगातार काम लिया जाता है।

मनुष्य को जीवन की सभी व्यवस्थाओं का पूर्ण अनुभव रखना चाहिये, बिना इसके मानव-जीवन पूर्ण नहीं कहा जा सकता। इसलिये खेल-कूद भी उसके लिये नितान्त आवश्यक है। जो आदमी एक काम में लगा रहता है, जिसे खेलने, कहीं आने-जाने, मित्रों से मिलने और कभी-कभी देहातों में भ्रमण करने का समय नहीं मिलता, जो यह समझता है कि समय अमूल्य है, इसलिये क्षण-क्षण का प्रयोग बड़ी सावधानी से करना चाहिये वह अपने पैरों में अपने हाथ से कुल्हाड़ी मारता है।

बड़े-से-बड़ा काम करने में भी विश्राम के लिये समय होना चाहिये। जो लोग इस जीवन में सबसे बड़ा काम करना चाहते है उन्हें यह समझ लेना चाहिये कि प्रकृति के आराम करने के तरीके क्या क्या हैं। थके हुए मस्तिष्क को जितनी शान्ति नयी बातों से मिलेगी उतनी आराम से नहीं। उदाहरण के लिये मान लीजिये कि इच्छा न रहने पर भी आप काम करते ही गये। इस तरह बलात् का बोझ लादने से दिमाग थक गया। उस समय सुन्दर प्राकृतिक दृश्य ही मस्तिष्क की सारी थकावट को दूर कर उसे पूर्ण शान्ति दे सकते है। इतना सुगम कोई अन्य साधन नहीं है। प्रकृति-सौन्दर्य के पर्यवेक्षण में भी मस्तिष्क का प्रयोग हो रहा है। वह काम कर रहा है, पर उसका प्रयोग दूसरा रीति

से हो रहा है। क्योंकि यह उस शक्ति का प्रयोग कर रहा है जिसका प्रयोग अभी तक नहीं हुआ था और जो प्रयुक्त होने के लिये उत्सुक थी। इस तरह जहाँ एक ओर थकी शक्ति को आराम मिलता है वहाँ दूसरी ओर नयी शक्ति को काम भी मिलता है। नयी परिस्थित में पड़कर मस्तिष्क के दूसरे अवयव काम करते हैं और जो थक गये थे वे आराम कर रहे हैं। जैसे पढ़ते-पढ़ते थक-कर उठकर बाग में टहलना। रङ्ग-बिरंगे सुन्दर फूल खिल रहे है, उन फूलों को एक-एक करके देखना आरम्भ किया गया। स्मरण-शक्ति या मेधा थक गई थी, इसलिये उसे आराम देने के लिये यहाँ आना आवश्यक था। इस समय फूलों के देखने में दर्शिनी शक्ति काम कर रही है, जिसका अब तक प्रयोग नहीं किया गया था। इस तरह एक साथ ही दोनों काम हो रहे हैं। जहाँ मेधा-शक्ति को आराम मिलने लगता है वहाँ दर्शिनी शक्ति काम मे लग जाती है।

चाहे तुम कितने ही थके क्यो न हो, कितना ही कड़ा परिश्रम क्यों न किया हो, थककर चूर-चूर क्यों न हो गए हों, घर जाकर किसी अन्य काम में लग जाओ; जैसे बच्चो के साथ खेलना, किसी पुराने परिचित मित्र से मिलकर बात चीत करना, बाग में फूलों और पौधों की देखभाल करना। निश्चय है कि तुम्हारी सारी थकावट जाती रहेगी।

इससे इस परिणाम पर पहुच जाता है कि दिमाग को तरोताजा कर देनेके लिये जितनी आवश्यकता काम बदलने की है उतनी काम बन्द करने की नही। जिस अवस्था में कोई लगातार काम कर रहे हैं उसके बदले दूसरी अवस्था मे काम करने से ही दिमाग का बोझा हलका हो जा सकता है, क्योंकि जिस अवयव ने परिश्रम किया है उसे आराम मिल जाता है और नये अवयवों को—जो अब तक सुस्त पड़े थे—काम मिल जाता है।

चरित्र-गठन अथवा सफल जीवन के लिये हसोड़ मिजाज

आवश्यक गुण नहीं माना जाता लेकिन यह गुण प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त करना चाहिये।

कितने गुण ऐसे हैं जिनका समावेश केवल इसलिये हुआ है कि उनके प्रयोग से अन्य गुणोंको सहारा मिलता रहे और यह शरीर ठीक तरह से काम करता रहे। वे इस शरीररूपी मशीन के लिये तेलका काम करते हैं जीवन की उपयोगिता के लिये उनका प्रयोग नहीं किया जाता, पर प्रकारान्तर से उनकी उपयोगिता बहुत अधिक है।

हंसोड़पन तथा मिलनसारी का मन तथा शरीर पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, इनसे अवयवों को खुराक मिलती है और उनके परिवर्धन में सहायता। थियेटर सिनेमा देखनेवालों को ही ले लीजिये। घण्टों लगातार तमाशा चल रहा है। अनुमान से यही कहा जा सकता कि इस तरह एक स्थान पर लगातार एक आसन से तीन-तीन घण्टे तक बैठे रहकर दर्शक अवश्य ही थक गये होंगे, पर यह अनुमान सही नहीं निकलता। जब उन्हें तमाशे से लौटते देखा जाता है उस समय उनके चेहरे पर थकावट का कोई चिन्ह नहीं रहता, बल्कि प्रत्येक आदमी हँसता और प्रसन्न दिखाई देता है।

गाने में भी यही खूबी है। कितना भी थका आदमी क्यों न हो राग और अलाप उसकी सारी थकावट दूरकर उसकी इन्द्रियों को ताजा कर देता है। मानसिक शक्ति के लिये इससे बढ़कर दूसरी पुष्टता नहीं हो सकती। कितने लोग ऐसे भी मिलेंगे जिन्हें किताबों को पढ़ने में ही आराम मिलता है। चाहे वे कितने ही थके क्यों न हो, जहाँ उन्होंने किसी अच्छे कवि के दो-चार पद्य पढ़े उनकी सारी थकावट दूर हो जाती है।

जिस खेल में किसी तरह की गन्दगी नहीं है, किसी तरह की बुराई नहीं है उससे शरीर और मन का बड़ा उपकार होता है।

इसलिए प्रत्येक आदमी को काम के साथ इस तरह के खेलों में प्रवृत्त रहना चाहिये। इससे शरीर का पोषण होगा और काम में सहायता मिलेगी।

कितने लोग कम उम्र में ही बुड्ढे हो जाते हैं, इसका एक मात्र कारण उनका निरन्तर काम करते रहना है। शरीर और मस्तिष्क को आराम देने के लिए उन्होंने समय-समय पर भिन्न-भिन्न अवयवों से कभी भी काम नहीं लिया है। वे बिना किसी परिवर्तन के एक ही तरह का काम दिन-प्रतिदिन वर्षों करते रहते हैं परिणाम यह हुआ है कि कुछ इन्द्रियाँ तो अपने काम के कारण थक कर बेकार हो गई हैं और कुछ बेकाम रहने से विकसित ही नहीं हो सकी है।

कहावत है यदि कोई मनुष्य निरन्तर काम ही करता रहे, खेल के नजदीक न जाय तो वह कितना भी तेज क्यों न हो उसकी बाढ़ मारी ही जायगी। जो लगातार पीसता रहेगा, एक क्षण भी आराम लेना नहीं चाहेगा, अन्त में उसका दिमाग या तो खराब हो जायगा या वह बेवकूफ और मन्द हो जायगा। उसके सभी गुण मर जायँगे, बँधे हुए काम के अतिरिक्त वह और कुछ नहीं कर सकेगा। उसका संसर्ग किसी को भी अभिप्रेत या सुखद नहीं होगा।

ईश्वर ने हमें इसी लिये नहीं पैदा किया है कि हम मशीन की तरह केवल काम करते रहें। यदि हमें मनुष्य-योनि में जन्म पाना सार्थक करना है तो हमें अपने सभी अङ्गों और अवयवों का पूर्ण विकास करना चाहिए।

मनुष्य को इस तरह काम करना चाहिए, अपनी इन्द्रियों का प्रयोग इस तरह करना चाहिए कि वे प्रतिदिन विकसित होती रहें। अगर तुम अपने को सदा इस अवस्था में रखो कि तुम्हारे ऊपर काम का बोझ न लदा रहे तो निश्चय है कि तुम जितना काम करने की आशा रखते हो उससे कहीं अधिक कर सकोगे और यह अवस्था तभी सम्भव है जब तुम अपनी शारीरिक और

मानसिक शक्ति का ठीक तरह से प्रयोग करते रहोगे। कितने लोग ऐसे हैं जिन्होंने अपनी शारीरिक मानसिक शक्ति को इस तरह अपने वश में कर लिया है कि वे उनका मनमाना सञ्चालन करते हैं और इस तरह आवश्यकतानुसार एक का प्रयोग कर दूसरे को आराम पहुँचाते रहते हैं और अपना काम पूर्ण योग्यता से सम्पन्न करते हैं।

* हमारे मन की थकावट और ताजगी के लिए हमारी मानसिक स्थिति सबसे अधिक जिम्मेदार है। निराशा हमारा सबसे बड़ा शत्रु है। शारीरिक योग्यता को नाश करनेवाला इससे बढ़कर दूसरा कोई नहीं। यह धमनियों तथा मस्तिष्क में जहर पैदा कर देती है। इसका जहरीला असर इतना भीषण होता है कि महीनों के लगातार परिश्रम की थकावट भी उसका मुकाबिला नहीं कर सकती। जब तक मानसिक अवस्था फिर नहीं सुधरती, उसकी अवस्था भी नहीं सुधरती। इसके प्रतिकूल शान्त निद्रा से जो ताजगी मिलती है उससे सभी इन्द्रियों में स्फूर्ति पैदा हो जाती है और दिमाग तरो-ताजा रहता है। यही अमोघ शक्ति मस्तिष्क को निरन्तर आगे बढ़ने में सहायता पहुँचाती है और उसे इधर-उधर ढुलकने नहीं देती।

प्रत्येक बुद्धिमान आदमी शारीरिक योग्यता प्राप्त करना चाहता है। चाहे हम सीधे उसी धुन में न लगे हों, पर प्रकारान्तर से प्रत्येक व्यक्ति की यही प्रेरणा रहती है। चाहे कोई जीवन की किसी भी अवस्था में क्यों न हो, चाहे वह व्यापार-वाणिज्य में लगा हुआ हो, पुस्तक लिखता हो, कारीगर हो, समाज-सेवा में दत्तचित्त हो, प्रत्येक अवस्था में वह सदा अधिक काम करते रहने और आगे बढ़ते रहने के लिए आतुर रहता है। जो कुछ वह करता है, उसकी सदा यही इच्छा रहती है कि मेरी योग्यता बढ़े, मेरी शक्ति बढ़े, मेरा बल बढ़े। इसकी उपलब्धि का एक मात्र

उपाय यही है कि प्रत्येक काम निपुणता के साथ शारीरिक योग्यता बढ़ाते हुए किया जाय।

चाहे तुम कुछ करो, अपनी ताकत सदा बढ़ाते रहो, अपनी शक्ति की रक्षा करते रहो। इन पर उसी तरह दत्तचित्त रहो, जिस तरह एक डूबता हुआ आदमी बहते हुए तिनके को दत्तचित्त होकर पकड़ता है। शारीरिक शक्ति का सञ्चय बराबर करते रहो, क्योंकि यही तुम्हारे जीवन का सार है। तुम्हारे पास प्रभूत सम्पत्ति क्यों न हो, पर यदि तुम में शारीरिक योग्यता नहीं है तो तुम उस दरिद्र से भी बुरे हो जो केवल नमक-सत्तू पर दिन काटता है, पर बलवान है। यही सबसे उत्तम पदार्थ है। इसके सामने हीरा, पन्ना और लाल कुछ नहीं हैं।

जिसे अपने शरीर की परवा नहीं, जो बिना किसी विचार के अपनी शक्ति का ह्रास करता रहता है, उसके बराबर फजूल खर्च दूसरा नहीं हो सकता। ऐसे लोग आत्महत्या से भी बुरे पाप के भागी हैं, क्योंकि वे अपने भविष्य पर अभी से पानी फेर रहे है। वे अपना सबसे अमूल्य रत्न लुटा रहे हैं।

प्रकृति क्या कर सकती है? वह तो तुम्हारी सहायता वहीं तक करेगी जहाँ तक तुम्हारी धरोहर उसके पास है। मान लो कि आज तुमने अपने हिसाब से अधिक रुपया ले लिया तो कल ही तुम्हें उसके अदा करने का बन्दोबस्त करना होगा, नहीं तो तुम दिवालिए समझे जाओगे। प्रकृति के हिसाब किताब में जाल या साजिश नहीं चल सकती। वह धेले-धेले का हिसाब रखती है। शारीरिक योग्यता के खाते में तुम जितना जमा करोगे या निकालोगे, सब उस खाते जमा पड़ता जायगा और उसका फल तुम्हें भोगना पड़ेगा।

प्रकृति झक्की या सनकी नहीं है। वह तो अपनी बाकी कौड़ी-कौड़ी चुका लेती है जो आदमी यह समझता है कि हम प्रकृति के

नियमों की मनमानी अवहेलना कर रात का दिन कर सकते है, अपनी मनमानी इच्छा के अनुसार खा-पी सकते हैं। ठीक तरह से न रहकर भी हम अपना काम चला सकते है, कम सोकर भी अपना काम चला सकते हैं, उसका परिणाम उसे भोगना पड़ेगा। उसे खबर भी न होगी और बकाये का चिट्ठा उसके सामने आ पहुँचेगा। अदा न कर सकने के कारण उसे दिवालिया बनना पड़ेगा।

हमारे साथ एक लड़का पढ़ता था। कड़ा परिश्रमी था। खेल कूद के निकट नहीं जाता था। सदा पुस्तकों के ही बीच में रहता था। वह हमलोगों से सदा यही कहा करता था कि तुम लोग हमसे कम काम करके भी थक जाते हो, पर हमें जरा भी थकावट नहीं मालूम होती। परिणाम यह हुआ कि नवी कक्षा से आगे वह नहीं बढ़ सका। डाक्टर ने कह दिया कि अगर पुस्तक की ओर आँख उठाकर देखा कि आँख से हाथ धो बैठोगे।

एक दूसरे आदमी की भी अवस्था ठीक यही थी। वह भी नौजवान ही था। उसे चीरा लगना था। डाक्टर ने उसके खूनकी परीक्षा की और कहा कि अधिक काम से इसका रक्त इतना कमजोर हो गया है कि चीरा लगाने में कहीं इसके हृदय की गति न रुक जाय।

हमलोग जान का बीमा कराने के लिए बहुत उत्सुक रहते हैं। कोई इसकी निंदा नहीं करता, पर सबसे बड़ा बीमाघर तो हमारे पास ही है। उसमें ही हम बीमा क्यों न करा लें। वह बीमाघर हमारी शारीरिक योग्यता है। प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए हमें अपने शरीर को नित्यप्रति उन्नत बनाते रहना चाहिए।

जवानी ऐसा समय है जब हममें शक्ति का अधिक संचार होता है। उस समय यदि हम थोड़ी शक्ति बचाकर रख लें तो आवश्यक समय पर वह हमारे काममें आ सकती है। पर यदि हम प्रतिदिन आमदनी से अधिक व्यय करते जायंगे—अर्थात् चौबीस घंटेमें जितनी शक्तिका

संचय करते हैं, उससे अधिक काम करते रहेंगे तो वह दिन जल्द ही आएगा, जब हम दिवालिया हो जायेंगे, हमारी शारीरिक योग्यता का ह्रास हो जायगा और हम एकदम निकम्मे हो जायँगे।

शारीरिक शक्तिका ह्रास किए बिनाही जो कमाई की जा सकती है वही गणना के योग्य है। यदि कोई चाहे तो वह दो दिनका काम एक ही दिन में कर सकता है, पर विश्वास है कि दूसरे ही दिनवह काम करनेयोग्य नहीं रह जायगा, निकम्मा और दिवालियाहो जायगा।

अगर हम खान-पान में लापरवाही रखते है, ठीक तरह से भोजन नहीं करते, उपयोगी अन्न नहीं खाते, आवश्यक आराम नहीं करते, मनबहलाव से दूर रहते हैं तो हम जितनी शक्ति पैदा करते हैं, उससे अधिक व्यय करते है। इसको छोड़कर और जहाँ चाहो मितव्ययिता का पाठ पढ़ो, क्योंकि यही जीवन का सार है और यहाँ किफायतशारी सर्वनाश का कारण होगी।

बिना स्वास्थ्य और शारीरिक योग्यता के धन-दौलत, इज्जत-मर्यादा और प्रतिष्ठा सब बेकार है। स्वास्थ्य सबसे मूल्यवान रत्न है और उसकी प्राप्ति केवल ठीक रहन-सहन से ही हो सकती है। कितनों ने स्वास्थ्य गँवाकर करोड़ों पैदा किया, पर अंत समय में वे हाथ मलमल कर पछताए, क्योंकि उन्होंने देखा कि जिस समृद्धि के लिए इतनी अमूल्य वस्तु गँवाई, वह समृद्धि स्वास्थ्य की प्राप्ति में किसी तरहकी सहायता नहीं कर सकती और न उसे ला सकती है।

तुम्हारी आकांक्षाएँ और प्रेरणाएँ कैसी भी क्यों न हों, पर तुम्हें किसी भी अवस्था में उचित नहीं है कि अपनी शारीरिक क्षमता से अधिक काम करके अपनी योग्यता का अंत कर दो और उसे कोई बड़ा काम करने के योग्य न रहने दो।

७

प्रत्युत्पन्नमतित्व

नेलसन ब्रिटेन का सबसे बड़ा नौ-सेनापति हो गया है। वह सदा यही कहता रहा कि जब कभी मेरे सामने यह समस्या उपस्थित होती थी कि इस अवसर पर युद्ध में प्रवृत्त होना चाहिये अथवा बेड़ा लेकर हट जाना चाहिए तो मैं सदा युद्धमें प्रवृत्त होना ही श्रेयस्कर समझता था और मेरी अंतरात्मा की भी वही प्रेरणा होती थी। नेलसन को संसार में सब से बड़ा जल-योद्धा होने का सौभाग्य इसी से प्राप्त हुआ कि उसमें प्रत्युत्पन्नमतित्व था, विपत्ति के काले बादल घेरते आ रहे हैं, बुद्धि ठीक तरह से काम नहीं कर रही है, संशय चारों ओर से मजबूत किला बनाकर घेर रहा है। ऐसे समय जिसमें स्थिर प्रत्युत्पन्नमतित्व है वही विजयी हो सकता है।

लार्ड किचनर में भी ये ही गुण थे। लार्ड किचनर एक क्षण में ही निश्चय कर लेते थे कि आगे क्या करना चाहिए और उसी पर डटे रहते थे। महात्मा गाँधी में भी ये गुण वर्तमान हैं। अवस्था को देखा और निर्णय किया कि किस रुख जाना चाहिये और तुरंत उधर कदम बढ़ा दिया और उसी पर अड़े रहे। नेपोलियन में इस गुण की प्रखरता थी। ऐसे-ऐसे कठिन समयों पर उसका निर्णय इतना शीघ्र और व्यापक होता कि लोगों को विस्मयमें डाल देता है

यही प्राचीन आदर्श है पहले विचार लो, तब जो निर्णय एकबार कर लो, उसे पूरा करने के लिए सच्चे वीरों की भाँति लग जाओ, चाहे अपने को संकट में ही क्यों न डालना पड़े।

जितने भी बड़े-बड़े नेता हुए हैं, उनमें प्रत्युत्पन्नमतित्व का गुण सबसे प्रधान रहा है, बल्कि यही उनकी विशेषता रही है। इसे महत्ता की पराकाष्ठा समझना चाहिए। जिसके निर्णय में

आनाकानी नहीं, आगा-पीछा नहीं, संशय या संदेह नहीं, वही इस संसार में विजयी हुआ है। उसके प्रत्युत्पन्नमतित्व और तत्परता के सामने कोई भी बाधा नहीं टिक सकती।

जिस मनुष्य के विचारों में स्थिरता है, जो एकबार किसी बात का निर्णय कर लेने पर फिर कदम पीछे नहीं हटाता, जो एकबार निर्णय कर लेने पर फिर हृदय में किसी तरह की शंका को स्थान नहीं देता, अपने निर्णय के अनुसार आचरण करने में आगा-पीछा नहीं करता, उस आदमी को देखकर यही बोध होता है कि यह कोई प्रतिभाशाली महापुरुष है। उसकी बातें, उसका यह कहना कि 'अब तो मैंने एकबार निर्णय कर लिया', ब्रह्मवाक्य हो जाता है। उसके सामने फिर बहसमुबाहिसे की गुंजाइश नहीं रह जाती।

इसी प्रकार का स्थिर निर्णयी ही दावे के साथ 'हाँ' या 'नहीं' कह सकता है और एक बार मुँह से बात निकालकर फिर उस पर अड़ा रह सकता है। ऐसे ही लोगों की बातों पर विश्वास जम सकता है। और वे ही संसार में बड़ा-बड़ा काम कर सकते हैं।

जिस मनुष्य ने बिना किसी संशय के स्थिर निर्णय-कर लिया और शहद की मक्खियों की भाँति उसके पीछे पड़ गया, वही अपने ध्येय तक पहुँच सकता है। जिसका चित्त डोलायमान है, जिसके हृदय में संशयरूपी कीड़ा वर्तमान है जिसे सदा एक ओर का पलड़ा भारी दिखाई देता है, जिसे अपनी बुद्धि पर भी विश्वास नहीं है। उसकी कोई वकत नहीं और न वह इस संसार में कुछ कर ही सकता है उसका कोई भरोसा नहीं करता, क्योंकि सबको यही आशंका बनी रहती है कि वह किसी भी क्षण अपना मत बदल दे सकता है। उसका कोई विश्वास नही करता और जिम्मेदारी के काम के लिये उस पर कभी भी निर्भर नहीं किया जाता। जो नवयुवक केवल इस बात का भूखा नहीं है कि शोर-गुल मचा कर मैं प्रसिद्धि पा जाऊँ, बल्कि स्थिर-निर्णयी और कर्त्तव्यनिष्ठ है

वही इस ससार में सफल हो सकता है मनुष्य की सबसे बड़ी दौलत प्रत्युत्पन्नमतित्व है।

जिन लोगों के विचार में स्थिरता नहीं है, जो लोग हमेशा संशय के झूले पर चढ़े रहते हैं उनके मार्ग की सबसे बड़ी कठिनाई यह है वे जरा भी त्याग के लिए तैयार नहीं हैं। वे दोनों अवस्थाओं को अपने अनुकूल बनाकर दोनों को चलाना चाहते हैं। वे दोनों नावों पर चढ़कर चलना चाहते हैं। एक ओर तो अपना वर्तमान लाभ त्यागने के लिए तैयार नहीं हैं और दूसरी ओर सफल भी होना चाहते हैं; यही काम सबसे कठिन है।

गोथे ने लिखा और सच लिखा है कि इस संसार में यदि कोई दया का पात्र है तो वह चंचल प्रवृत्तिवाला मनुष्य ही है, जो सदा द्विविधा में जला करता है, जो सदा चाहता है कि दोनों को एक साथ चलाया जाय, पर उसे इस बात का ज्ञान नहीं कि संसार मे यह कभी संभव नहीं है।

प्रत्येक बड़े और महत्त्व के निर्णय के साथ कुछ न कुछ त्याग की बात रहती है। इससे हम जितना ही बचना चाहते हैं उतनी ही दीर्घसूत्रता हम पर अधिकार जमाती जाती है, उतनी ही अधिक हमारी चिन्ता और व्यग्रता बढ़ती जाती है और उतना अधिक हम सब बातों को जटिल कर देते हैं।

जिसने प्रत्युत्पन्नमतित्व का गुण प्राप्त कर लिया है, जो अपने निर्णय को तत्काल अपने कार्यक्रम में ला सकता है, उसकी समता संशयी तथा चंचल प्रवृत्तिवाला मनुष्य नहीं कर सकता। प्रत्युत्पन्न मतित्व से हमारे समय की बहुत बचत होती है, नहीं तो हम संशय के फेर में पड़कर एक ही बात पर भिन्न-भिन्न पहलू से सोचते हैं और फिर भी किसी दृढ़ निर्णय पर नहीं पहुँचते। ऐसे मनुष्य का मन साफ रहता है, उसे किसी तरह की चिन्ता नहीं रहती और उन् अर्धनिश्चित और संशयात्मक प्रश्नों का बोझ ही उसे दबाए

रहता है। उसकी धारणा है कि जो कुछ करना हो तत्काल निर्णय कर लेना चाहिए। अगर इसमें किसी तरह की त्रुटि रह जाय और कुछ हानि भी उठानी पड़े तो कोई परवा नहीं, क्योंकि इससे चित्तकी चंचलता जाती रहेगी, दोलायमान नहीं रहना पड़ेगा और आगे सोचने-विचारने तथा काम करने के लिये अवसर तथा अवकाश मिलेगा। वह जानता है कि जो कुछ निर्णय मैंने किया है खूब सोच-समझकर किया है। एक बार कर्त्तव्य निश्चित करने के बाद वह उस विषय को हृदय से उतार देता है और आगे की धुन में चलता है। यही उसके बड़े बड़े कामों को कर डालने का रहस्य है। वह अपने मन को निर्मल रखता है। ।वह अपने ऊपर संशयरूपी बोझ लादकर नहीं रखना चाहता।

संशयी और चंचलप्रवृत्ति का असर दूसरों पर भी बुरा पड़ता है जो लोग उसके आस पास बैठने-उठनेवाले या रहनेवाले है उनमें भी यह विष प्रवेश करने लगना है। उसके साथ जो काम करेगा उसी को यह बीमारी हो जायगी। छूत की सबसे बुरी बीमारी इसे समझना चाहिए। उसमें कर्तव्य का ज्ञान रह ही नहीं जाता, वह सदा चिन्ता में ही निमग्न रहता है उसके पारिपार्श्वक भी उसके लिये स्थिर निर्णय नहीं कर सकते। इससे उसका सारा काम भवजाल के रूप में ही रहता है। जो कुछ हाथ में लेता है और करना चाहता है उसके कार्य में परिणत होने का कभी भी अवसर नहीं आता। संशय और अनिश्चितता की हवा से वह सदा परिवेष्ठित रहता है। उसका सारा काम अधूरा पड़ा रहता है। आधी चिट्ठियों का जवाब दिया और आधी यों ही पड़ी रह गई, आधा माल रवाना किया गया और आधे का माँगपत्र उठाकर रख दिया गया, एक आदमी का भी सौदा पक्का नहीं हो रहा है। 'आज नहीं कल और कल नहीं परसों' में ही सौदे का अंत हो जाता है। चारों ओर अस्तव्यस्तता छाई रहती है। इस तरह के मालिक को अपने नौकरों से कभी भी सन्तोष नहीं होता, पर वास्तव

में सारे असन्तोष की जड़ वही है। चंचल एवं अस्थिर विचार हृदय की कमजोरी का प्रत्यक्ष प्रभाव है। इस तरह के विषैले संशयात्मक प्रभावसे रक्षा पानेके लिए एकमात्र मार्ग अपने चरित्रको दृढ़ बनाना है।

हम अपने मन और विचार के मालिक हैं। जिस ओर चाहें हम उसे ले जा सकते है। उसे अच्छा भी बना सकते हैं और बुरा भी बना सकते हैं। शुरू से जैसी आदत डालेंगे इसी तरह उसकी प्रकृति होगी। उसे उन्नतिशील या संकीर्ण बनाना हमारा काम है। प्रयोग द्वारा हम अपने मानसिक गुणों का विकास और विस्तार कर सकते हैं और काम न लेकर हम उन्हें संकीर्ण तथा निकम्मा बना दे सकते है। अगर हम स्वयं न चाहें तो हममें चंचलता अस्थि-रता या अनिश्चितता नही आ सकती। हम अपनी इच्छा के अनुसार स्थिरता, दृढ़ता और प्रत्युत्पन्नमतित्व का गुण पैदा कर सकते हैं।

मैं एक नवयुवक को जानता हूँ। उसके चित्त पर चंचलता और हृदय पर अस्थिरता की छाप इतनी जबर्दस्त पड़ गई थी कि उसकी जिन्दगी तबाह हो रही थी। अन्तिम समय में उसे चेत हुआ। वह सतर्क होकर काम करने लगा। उसने इस बात का पता लगाना आरम्भ किया कि सफल और असफल जीवन के कारण क्या हैं। उसने उन कारणों का पता लगाया और अपनी अवस्था से मिलान करना आरम्भ किया। उसने देखा कि मुझमें सभी अव-गुण आ गए हैं। मैं सदा अस्थिर रहा, मैं सदा दोनों पलड़ों को समान करने की चिन्ता करता रहा, पर कुछ भी नहीं कर सका। आज तक किसी बात पर भी मैंने स्थिर और अन्तिम निर्णय या निश्चय नही किया था या कर सका था। एक ही बात पर मैं फिर-फिर विचार करता था और मुझे कभी ओर-छोर नहीं नजर आता था। उसने प्रत्युत्पन्नमतित्व की आदत डालनी शुरू की। जो कुछ उसके सामने आता, उसपर तत्काल निर्णय करता और उसी पर अटल रहता। अगर एक आध मामलों में चूक जाने की भी

संभावना उसे दिखाई देती तो भी वह दीर्घसूत्रता को पास फटकने न देता, क्योंकि इतने दिनों में उसने खूब समझ लिया था कि जीवन की असफलता के यही प्रधान कारण हैं।

वह अब तक निराशावादी था। पर उसने इसे सदा के लिये तिलांजलि दे दी और आशावादी बन गया। 'असफलता' शब्द की चरितार्थता पर वह विश्वास ही नहीं करता था। जहाँ किसी समय वह प्रत्येक बात को संशय और अविश्वास की दृष्टि से देखता था वहाँ आज वह विश्वास और साहस से प्रत्येक काम को हाथ में उठाता है। इस तरह उसने केवल एक वर्ष तक काम किया है और इसी बीच में उसमें दूनी योग्यता आ गई है। ज्यों-ज्यों उसे सफलता मिलती गई उसका साहस बढ़ता गया और अपनी योग्यता बढ़ाने के लिये उसने दूने उत्साह से काम किया। आज उसमें विचित्र परिवर्तन हो गया है। एक दिन जो नवयुवक दुर्बल, अस्थिर एवं संशयी था आज दृढ़, तत्पर, साहसी और पराक्रमी बन गया है।

जिसे हमारी बातों पर विश्वास न हो उसे उचित है कि हमारे कथन के प्रतिकूल आचरण करना आरम्भ कर दे। कल से ही संशयी, अस्थिर और चंचल होने की आदत डाल दे और सब काम दूसरे दिन के लिये डालता जाय। थोड़े दिन के बाद ही उसे अपने पतन का हाल मालूम हो जायगा। वह देखेगा कि मेरी तत्परता और प्रत्युत्पन्नमतिता का सर्वथा ह्रास हो गया, वे बेदम हो गई हैं। इस तरह के आचरण से कार्यकारिणी शक्ति का इतना भीषण ह्रास हो जायगा कि जीवन और मरण के प्रश्न पर भी वह उसी सुस्ती और अस्थिरता से विचार करेगा।

हमने प्रायः देखा है कि लोग अपनी चतुराई इसी में समझते हैं कि किसी बात के लिये पक्का वचन नहीं दे देते अथवा बँध नहीं जाना चाहते। वे अपनी रक्षा और बचाव के लिये सदा कुछ-न-कुछ गुञ्जाइश छोड़ रखना चाहते हैं। उनकी प्रत्येक बात में 'अगर'

और 'यदि' लगा रहता है। पर जिस समय वे देखते हैं कि हमारे उद्धार का कोई रास्ता नहीं है, हमारी रक्षा का कोई रास्ता नहीं है, हमारे बचाव का कोई उपाय नहीं है उस समय उनकी यह नीति काफूर हो जाती है। इसका असल कारण यही है कि उन्हें यह ख्याल सह्य नहीं है कि हमने किसी काम के लिये अपने को बन्धन में डाल दिया है। इससे वे घबरा जाते हैं। अगर इससे निकल भागने की जरा भी गुञ्जाइश उन्हें दिखाई देती है तो उन्हें शान्ति रहती है, नहीं तो उनके सिर पर बोझ रहता है। वे इस बात की कल्पना ही नहीं कर सकते कि पानी में कूद जाय और रक्षा का कोई भी उपाय न सोचा जाय, तो क्या होगा।

जो आदमी सदा फूँक-फूँककर कदम रखने का आदी है, जिसे पुनः पुनः विचार करने की आदत पड़ गई है उसमें दृढ़ता नहीं आ सकती, कल्पना की योग्यता नहीं उत्पन्न हो सकती, क्योंकि अपने ही किए हुए निर्णय पर कायम रहने की दृढ़ता उसमें नहीं है। सब कामों की अवधि होती है, उन्हें चरितार्थ करने का सदा अवसर नहीं उपस्थित होता रहता। जिस मनुष्य में स्थिरता नहीं है वह एक भी काम पूरा नहीं कर सकता, क्योंकि जब तक वह उसपर सोचे-विचारेगा, उसके पक्ष और विपक्ष की सभी बातोंको तौलेगा और देखेगा, तब तक उसपर आचरण करनेका अवसर बीत जायगा और उसे वह काम यों ही छोड़ देना पड़ेगा। निर्णय करने में जो समय और शक्ति उसने व्यय की सब बेकार हो गई।

कुछ लोग बहुधा कहा करते हैं कि खूब सोच-विचार कर काम करना चाहिए। उतावलापन या जल्दबाजी की कोई आवश्यकता नहीं है। अंत में सफल वही होता है जो सोच-विचार कर काम करता है। पर हमारी धारणा इससे एकदम विपरीत है। संसार का इतिहास भी यही बतलाता है। जिन लोगों ने बड़ा-बड़ा काम कर दिखाया है तथा जो संसार में असफल हुए हैं उनके कारनामों को उलट कर

देखिए तो आपको विदित हो जायगा कि एक की सफलता और असफलता का क्या कारण है। जिन्होंने बहुत सोचा-विचारा नहीं, आगा-पीछा नहीं किया, चटपट जो कुछ स्थिर करना था किया और काममें लग गए उन्हें तो विजय मिली, पर जिन्होंने दीर्घसूत्रता दिखलाई, प्रतीक्षा की, उन्होंने अवसरको हाथसे खो दिया और हार गए।

वर्तमान युग में जिस भीषणता के साथ जीवन संघर्ष चल रहा है उसमें वह व्यक्ति कभी भी विजयी नहीं हो सकता जो चुपचाप बैठकर अति दीर्घ काल तक सोचता-विचारता रहेगा। यहाँ तो वही टिक सकता है जिसमें काफी स्फूर्ति है, जो दूसरों को ढकेल कर आगे बढ़ सकता है। नहीं तो जो उससे ताकतवर है उसे किनारे ढकेल देगा और आप आगे बढ़ जायगा। अगर तुम इस जीवनमें कुछ करना चाहते हो, अगर तुम्हें अपना जीवन सफल बनाना है तो तुम्हें प्रत्युत्पन्नमति होना चाहिए, अपने निर्णय पर दृढ़ रहना चाहिए स्थिर रहना चाहिए और उसपर जमकर काम करना चाहिए। जिस व्यक्ति में ये गुण पाये जाते हैं उनमें अन्य भी अनेक गुणों का समावेश रहता है। उन गुणों में से कुछ प्रधान गुण हैं—धीरता और ठीक लक्ष्य पर पहुँचना।

ठीक लक्ष्य पर पहुँचना भी प्रौढ़ मस्तिष्क की निशानी है। जिस व्यक्ति में प्रौढ़ता नहीं है वही इधर-उधर मारा-मारा फिरता है। जिसमे यह गुण नहीं उसकी विचार-शक्ति भी सौम्य नहीं हो सकती। वह स्थान-स्थान पर ठुकराया जाता है, टक्कर खाता है और घबराता है। जो मनुष्य मुह से तो अधिक नहीं बोलता, पर ठीक निशाना मारता है और प्रथम प्रयासमें ही लक्ष्य वेध देता है और बड़े-बड़े कामों को कर सकता है।

ठीक लक्ष्य पर पहुँचना सफलता का दूसरा नाम है। कितने ही आदमी ऐसे मिलेंगे जिन्होंने ऊंची शिक्षा प्राप्त की है, जिनका ज्ञान भी विस्तृत है, पर उनमें ठीक लक्ष्य पर पहुँचने की योग्यता

नहीं है। जिस आदमी में इस बात की योग्यता नहीं है, जो इधर-उधर भटकता हुआ अपने लक्ष्य पर पहुँचता है उसे अपने लक्ष्य का भी पता नहीं रह सकता। उसका रास्ता रेलवे लाइन की तरह बिना ओर-छोर का रहता है।

प्रायः सभी विचारवान मनुष्य इधर-उधर भटकना, द्विविधा-पन तथा हेर-फेर नापसंद करते हैं, क्योंकि इनसे व्यर्थ समय नष्ट होता है और काम की बाढ़ मारी जाती है। सीधे मार्ग पर जाना ही प्रत्येक काम में सफलता का लक्षण है। जिस व्यक्ति में इस बात की योग्यता है कि वह अपनी समग्र शक्ति को एक लक्ष्य की ओर संग्रहीत कर सकता है, लक्ष्य पर सीधे चोट कर सकता है और इधर-उधर भटकता नहीं फिरता, वही सफल भी हो सकता है।

ऐसे आदमी का प्रभाव भी अधिक पड़ता है। जिस मनुष्य में बकवाद करने की आदत अधिक है, जो बिना विचारे बक जाता है, उसकी कार्यक्षमता और योग्यता पर किसी को विश्वास नहीं होता। किसी आदमी से पाँच मिनिट तक बात करने के बाद ही तुम सुभीते के साथ यह बतला सकते हो कि उसमें किसी तरह की कार्यक्षमता है या नहीं, क्योंकि उसके बात-चीत करनेके ढङ्ग-ढङ्ग, तरीके तथा शब्दों के प्रयोग ही उसकी योग्यता और अयोग्यता का परिचय दे देंगे।

तुममें कितनी भी योग्यता क्यों न हो, तुम्हें कितनी ही उत्तम शिक्षा क्यों न मिली हो, तुम कितने ही चतुर क्यों न हो, अगर ठीक निर्णय पर पहुँचने की योग्यता तुममें नहीं है, अगर तुम अपनी शक्तियों को बटोर कर एक लक्ष्य की ओर नहीं चला सकते तो तुम पथ-प्रदर्शक के योग्य कभी भी नहीं बन सकते।

एक मनुष्य ने अपने जीवन-चरितमें (जिसे उसने स्वयं लिखा है) बतलाया है—"मैंने देखा कि एक उत्तम गुण मुझे सहज में मिल सकता है, मैं उसकी प्राप्ति के लिए अग्रसर हुआ। वह गुण था अपने लक्ष्य की ओर सीधे बढ़ना।" थोड़ेमें अपने मतलब को प्रकट

करना, प्रत्युत्पन्नमतित्व और सीधे लक्ष्य की ओर बढ़ना—ये गुण साधारण ही क्यों न प्रतीत होते हों, पर मनुष्य-जीवनकी पूर्ण व्युत्पत्ति के लिए इन गुणों की अवाप्ति नितान्त आवश्यक और वांछनीय है।

अगर तुम में अस्थिरता की आदत पड़ गई है, अगर तुम्हारे चित्त की प्रवृत्ति सदा चंचल रहा करती है तो तुम्हें उचित है कि प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर तुम अपने मन में यह स्थिर कर लो कि आज दिन-भर मैं जो कुछ निश्चय करूंगा उससे फिर नहीं टलूंगा। अपने मन में ठान लो कि जो काम हम करना चाहते हैं उसका पूरी तरहसे निरूपण कर लेंगे और तब उस पर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे। अन्तमें जिस निर्णय पर हम पहुँचेंगे उसे स्वीकार कर लेंगे, फिर इधर-उधर भटकते न फिरेंगे। मैं ऐसे अनेक व्यक्तियों को जानता हूँ जिनमें इस तरह की योग्यता नहीं थी, अपने निर्णय पर उन्हें विश्वास नहीं होता था, अपने हृदय की प्रेरणा के अनुसार वे काम नहीं करते थे। उन्हें प्रतिदिन अपने चित्त की वृत्तियों के साथ संग्राम करना पड़ता था। वे प्रतिदिन अपने मन में कहते—'मेरा भविष्य बिगड़ता जा रहा है, मेरा जीवन नष्ट हो रहा है, क्योंकि मुझ में यह भीषण कमजोरी है। पर मैं अब इसे दूर करके ही छोड़ूंगा। मेरी शिक्षा-दीक्षा अच्छी हुई है। मेरी धमनियों में मेरे पूर्वजों का पवित्र रक्त बह रहा है। मेरी आकांक्षाएँ भी ऊँची हैं। कोई कारण नहीं है कि मैं अपने को हर तरह से योग्य न बना सकूँ। मैं जानता हूँ कि मुझ में हर तरह की योग्यता है, पर केवल एक कमजोरी के कारण मेरा सर्वनाश हो रहा है। मैं अपनी प्रेरणा के अनुसार काम नहीं कर सकता। मैं शैतान से भी अधिक पराक्रम रखता हूँ, पर कठिनाई है केवल आरम्भ करने की। अपने मन से अपने निर्णय के अनुसार आरम्भ करने में मेरा कलेजा काँपता है। दूसरों के भरोसे रहने की मुझमें आदत पड़ गई है। मैंने आज तक

दूसरों की ही राय पर काम किया ! इसका परिणाम यह हुआ कि प्रेरणाशक्ति का विकाश नहीं हो सका।'

'पर अब मैंने निश्चय कर लिया है कि इस कमजोरी को दूर करूंगा। कल से मैं दूसरा ही बनने का प्रयत्न करूंगा। इस अस्थिरता, चंचलता और दूसरों के भरोसे रहने का फल तो मैंने चख लिया। अब मैं किसी ऐसे व्यक्ति को अपना आधार बनाकर आगे बढ़ूँगा जो प्रत्युत्पन्नमति है और अपना काम अपने बल पर करता है। आज मुझे जीवन का यह स्रोत बदलना पड़ेगा। आज से दीर्घसूत्रता, अस्थिरता, चंचलता और संशय सभी को तिलांजलि देता हूँ।

"सम्भव है, मुझसे भूलें हों, पर मैं पीछे नहीं हटूंगा। अपने निर्णय पर विश्वासकर मैं आगे बढ़ता रहूँगा। मैं जन्मभर सीखना ही नहीं रहूँगा, सिखाने का काम भी करूँगा। अब मैं किसी की प्रतिक्षा नहीं करूँगा। आज से मैं जिस शक्ति, योग्यता और तत्परता का परिचय दूँगा उसे देखकर लोग चकित हो जायँगे। आज मुझे अपनी वास्तविक योग्यताका परिचय मिल गया, जिसे मुझे परमात्मा ने दिया हैं।"

यदि हम इस जीवन में सफल होना चाहते है तो हमें प्रेरणा शक्ति को काफी बलिष्ट बनाना चाहिए अर्थात् हममें मौलिकताहोनी चाहिए। जो संसार को मार्ग दिखाना चाहता है उसमें निषेधात्मक कोई भी गुण नहीं होना चाहिए, वह नकलची नहीं हो सकता और न वह कायर या भीरु ही सकता है। उसमें स्वतंत्र विचार, स्वतंत्र निर्णय और स्वतंत्र आचरण की योग्यता होनी चाहिए।

अगर हमें अपनी आत्मा पर भरोसा है और अगर हम स्वतंत्र प्रेरणा के अनुसार काम करना सीख लेते हैं तो हमारी प्रेरणाशक्ति की दिनोदिन उन्नति होती जायगी। पर यदि हम में अस्थिरता रही, दिन में बारह बार मन बदलते रहे तो हमारी निर्णायिका शक्ति भी दुर्बल हो जायगी।

अगर हमें दृढ़ता है, अगर हम यह दृढ़ कर लेते है कि चाहे जो कुछ हो हम इस काम को करके ही चैन लेंगे तो हममें जिस अमोघ शक्तिका संचार होता है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता हमारी तत्परता और त्याग ही हमारे मार्ग के कण्टकों को दूरकर हमें विजयी बना देता है। जिसने आधे मन से काम आरम्भ किया और पग-पग पर यही सोचता गया कि अगर इस काम में सफलता न मिली तो हम इसे छोड़कर दूसरा काम उठा लेंगे तो उसे फिर सफलता कहाँ से मिल सकती है।

हम लोगों के मार्ग में सबसे बड़ी कठिनाई इस बात की है कि हममें दृढ़ता नहीं है। कर्मक्षेत्रमें अवतीर्ण होते समय यह स्थिर नहीं कर लेते कि हम इस काम से कभी भी मुँह नही मोड़ेंगे। जिस काम को हमने उठाया है उसी में तल्लीन रहने को हमने पक्का इरादा नहीं कर लिया है। हमारी पकड़ इतनी ढीली रहती है कि जरा-सी निराशा या प्रलोभन पर हम उससे अलग हो सकते हैं। पर जब तक हम अपने लक्ष्य के लिये सब कुछ त्याग करने को तैयार नहीं है, हम कुछ नहीं कर सकते।

हमने कितने आदमियोंको कहते सुना है कि अगर मै अपने पहले निर्णय पर डटा रहता, उसीके अनुसार काम करता गया होता, अपनी आन्तरिक प्रेरणाके अनुसार ही काम करता और उसीमें लगा रहता, तो आज मेरी अवस्था कुछ भिन्न होती, मै सुखी रहता। इस तरह पश्चात्ताप और परिताप करते हुए अनेक देखे गये हैं, क्योंकि क्षणिक निराशा अथवा प्रलोभन के फेरमें पड़कर उन्होंने अपनी आन्तरिक प्रेरणा की सलाह त्याग दी और पथ से विचलित हो गये।

मनुष्य की दृढ़ता, स्थिरता और तत्परता की परीक्षा तभी होती है जब उसके हृदयमें संशय का विष-वृक्ष उत्पन्न हो जाता है। जब उसकी अन्तरात्मा अथवा बाहर के लोग उसे यह सुझाते हैं कि "मूर्ख तू क्या कर रहा है ? तुझे अपनी बुद्धि पर इतना भरोसा

काम के बारे में क्या कहते है तू विचार कर देख ले तुझे मालूम हो जायगा कि पहले तो तेरा धारणा गलत है, दूसरे इसे सफल करने का तेरे पास साधन नहीं है। फिर ऐसे कामके लिये बन्धु-बान्धवोंके साथ रहनेका सुख क्यों खोता है। जब तू देखता है कि सबकी राय तेरे प्रतिकूल है, सब यही समझते हैं कि तेरा निर्णय गलत है तो अभी से कदम पीछे हटाना अच्छा है बनिस्बत इसके कि तू शर्म और लज्जा से बचने के लिये उसी में लगा रह और अपना सर्वनाश कर।"

चाहे तुम्हारा काम कितना भी विकट और भारी क्यों न हो तुम ऐसी चक्करदार बातों में आकर उसे छोड़ मत दो। जो लोग भविष्य की कठिनाइयों का अनुमान करके तुम्हें पीछे हटाना चाहते हैं उनकी कायरतापूर्ण बातें मत सुनो। अपने निर्णय पर अटल रहो। केवल इसलिये कि तुम्हें कठोर और आपत्तिजनक मार्ग से चलना होगा। अगर तुम अपने प्रथम निर्णय पर पुनर्विचार करने बैठोगे तो तुम्हारा सर्वनाश होगा। जो लोग स्वयं किसी निर्णय पर पहुँचने की योग्यता नहीं रखते अथवा कमजोर हैं, उनके लिये हम कुछ उपाय बतला देना चाहते हैं जो पूर्णरूप से व्यवहारिक है।

१—जो काम तुम्हें करना है उसके सम्बन्ध में पूरी जानकारी हासिल कर लो। फिर चटपट निर्णय कर लो और उसपर अटल रहो।

२—ऐसा आदमी कभी-कभी भूल कर सकता है।

३—जिन लोगों में स्वयं निर्णय करने की योग्यता नहीं रहती उसका प्रधान कारण यही है कि उन्हें अपने पर विश्वास नहीं। उन्होंने अब तक दूसरों के निर्णय पर ही अपना भाग्य-सूत्र तैयार किया है। उन्हें उचित है कि वे अपने निर्णय पर भरोसा करें। जिस निर्णय पर उन्हें भरोसा नहीं है वह नहीं के ही समान खराब है।

४—जिसके निर्णय में दृढ़ता है उसे सफलता का विश्वास है।

५—तुम्हारा निर्णय बिना किसी 'यदि' और 'लेकिन' का होना चाहिए। जो निर्णय एक बार किया फिर उसमें किसी तरह की गुंजाइश नहीं रखनी चाहिए।

८

तुम्हारा भविष्य

फ्रान्स में क्रान्ति शुरू हो गई है। विप्लव के काले-काले बादल आकाश में फैल गये हैं। चारों ओर से अँधेरा छा गया है। राजवंश का पतन हो रहा है जनता की बुद्धि भी ठिकाने नहीं है। उसे भी नहीं समझ पड़ रहा है कि क्या करना चाहिये। वह हतबुद्धि और किंकर्तव्य विमूढ़ हो रही है। ऐसे समय एक अज्ञातनाम व्यक्ति सामने आता है। अभी उसकी उमर बहुत अधिक नहीं है, पर उसका उन्नत ललाट, विशाल नेत्र और आजानु बाहु बतलाते हैं कि वह बड़े जीवट का आदमी है। वह सामने आता है और उस विकट परिस्थिति में हाथ डालने और उसे संभालने का यत्न करता है। सरसरी तौर से उसने अवस्था को भली भाँति समझ लिया था और प्रतीकार का उपाय भी सोच लिया था। इसलिये उसने साहस के साथ कहा कि यदि संचालन की जिम्मेदारी मेरे हाथ में दे दी जाय तो मैं परिस्थिति को अपने काबू में कर सकता हूँ। हुआ भी वैसा ही। राष्ट्र की लाज उसके हाथ में थी और उसने उसकी रक्षा की थी। उस अंधकारमय खोह से उसने डूबते हुए राष्ट्र को बचा लिया। इस महापुरुष ने बड़े ही साधारण वंश में जन्म लिया था और इतना भारी काम करने की कभी भी आशा नहीं की थी। एक बार तो निराशा ने उस पर इतना प्रबल अधिकार जमा लिया था कि वह आत्महत्या तक करने के लिए उतारू हो गया था। वह महापुरुष नेपोलियन था।

हमने कितने लोगों को देखा है जो अपने बीते हुए जीवन पर पछताते हैं। हमें उनसे दो बातें कहनी हैं। यह आप किस तरह मान लेते हैं कि आपका अवसर चला गया? जो काम अब तक आपने किया है शायद वह केवल आपको काम में लगाए रखने के लिए ही था। आपके जीवन को सफल बनाने का अवसर अब आता हो। आपने यह किस तरह मान लिया कि आप भी नेपोलियन और वेलिंगटन नहीं हो सकते। आपको शिवाजी बनने का अवसर किसी भी समय उपस्थित हो सकता है। पंडित मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु दास की ओर एक बार देखकर विचार करो। जिस तरह आज इनके यश एवं त्याग के इतिहास स्वर्णाक्षरों में लिखे जा रहे हैं क्या किसी दिन उसी तरह तुम्हें भी अवसर नहीं मिल सकता? क्या यह सम्भव नहीं है कि तुममें सारी योग्यता भरी है, पर उपयुक्त अवसर अभी तक उपस्थित नहीं हुआ है। हम कितने ही आदमियों को जानते हैं जिनका भाग्योदय ४०, ५०, और ६० वर्ष की उमर के बाद हुआ है।

मद्रास के प्रसिद्ध जज सर सुब्रह्मण्यं ऐयर को ले लीजिए। ६० वर्ष की अवस्था तक वे सरकार के नौकर थे। उस समय तक किसी ने स्वप्न में भी अनुमान नहीं किया था कि वे भारत माता के सपूत लालों की श्रेणी में आ जायँगे। पर समय की प्रगति विचित्र होती है। १९१७ की दमनकारी घटना ने उनके हृदय में हलचल उपस्थित कर दी और वे शेर की तरह गरज कर उठे। अमरीका के राष्ट्रपति के पास भारत के दुखड़े का जो पत्र उन्होंने अपने एक अमरीकन मित्र के हाथ भेजा था, जिसके कारण उस समय के भारत-सचिव मिस्टर मॉंटेगू और उनमें कहा-सुनी हो गई थी किसी को भूला नहीं होगा।

जीवन की किसी अवस्था में ऐसी घटनाएं उपस्थित हो जाती हैं देखकर चकित हो जाने में आता है। उस समय विस्मय के

साथ हम लोग देखते हैं कि अब तक हम लोग अपनी योग्यताओं का केवल आंशिक प्रयोग करते आए हैं। आज के पहले हमें यह भी विदित नहीं था कि हममें इतनी योग्यता कूटकूटकर भरी है।

असल बात यह है कि हममें से अधिक ऐसे हैं जो अपनी योग्यता का स्वयं ज्ञान नहीं रखते। जब अपनी ही अवस्था से परिचित नहीं तो दूसरों की जानकारी रखना तो दूर की बात रही। हम लोगों को अपनी महती शक्ति का पता ही नहीं लगता, क्योंकि हम लोग अपनी पाशविक प्रवृत्ति को इतनी प्रधानता देते हैं कि वही सबसे ऊपर रहती है। समस्त जीवन में एकाध बार ही हम लोग अपने जीवन की महदाकांक्षाओं की खोज में निकलते हैं। कितने तो ऐसे मिलेंगे जो बिना कुछ किए ही इस दुनिया से चले जाते हैं, क्योंकि उन्हें यही नहीं मालूम कि किस तरह उन्हें प्राप्त करना होगा।

महामति हर्बर्ट स्पेंसर ने लिखा है—"शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि आत्मशक्ति का पूरी तरह से उद्बोधन और विकास हो। छात्रों को अवसर देना चाहिए कि वे अपनी बुद्धि से काम लेकर खोज करें और उससे परिणाम निकालें। जहाँ तक हो नई बातें उन्हें कम बतलाई जायँ, उन्हें प्रेरित किया जाय कि वे स्वयं खोज करें और नई बातों को निकालें। मानव-समाज का उत्थान इसी प्रकार हुआ है और संसार के विकास का इतिहास भी इसी बातका साक्षी है।"

इसका एक बहुत उज्ज्वल और स्थूल उदाहरण ब्रिटिश इतिहास में मिलता है। इस दृष्टांत को उद्धृत कर देना अनुप-युक्त न होगा। सर विलियम राबर्टसन का नाम बहुतों ने सुना होगा इनके उत्थान का इतिहास अतिशय रोमांचकारी और

और साधारण भालाबरदारों में भरती हुए। देहाती स्कूल में इन्हें साधारण शिक्षा मिली थी। पर आरंभ से ही इन्होंने पढ़ने-लिखने में प्रवृत्ति दिखलाई, जिससे स्पष्ट था कि ये अपनी पूरी योग्यता का प्रदर्शन करना चाहते हैं, उनमें जो कुछ है उसे व्यक्त कर देना चाहते हैं। उन्हें एक शिलिंग रोज मिलता था। इस वेतन का अधिक भाग पुस्तकों की बिक्री में जाता था। जो कुछ फालतू समय उन्हें मिलता था उसी में वे पढ़ते थे। पर इतने से ही उन्हें संतोष नहीं था। तब वे अपनी साथियों का सहायता लेने लगे। जिस समय उनके हाथ काम करते रहते उनके साथी किताबें पढ़-पढ़कर उन्हें सुनाया करते थे।

अँगरेजी सेना में तरक्की बड़ी कठिनाई से होती है। विलियम रावर्टसन दस वर्ष तक भालाबरदार रहे, पर इन दस वर्षों में जो कठिन परिश्रम उन्होंने किया और जिस असाधारण योग्यता का परिचय दिया, उससे उनकी तरक्की हुई और वे ऊँचे पद पर पहुँचे। इसके बाद उनका उत्थान अतीव द्रुतगामी हुआ। इसके बाद वे भारत आए। यहाँ की अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया और जो-जो काम कर दिखाए उसका दूसरे लोग अनुमान भी नहीं कर सकते थे। साहस और वीरता में भी वे असाधारण पुरुष थे। दक्षिण अफ्रीका में अपनी वीरता से उन्होंने सेनापति रावर्ट और युद्ध-सचिव लार्ड किचनर को मुग्ध कर दिया। यूरोपीय महायुद्ध में उनकी नियुक्ति सबसे ऊँचे पद हुई। उनके एक साथी ने उनके बारे में कहा था—कौन ऐसा होगा जिसके मुँह से रावर्टसन के लिए प्रशंसा न निकले। अनेक तरह की कठिनाइयों का सामना करता हुआ, बिना किसी सहायता के वह व्यक्ति केवल अपने कठिन परिश्रम के बल पर इस पद तक पहुँचा।

इस तरह की योग्यताएँ हम सबमें छिपी हैं। आवश्यकता है

केवल उसके प्रयोग का, उन्हें जगाने की और जगाकर उन्हें काम में लाने का। फिर यही भूतल जो हमें नरक के समान दिखाई देता है स्वर्ग तुल्य प्रतीत होने लगेगा।

कितने नवयुवक तो ऐसे भी मिलते हैं कि जिन्हें अपनी आंतरिक शक्ति पर भरोसा ही नहीं, वे यहाँ तक पूछ बैठते हैं कि "मैं कैसे मानूँ कि मेरे अंदर इस तरह की शक्ति विद्यमान है। एक बार इस बात का आप मुझे विश्वास दिला दीजिए फिर देखिए मैं किस तरह काम में लग जाता हूँ। अगर आप मुझे विश्वास करा दीजिए कि अंत में मुझे सफलता अवश्य मिलेगी तो मैं कड़ा-से-कड़ा परिश्रम अनंतकाल तक करने के लिये तैयार हूँ।"

उन नवयुवकों से हम यह पूछना चाहते हैं कि जिन लोगों ने इतना काम किया है क्या उन्हें यह मालूम हो गया था कि वे बड़ा काम कर गुजरेंगे। उन्होंने आरंभ किया, परिश्रम किया और फल पाया। हम लोग कुछ नहीं कर रहे हैं, इसका एकमात्र कारण यही है कि हम लोग न तो उतने परिश्रम के लिये तैयार हैं न उतना त्याग करना चाहते हैं, बल्कि हाथ डालने के पहले यह निश्चय कर लेना चाहते हैं कि विजय हमारी है।

जितना समय तुम प्रतीक्षा और इंतजारी में बिता रहे हो अपनी योग्यता बढ़ाने का उतना समय तुम खो रहे हो। जहाँ तुम सुस्त बैठकर इस बात पर विचार कर रहे हो कि शिवाजी साधारण आदमी होकर इतना बड़ा वीर कैसे बन गया, वहाँ अवसर से लाभ उठाकर कितने शिवाजी बनते जा रहे हैं पं० गौरीशंकर मिश्र हमारे सहपाठी थे, इतने बड़े नेता कैसे हो गए, भगवानदास गोविंददास अभी कल तक बिसातखाने की दूकान करते थे आज करोड़पति कैसे हो गए। वहीं सैकड़े

शिवाजी, गौरीशंकर और भगवानदास गोविंददास बनते चले जा रहे हैं और तुम बैठे-बैठे मुँह देख रहे हो।

अपनी सारी शक्ति को मथ डालो। तुम देखोगे कि तुम्हारी शक्ति, तुम्हारे उत्थान की कुंजी वहीं छिपी पड़ी है। हममें से कितने ऐसे हैं जो भीतर तलाश न कर बाहर तलाश करते हैं और शक्ति पाना चाहते हैं। सृष्टि के आरंभ से ही मानव-समाज अपनी अवस्था सुधारने के लिये, यातनाओं से छुटकारा पाने के लिए, विपत्तियों को सहने के लिये, दुःखों का आवेग कम करने के लिये दवा ढूँढ़ रहा है, पर उसकी प्रेरणा सदा बाहर की ओर रही है। अब धीरे-धीरे लोगों के दिल में यह बात समाने लगी है कि बाहर से कुछ नहीं मिल सकता। जो कुछ मिलना-जुलना है भीतर से ही मिलेगा।

हमारी अंतःस्थित शक्ति का उद्बोधन उतना ही होगा जितनी तत्परता और जितना परिश्रम हम उसके उठाने में दिखाएँगे। हम लोगों में से कितने ऐसे हैं जिनकी योग्यता बहुत गहरी तह में छिपी है और साधारण अध्यवसाय एवं परिश्रम से उसका परिचय नहीं मिल सकता। इसके उद्बोधन के लिये कभी कभी हम लोगों को भीषण विपत्तियों का सामना करना पड़ता है।

हमारे भीतर असीम योग्यता भरी पड़ी है। हम जितना अधिक परिश्रम करेंगे उतना ही हम उस योग्यता का प्रदर्शन कर सकेंगे। जब हम जानते हैं कि बड़े परिश्रम से हम उज्ज्वल नक्षत्र हो सकते हैं तो परिश्रम से जी चुराकर हम टिमटिमाते दीपक की भाँति अपना जीवन क्यों बिताएँ। हमें किसी भी अवस्था में निराश नहीं होना चाहिए। हमें यह बात भली-भाँति मान लेनी चाहिए कि हममें असीम योग्यता भी है, केवल हमें उसे जाग्रत करने की आवश्यकता है। कितने ही ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ लोग हताश होकर पीछे कदम हटा रहे थे, पर

एक कदम आगे बढ़ाया और कारूँ का खजाना सामने दिखलाई देने लगा।

हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि कितने लोग ऐसे हैं जो हृदय से परिश्रम करते हैं, जो काम उठा लेते हैं उसे पूरी तत्परता के साथ निबाहते हैं। उनसे हमें एक बात कहनी है। अगर इतने पर भी आप अपने ध्येय तक नहीं पहुँच सकते है तो निश्चय जानिए कि अभी अधिक परिश्रम की आवश्यकता है, जिसका आपने प्रदर्शन नहीं किया है। जिस दिन आपका अध्यवसाय उस चरम सीमा पर पहुँच जायगा आप स्वयं विस्मित होकर देखेंगे कि आप कहाँ-से-कहाँ पहुँच गए।

हम लोगों में से कितने ऐसे हैं जिनमें वह योग्यता नहीं थी जो आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने प्रदर्शित की। जिस समय सिर पर भार आ गया और बोझ सँभालना पड़ा, उन लोगों ने अभूतपूर्व शक्ति का परिचय दिया। अगर वह योग्यता उनमें नहीं थी तो कहाँ से आ गई? यह कल्पना नहीं है। इस तरह के उदाहरण प्रतिदिन देखने में आते हैं। पिता की आकस्मिक मृत्यु से १० वर्ष के अबोध बालक या विधवा पर गृहस्थी का सारा बोझ आ गया। जिस भार को ४० वर्ष का अनुभवी मनुष्य सँभालता था वही बोझ १० वर्ष के बच्चे पर पड़ गया। वह उसे निबाहता ही है।

हम लोगों को पता नहीं कि हमारे अन्दर कितनी शक्ति छिपी पड़ी है। जिस समय चिनगारी लग जाती है और आग भड़क उठती है उसी समय हमको अपनी योग्यता का पूरा पता चलता है। कितने ऐसे लोग मिलेंगे जिनके ऊपर साधारण घटनाओं का प्रभाव ही नहीं पड़ता। उनकी शक्ति इतने गहरे में सोती रहती है कि उसे जगाने के लिए उन्हें भागीरथ-प्रयत्न करना पड़ता है।

महात्मा गांधी को ही लीजिये। अगर दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों पर विपत्ति की यह घनघोर घटा न आई होती और भारत में रौलट एक्ट तथा जालियाँवाला बाग की घटना न होती और इण्टर कमेटी ने वह लीपापोती न की होती, खिलाफत के प्रश्न की इस तरह अवज्ञा न की गई होती तो शायद उनकी योग्यता का सौ वर्षों में भी पता न चलता। यह असहयोग आंदोलन न जारी हुआ होता तो जवाहिर ऐसे अनेक जवाहिर छिपे पड़े ही रहते और उनका पता न चलता।

मानव-जीवन की सबसे भारी घटना उद्बोधन है अर्थात् मनुष्य को इस बात का परिचय मिल जाना कि हमारे अन्दर कितनी बलिष्ट शक्ति छिपा पड़ा है। हमारे भीतर कितनी बलिष्ट शक्ति क्यों न हो जब तक हमें उसका परिचय नहीं मिलता वह हमारे लिये बेकार है। अकाली सिक्खों का उदाहरण ले लीजिए। यह जाति वीरता के लिए पुराने जमाने से विख्यात है। पर कुटिल काल के प्रभाव से वह अपनी शक्ति भूल गयी थी। नानकाना हत्याकांडने उसे जगाया। उसे अपनी शक्ति का परिचय मिल गया। अकाली वीरों ने जो कुछ किया है वह भारतवर्ष नहीं, संसार के इतिहास में लिखा जायगा।

शिक्षा देने का सबसे भारी उद्देश्य यह होना चाहिए कि विद्यार्थी को उसके जीवन की उपयोगिता का परिचय मिल जाय, उसमें जो शक्ति छिपी पड़ी है उसे जगाया जाय, उसके हृदय में यह भाव भर दिया जाय कि तुम संसार में सबसे बड़े बनने के लिए भेजे गए हो। केवल उसे शब्दों का भांडार बना देना, नकल करने की शक्ति जगा देना, सिद्धांतों को मनन करने की योग्यता उत्पन्न करा देना ही शिक्षा का उद्देश्य नहीं है। यह तो केवल दिमाग पर बोझ डालना है। वास्तविक शिक्षा वही है जिससे बालक का मानसिक विकास हो, जिससे उसमें समझने

की और ग्रहण करने की योग्यता आ जाय। जो शिक्षक उत्साह और प्रोत्साहन द्वारा अपने शिष्यों को इस योग्य बना देता है कि वे अपनी योग्यता को भली भाँति समझ सकते हैं वही सच्चा गुरु है।

एक छात्र ने मुझसे कहा कि कालेज में पढ़ते समय मैंने प्रमाणपत्र और डिप्लोमा के लिए विशेष यत्न नहीं किया। इन बातों को मैंने सदा गौण समझा। मेरा लक्ष्य सदा अपने एक अध्यापक महाशय पर था। उनसे मुझे जो उत्साह मिलता था, जो प्रोत्साहन मिलता था उसे स्मरण कर मैं विह्वल हो उठता हूँ। उन्हीं की कृपा का फल है कि आज मैं इस हद तक पहुँच सका हूँ। कालेज में मुझे न जाने कितनी बातें सिखलाई गयीं, मुझे बहुतों का स्मरण नहीं है। कितनी बातें तो स्मृति-पथ से एकदम उतर गयीं, पर मैं अपने अध्यापक महोदय को, उनके प्रदत्त उत्साह को आज तक नहीं भूल सका हूँ। आज भी वह मेरे ऊपर जादू का-सा असर कर रहा है।

कठिनाई केवल इस बात की है कि हम लोग यत्न नहीं करते। हमारे भीतर जो अमोघ शक्ति छिपी पड़ी है उसका पता लगाने के लिए जितना यत्न करना चाहिए उसका आधा भी यत्न हम लोग नहीं करते। केवल किनारे पर बैठकर टटोलते रहते हैं, गहरा गोता मारकर उस कुंजी को नहीं ढूँढ़ निकालते जिससे हम अपनी शक्ति का अवरुद्ध द्वार खोल सकें। जिस अवस्था में संसार अब तक पड़ा है उसी अवस्था में हम भी पड़े रहना चाहते हैं। इस बात का हम लोग जरा भी प्रयत्न नहीं करते कि उठें और नयी दुनियाका दर्शन करें, जहाँ अभी तक कोई नहीं पहुँच सका है।

जब तक तुम अपनी योग्यता का पूरा परिचय नहीं दोगे, इस संसार में तुम्हारी पूछ नहीं हो सकती इसके लिए तुम्हें अपनी

अनन्त शक्ति का पता लगाना होगा यदि सम्भव हो तो तुम्हें उन लोगोंके जीवन का अध्ययन करना चाहिए, जो तुम्हारी अवस्था में रहकर वह काम कर गए हैं, जिनके लिए तुम सयत्न हो, क्योंकि अपनी शक्ति का परिचय पाने का सबसे उत्तम तरीका यही है कि अपने से श्रेष्ठ, योग्य और शक्तिशाली आदमी का पल्ला पकड़ा जाय। इससे प्रोत्साहन मिलता है और जीवन की ज्योति जगती है, जो फिर कभी नहीं बुझ सकती।

नवयुवक जवाहिरलाल नेहरू ने बैरिस्टरी को लात क्यो मारी? अमीर का लड़का, प्यार से पला, मोटर और गाड़ी का चढ़नेवाला, इस तरह जेल की यातनाएँ सहने के लिए क्यों उतारू हुआ? महात्मा गाँधी ने ३३ करोड़ मानव-संतान की दुर्दशा का आर्तनाद सुनाया और उनकी आवाज उसके कानों में पड़ी। अपनी अवस्था की सुध-बुध वह भूल गया। बैरिस्टरी पर लात मारी, जीवन के सुख को हराम समझा और देशोद्धार में लग गया।

एक जवाहिर लाल का ही नहीं, महात्माजी ने इस देश के हजारों नवयुवकों में जान डाल दी, उनको छिपी शक्ति को जगा दिया, जो उनके बिना सोती पड़ी रहती और बेकार हो जाती। महर्षि दयानंद ने गिरते हुए समाज की आँखें खोल दीं और उसे ठीक रास्ता सुझाया। आज कितने लोग उनसे प्रकाश पाकर सत्यपथ की ओर जा रहे हैं।

इसी तरह रस्किन, ग्लैडस्टन और डेजराले का प्रभाव इङ्गलैंड के हजारों नवयुवकों पर पड़ा है। लोगों का कहना है कि उस समय इङ्गलैंड के अनेक नवयुवक ग्लैडस्टन का अनुसरण करना बड़े भारी अभिमान की बात समझते थे और उनका अनुसरण करते थे।

अमरीका के बड़े-बड़े कारखानेदार तेज आदमियों को छाँट-

छाँटकर भिन्न-भिन्न विभागों में डाल देते हैं, जिससे प्रत्येक विभाग के काम करनेवाले उनसे उत्साह और साहस ग्रहण करें। नवयुवक अपने साथी को असाधारण काम करते देख स्वयं उसके समान होने की प्रतिस्पर्धा करता है। प्रयाग के हिंदू-बोर्डिंग हाउस की बात है। लड़कों के स्नान करने के लिए कल लगवाने का प्रसंग था। लोगों का विचार था कि छोटे-छोटे कमरे बना दिये जायँ, जिसमें लड़के आराम से स्नान कर सकें। पूज्य मालवीयजी ने इसका विरोध किया और कहा कि एक बड़े प्रांगण में सब पाइप रहेंगे जहाँ दस लड़के साथ स्नान कर सकें। स्नान करने के समय लड़कों को एक दूसरे के शरीर को देखने का अवसर मिलेगा और वे अपना-अपना शरीर सुधारने का यत्न करेंगे, क्योंकि इस तरह की प्रतियोगिता स्वाभाविक है। घोड़दौड़ में घोड़े जितना तेज दौड़ते हैं, उतना कभी नहीं दौड़ते। यही अवसर है जब बराबरी की स्पर्धा से प्रेरित होकर हम सोती हुई शक्ति को जगाते हैं।

जीवन में इस तरह के अवसर अनेक बार उपस्थित होते हैं, अगर हम लोग सावधान हैं, दत्तचित्त हैं और लाभ उठाने के लिए तैयार हैं, तो हम अपना उपकार अवश्य कर सकते हैं।

हम अपना उत्थान कहाँ तक कर सकते हैं, यह बहुत कुछ हम पर ही निर्भर है। हमारे उद्बोधन के प्रधान कारण हमारी रहन-सहन, हमारे संगी-साथी, हमारे आदर्श और ध्येय, हमारी शिक्षा और हमारी पुस्तकें हैं। हममें अनेक लेखक हैं, जिनमें लेखक होने की अभिलाषा केवल लेखकों की जीवनियाँ पढ़कर हुई है। कौन कह सकता है कि कालिदास और भवभूति के नाटकों को पढ़कर कितनों का मस्तिष्क स्फूर्यमाण हुआ होगा।

जिन लोगों ने इतिहास का निर्माण किया है अर्थात् जिनके कारनामों से इतिहास के पन्ने रँगे गये हैं, उनके क्या हम लोग

कम ऋणी हैं। अगर वे आज न होते, अगर आज उनके कारनामें हमें पढ़ने को न मिलते, तो अनुमान कीजिए कि हमारा जीवन कितना नीरस और निरानन्द होता।

अगर लोकमान्य तिलक, माननीय गोखले, दादाभाई नौरोजी आदि प्रातःस्मरणीय महात्माओं की जीवन-कथा का वृत्तांत इतिहास से निकाल दिया जाय और हम लोगों के स्मृति-पट से मिटा दिया जाय तो अनुमान कीजिए कि हमारा कितना नुकसान हो सकता है। लोकमान्य का जीवन-चरित हमारे देश के नवयुवकों के लिये दीपक है, उसी के सहारे कितने जीते हैं, निराशा में उससे प्रकाश पाते हैं और इस संसार की झंझट से छुटकारा पाते हैं। लोकमान्य ने अपने जीवन में जिन कठिनाइयों और आपदाओं का सामना किया था उसे स्मरण कर कौन युवक निराश होकर पीछे कदम हटा सकता है।

यह नहीं कहा जा सकता कि एक ही वस्तु से प्रत्येक व्यक्ति को उत्तेजना मिलती है। किसी को किसी से उत्तेजना मिलती है और मिल सकती है। पर जो भी कारण हो, इतना तो निश्चय है कि संसार की उन्नति इसी बात पर निर्भर है कि हम अपनी योग्यता का पता लगाएँ और उसका प्रयोग करें।

मैं अपने एक मित्र की चर्चा कर देना चाहता हूँ। उनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य वकालत थी। जब से उन्होंने अँगरेजी शिक्षा आरम्भ की उन्हें वकालत की धुन लगी रही। पर एक साधारण घटना से उनका ध्यान बदल गया। एक दिन वे कचहरी गए। वकालतखाने में उन्होंने देखा—सैकड़ों वकील गर्दन टेढ़ी किए मुअक्किल की खोज में हैं। उन्हें बड़ी ग्लानि आई। वहीं उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि इस पेशे में नहीं जायेंगे, आज वे सार्वजनिक सेवा का बड़ा भारी काम कर रहे हैं। बात मामूली थी, पर जीवन की घटना पर कितना भीषण प्रभाव पड़ा। इस

मस्तिष्क में न जाने कितने कोठे हैं जिनमें न जाने कितना खजाना भरा है। आवश्यकता ठीक कुंजी तलाश करने की है। हममें से कितने प्रतिक्षण नये-नये तहखाने खोल रहे हैं, जिनके बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते थे। कभी-कभी साधारण घटनाओं का इतना भीषण प्रभाव पड़ा है कि अनुभव नहीं किया जा सकता। आज तुम निराशा के घोर अंधकार में पड़े टटोल रहे हो। तुम्हें ठीक मार्ग नहीं मिल रहा है। कल ही न जाने कहां से क्षीण प्रकाश तुमने देखा और तुम्हें मार्ग मिल गया। तुम्हारी सच्ची सफलता सार्थक उत्तेजना पर ही निर्भर करती है। कितने लोगों से—जिन्हें हम जीवन में सफल कह सकते हैं—हमने सुना है कि अगर अमुक घटना न हुई होती तो शायद हमें सफलता न मिलती।

जो लोग अधिक मिलना-जुलना पसंद नहीं करते, जो पीटे हुए मार्ग को छोड़कर नये रास्ते से चलना नहीं चाहते, वे लोग भारी भूल करते हैं। उन्हें यह समझ नहीं कि नये संसार में गए बिना नयी उत्तेजनाएँ नहीं मिल सकतीं और हमारी नयी योग्यताओं में स्फूर्ति नहीं आ सकती।

ईश्वर ने मनुष्य को समाज में जन्म इसलिये दिया कि वे साथ रहें, मेल-जोल से रहें, एक दूसरे की सहायता करें। जो मनुष्य ईश्वर के इस नियम को चरितार्थ करता है वह अपना जीवन केवल सुखमय ही नहीं बनाता, बल्कि वह लगातार अपना उद्बोधन और उत्थान करता जा रहा है। पढ़े-लिखे और शिक्षितों के सहवास में रहना ही सबसे बड़ी शिक्षा है। उनके सहवास से हृदय की संकीर्णता और गंदगी जाती रहती है। हृदयरूपी हीरे का टुकड़ा साफ और निर्मल हो जाता है।

अगर हम लोग हृदय से चाहें तो दूसरों की सहायता कर सकते हैं। उन्हें उत्साह प्रदान कर उनके जीवन को सार्थक तथा

सुखमय बना सकते हैं। उनको प्रकाश देकर नयी संभावनाओं को जागरित कर सकते हैं। आज संसार को—सबसे अधिक भारत-वर्ष को—ऐसे ही लोगों की आवश्यकता है जो उत्साह प्रदान कर सकें।

पर इसके लिये पहले हमें अपनी योग्यता का पता लगाना होगा, अपनी छिपी शक्ति को ढूंढ़ निकालना होगा। यह जीवन एक तरह की यात्रा है, जिसमें हमें नयी-नयी बातों को खोज कर निकालना है। हममें से प्रत्येक को कोलंबस होने की आवश्य-कता है।

———

६

उत्थान

एक आदमी का नौकर बेवकूफ था। जो काम वह करता भद्दी तौर से करता। किसी दिन उसके स्वामी ने उसे डाँटना शुरू किया तो उसने कहा—इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, अपनी योग्यता भर मैंने इस काम को सँभालने का यत्न किया। इस पर उसके मालिक ने बिगड़ कर कहा—इस तरह तो एक गदहा भी कर सकता था। मैं तो तुमसे अच्छी आशा रखता था।

किसी आदमी ने एक कारीगर से पूछा—तुम्हारा सबसे उत्तम काम क्या है? उसने उत्तर दिया—जो काम कि मैं करनेवाला हूँ।

जब हमारी चेष्टा अपने काम को सुधारने की ओर रहती है, अपने गुणों को दिन-दिन बढ़ाने की ओर रहती है, लक्ष्य को सदा ऊपर उठाने की ओर रहती है, तो हम अपने भीतर छिपे उत्तम से उत्तम गुणों को प्रदर्शित करते हैं। जिस आदमी को हम नौकर रखना चाहते हैं, अगर उसमें तरक्की करने की अभिलाषा दिखलाई देती है तो उसे रखने में हम और कोई बात नहीं देखना चाहते।

किसी काम के लिये हम लोग जो तरीका अख्तियार करते हैं जो उत्साह और दिलचस्पी दिखलाते हैं उससे हमारी योग्यता का पता चल जाता है हमारे हाथ से कोई काम भला या बुरा

साधारणत यही देखा गया है कि ससार में जितने बड़े बड़े काम हुए हैं उनके करनेवाले कोई असाधारण योग्यता के लोग नहीं थे। वे ही लोग किसी काम को पूरी तरह से संपन्न कर सकते हैं जिनमें अपनी अवस्था दिन-पर-दिन सुधारने की योग्यता है।

नेपोलियन युद्ध के समय की बात है। उसके सैनिकों ने शत्रु के एक तोपखाने पर अधिकार कर लिया। उस सेना का मार्शल दौड़ा हुआ नेपोलियन के पास यह सुसंवाद लेकर आया। नेपोलियन ने धीरता से उत्तर दिया—दूसरे तोपखाने पर भी अधिकार जमाओ।

देखा गया है कि कितने लोग अपनी पहली विजय पर ही फूल जाते हैं और फिर आगे बढ़ने की आवश्यकता नहीं समझते, उतने से ही संतोष कर लेते हैं।

एक आदमी को मैं जानता हूँ। उसमें कोई असाधारण योग्यता नहीं थी, बहुत चलता पुरजा भी नहीं था। पर हां, एक गुण उसमें अवश्य था, वह अपने काम को दिन प्रतिदिन सुधारता जाता था। उसने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि प्रतिदिन हम कुछ-न-कुछ सुधार अपने काम में अवश्य करेंगे। इस व्यक्ति ने अपने जीवन में कोई भी बड़ा भारी काम नहीं किया, पर केवल इस गुण की बदौलत उसे आशातीत सहायता मिली। इस तरह की साधारण योग्यतावाले आदमी को इस तरह सफल होते देख लोग आश्चर्य करते हैं। पर सफलता की कुंजी यही है। अपने कामको नित्यप्रति सुधारते रहना चाहिए।

अगर कोई व्यक्ति अनवरत यत्न करता रहे और अपनी अवस्था सुधारता जाय तो कोई कारण नहीं कि इस जीवन में उसे सफलता न मिल सके।

अगर आज लोगों को समझ में यह बात आ जाय कि बड़े-

बड़े काम के लिये असाधारण योग्यता की आवश्यकता नहीं है तो हमें पूरी आशा है कि लोग असाधारण योग्यता की कभी भी प्रतीक्षा न करें और न सुअवसर की प्रतीक्षा में रहें। उसी दिन से वे काम करना आरंभ कर दें और प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा करते जायँ। जो आदमी काम को तुरंत हाथ में ले लेता है और बराबर इस बात का यत्न करता है कि कल हमने जो कुछ किया उससे आज उमदा काम करेंगे तो वह उस आदमी से कहीं आगे बढ़ जायगा जो बैठा-बैठा समय और सुअवसर की प्रतीक्षा करता है।

कोई भी काम हाथ में ले लो उसे प्रतिदिन करते रहो। सालभर के बाद देखो कि तुमने उसे कितना कर डाला है। केवल दिन प्रतिदिन उन्नति करते रहने से ही तुम आशातीत सफलता प्राप्त कर सकते हो। अगर पैसे-भर उन्नति रोज हुई तो अनुमान करो कि ३६५ दिन में तुम किस अवस्था को पहुँच जाओगे।

विद्यार्थियों की एक सभा में व्याख्यान देते हुए किसी महा-मान्य पुरुष ने कहा था—चाहे तुम किसी देश में जाओ, तुम्हारा लक्ष्य सदा इस बात पर रहना चाहिए कि तुम अपने साथियों से बेहतर काम करते हो। केवल इतने से ही तुम ऊपर उठ सकते हो। सबसे इस बात की आशा की जाती है कि वह अपना काम करेगा, पर जो आदमी अधिक दत्तचित्त और सावधान रहता है उसे अधिक सफलता मिलती है।

किसी आदमी को आशातीत सफलता प्राप्त करते देख लोग विस्मय प्रकट करते हैं और कहते हैं कि यह भाग्यवान है। पर यदि विचार कर देखा जाय तो उसके 'भाग्यशाली' होने का रहस्य उसकी तत्परता में है। जो आदमी काम का आदर्श जरा ऊँचे ले जाता है, जिसमें मौलिकता है, अध्यवसाय है, उन्नति-

सीखता है, जो नये-नये काम में नये-नये तरीकों की योजना करता है, जो पुरानी लकीर का फकीर नहीं है, जो अपने काम में सुधार करने के लिये सदा सतर्क रहता है, उसे हम असाधारण आदमी कह सकते हैं और वही आगे बढ़ जाता है। उसके लिये काम की कमी नहीं, जहां-कहीं वह जायगा उसका स्वागत होगा।

प्रत्येक व्यक्ति में यह योग्यता रहती है और यदि वह चाहे तो अपनी अवस्था सुधार सकता है। अगर वह पीछे रह जाता है तो अपनी करनी से। इस युग में अपने को योग्यतम बनाने के अवसर सदा उपस्थित रहते हैं, फिर अयोग्यता की बात मुँह पर लाने का कोई कारण नहीं है। जब सबसे उत्तम बनने के साधन हमारे पास विद्यमान हैं तो हम अंगुल-भर पीछे क्यों रह जायँ।

जब सबसे बढ़िया चीजें नहीं मिल सकतीं तभी घटिया की पूछ होती है। अगर हमारी जेब में पैसा है तो हम बढ़िया कपड़ा पहनना चाहेंगे, बढ़िया भोजन करना चाहेंगे। अगर हम यह सब नहीं भी संपन्न कर सकेंगे तो भी हृदय में यही कामना रहेगी। इसी तरह जब तक उत्तम आदमी मिल सकते हैं तब तक औसत दर्जे के आदमियों की पूछ नहीं होती। उनकी पूछ तभी होगी जब उत्तम का अभाव होगा।

अगर तुमने अपने को किसी काम में दक्ष बना लिया तो तुम्हारी पूछ हर जगह होगी, उस समय ऊँच-नीच का विचार नहीं होगा। तुम्हारा पेशा कितना भी नीच क्यों न हो, अगर तुमने उसमें पूरी योग्यता प्राप्त कर ली है तो तुम्हारी सफलता में कोई बाधा नहीं उपस्थित कर सकता।

पर दक्ष बनने के लिये कुछ त्याग की आवश्यकता है, यों ही नहीं काम चल सकता। तुम्हें सदा सतर्क रहने की आवश्यकता है। जो काम तुम्हारे हाथ में है उस पर सदा तत्पर और दत्तचित्त

रहो और सदा ऊपर उठने का यत्न करते रहो। काम से जी चुराना या कम परिश्रम से काम संपन्न करना सहज है और सम्भव है, पर इसका फल क्या होगा ? हमी अपने विधायक हैं। अपने काम के अनुसार हमीं अपने को सबसे बढ़िया या घटिया बना सकते हैं। यदि हम चाहते हैं तो आज हमने जो कुछ किया है उससे कल बेहतर काम कर सकते हैं।

एक नौजवान आदमी अभी जीवन में प्रवृत्त हुआ है। वह किसी काम में लगा है। अगर उससे कोई कह दे कि जिस तरह तुम यह काम कर रहे हो, इससे अच्छी तरह तुम नहीं कर सकते तो वह अपना अपमान समझेगा। जहाँ तक हमारा अनुमान है वह इस अपमान को चुपचाप नहीं सह लेगा, वह लड़ पड़ेगा।

इससे क्या मालूम हुआ। यही कि हमारे हृदय के भीतर एक शक्ति है, जो सदा यही चाहती है कि हमारी अवस्था दिन पर दिन सुधरती रहे। इससे स्पष्ट है कि जो कुछ हम कर चुके हैं, उससे अच्छा करने की हममें योग्यता है और उसको हम काम में ला सकते हैं।

मुझे आज तक एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं मिला, चाहे वह किसी फिरके का हो, जो अपने काम को अधिक उत्तम तरीके से नहीं कर सकता। हमारा तो यहाँ तक अनुमान है कि हममें से जो लोग पूरी सतर्कता और सावधानी के साथ काम करते हैं वे भी अपने काम में और सुध[illegible] हैं। हम अपनी अवस्था को सुधारकर उसमें बहुत [illegible] सकते हैं? पर हम लोग ऐसा करते क्यों नहीं [illegible] में क्यों पड़े रहते हैं? हम लोग कायरता में पड़े [illegible] से क्यों वंचित रहते हैं? जब हम लोग बड़ा-बड़ा [illegible] हैं तो हम छोटा काम क्यों करते हैं?

छाती पर हाथ रखकर कहिए कि [illegible] हम यह जानते हैं कि

अपनी पूरी योग्यता से काम नहीं कर रहे हैं, अपनी सारी शक्ति को नहीं लगा रहे है तो काम बिगड़ते देख आपको कोसना कहाँ तक उचित और न्याय्य है। हम ऊपर स्वीकार कर चुके हैं कि अगर कोई हमारे काम को देखकर यह कहता है कि इससे उत्तम रीति से काम संपन्न करने की योग्यता तुममें नहीं है तो हम अपमानित समझते हैं। तो क्या यह इस बात का काफी सबूत नहीं है कि हममें जो शक्ति छिपी पड़ी है उसका अभी तक हमने समुचित प्रयोग नहीं किया है?

असल बात यह है कि हम अपने ऊपर कड़ाई नहीं रखते, मुलायमियत से काम निकालना चाहते हैं। स्नेहमयी माता की ममता की तरह हम लोग भी अपने शरीर पर दया करते हैं। उससे पूरा काम नहीं लेना चाहते। अपना चरित्र सुधारने में हम लोग ढीले हैं। जो आदत बच्चों में देखकर हम उसकी निन्दा करेंगे वही आदत हम बिना किसी संकोच के अपने में डालते हैं। हम लोगों की सुस्ती, कठिन काम से जी चुराने की आदत, सहज काम की ओर झुकने की प्रवृत्ति, जो काम हमें नहीं रुचता उसमें हाथ न डालने की प्रवृत्ति आदि बातें साफ जाहिर करती हैं कि हम लोग पूरी तरह से ध्यान नहीं करते।

आप किस काम में लगे हैं। आप सोचते हैं कि इस काम में मैं अपनी सारी योग्यता खर्च कर रहा हूँ, जिससे मैं सबसे आगे रहूँ। मान लीजिए कि एक आदमी आपके पास आता है और कहता है कि अगर आप इस काम में इतनी सीमा तक निपुणता हासिल कर लें और इसे कायम रखें तो मैं आपकी आमदनी तिगुनी और चौगुनी कर दे सकता हूँ। क्या आप उस समय और सतर्क एवं सयत्न होकर काम न करेंगे? उस योग्यता को न प्राप्त करेंगे। क्या आप थोड़ा और परिश्रम नहीं करेंगे, और सतर्क एवं सचेष्ट नहीं हो जायँगे? क्या आप और अधिक काम

नहीं करने लग जायँगे ? क्या आप पहले की भांति बार-बार काम करते और छोड़ते रहेंगे ? क्या आप दस मिनट अब और दस मिनट तब काम करके छुट्टी पा जायँगे ! क्या आप और तत्परता और अध्यवसाय न दिखलाएँगे ? क्या आप उस समय भी इसी तरह गलतियाँ और भूलें करते रहेंगे ?

निश्चय ही आप जी तोड़कर परिश्रम करेंगे। जिससे आप उतने योग्य बन सकें और कहा हुआ पारितोषिक पा सकें। आप और तड़के उठेंगे और काम पर चले जायँगे। आप अपने को साफ़-सुथरा रखेंगे। आप अपना रोब दाब बनाए रहेंगे, चित्त प्रसन्न रखेंगे। किसी तरह से अपने शरीर के लिये भी लापरवाह नहीं रहेंगे। कहने का तात्पर्य यह है कि उस इनाम को पाने के लिये आप कोई बात उठा न रखिएगा।

पर आप कहेंगे कि इस तरह का प्रलोभन हमारे सामने नहीं है और इसी से हम इतने ऊँचे तक नहीं पहुँच सकते। आप यहाँ पर भूल करते हैं। मेरी तो धारणा है कि आपके लिये इससे भी अधिक प्रलोभन तैयार है। एक तरफ तो दूनी और तिगुनी आमदनी की सम्भावना है और दूसरी ओर जीवन सुधर जाने की सम्भावना। दोनों में आप किसे अच्छा समझते हैं ? जीवन को सुधारना और सफल बनाना कितना उत्तम होगा अर्थात् इससे बिना किसी प्रयास के आप अपने ध्येय तक पहुँच जायँगे। इस समय जो अवसर आपको मिला है वह शायद फिर न मिले। जो समय आपने एक बार खो दिया वह फिर नहीं आनेवाला है। इस तरह आपके सुधार का समय प्रतिक्षण बीतता और कम होता चला जा रहा है। जो सोया सो खोया। गया वक्त फिर हाथ आता नहीं।

इसलिये आलस्य छोड़ तत्पर होकर आपको इसी समय

किसी काम में हाथ डालेंगे उसे इस तरह सम्पन्न करेंगे कि हमारी भी गिनती हो। इस साल हम जो कुछ कर दिखाएँगे वह इससे पहले कभी नहीं किया था।

अगर आज तक आप उदासीन रहे हैं, उदासीनता के साथ अपने कर्तव्य का पालन करते रहे हैं तो उसे छोड़िए। जो कुछ उत्साह से करिए और नयी आशाओं से उसे परिवर्तित करिए। तै कर लीजिए कि आप किसी से भी घटकर न रहेंगे। सबसे बढ़कर रहेंगे और सबसे बढ़कर काम करेंगे। जीवन की जिस किसी अवस्था में आप रहें, इस तरह काम करें कि लोग आपकी श्रेष्ठता स्वीकार करें और आपकी ओर श्रद्धा-भक्ति और सम्मान से देखें।

यह संकल्प आपको सदा मन में रखना चाहिए, चाहे आप कोई भी काम क्यों न करते हों, और अगर आप इस पर सदा चलते रहेंगे तो आपकी पकड़ दिन प्रतिदिन दृढ़ होती जायगी और आपको नित्य नया संतोष मिलेगा।

आप देखते हैं कि अमुक काम को औरों की बनिस्बत हम अच्छी तरह कर रहे हैं। इतने से ही आपको संतोष नहीं कर लेना चाहिए, यह आपके अनुरूप नहीं। अपनी जांच आपको अपनी योग्यता के अनुसार करनी चाहिए, न कि औरों की योग्यता के अनुसार। अपने पड़ोसी से आगे बढ़ जाने में ही संतोष मानकर आप अपनी योग्यता को दबा दे सकते हैं।

आपकी अभिलाषा इस तरह की होनी चाहिए कि "हम जो काम जिस रीति से कर रहे हैं वह काम हमें और भी उत्तम रीति से करना चाहिए। पीछे रहना हमें घृणा की दृष्टि से देखना चाहिए।" आपका आदर्श होना चाहिए—"प्रत्येक क्षण का हमें पूरी तरह से प्रयोग करना चाहिए—"कहा जा सकता है कि किस घड़ी कौन महापुरुष निकल आए और हमारी समता करने

लगे या हमसे भी आगे बढ़ जाय। बस, संसार में एक ही उद्देश्य है जिसकी सदा उपासना करनी चाहिए। वह यही है कि हमें सदा अपनी शक्ति का पूरा प्रयोग करते रहना चाहिए।"

इस बात की आशा स्वप्न में भी मत करो कि कहीं से एकाएक गायत्री देवी प्रसन्न होकर आएँगी और तुम्हारे घर में सोना बरसा जायँगी। प्रतिदिन तत्पर रहकर काम करना और अपने काम को दिन-दिन सुधारना ही तुम्हारी गायत्री देवी है, जो तुम्हारे घर में सोना बरसाएँगी। थोड़ा अधिक दत्तचित्त बनो, थोड़ा अधिक साहस दिखलाओ, थोड़ा अधिक प्रयास करो, थोड़ी अधिक तत्परता दिखाओ, तुम देखोगे कि समय से पहिले ही तुमने अपनी योग्यता इस तरह बढ़ा ली है कि तुम जिस किसी काम मे हाथ डालोगे, विजयी होगे।

अगर साधारण प्रयास से ही हम कुछ-न-कुछ सफलता प्राप्त कर लेते हैं तो असाधारण प्रयास से हम क्या नहीं कर सकेंगे। अगर साधारण बुद्धि और तत्परता से ही हम ससार-यात्रा में सफल यात्री की तरह चल सकते है तो असाधारण उत्साह के प्रयोग से हम क्या नहीं कर सकते।

बूँद-बूँद जल से घड़ा भर जाता है। आज जो अच्छा है, कल उसे हम और अच्छा बना देते हैं तो परसों उसे सबसे अच्छा बना सकते हैं। कितने आदमियों का जीवन चरित हमने पढ़ा है। उनके सफल होने का रहस्य यही रहा है कि वे अपने काम की उन्नति प्रतिदिन करते गए।

असहयोग-आंदोलन को आरंभ करते समय महात्मा गांधी ने क्या उपदेश दिया था। हममें जो सबसे अच्छी योग्यता पाई जा सकती है उसका प्रयोग कर ही हम इस संग्राम में सफल होने की आशा कर सकते हैं 'यह संग्राम नियत अवधि के लिये है। उनके कथन का प्रयोग हमें अपने दैनिक जीवन में करना चाहिए।

यह जीवन संग्राम आदि से अंत तक चलेगा। इस संग्राम में उत्तीर्ण होने के लिये हमें अपनी सबसे उत्तम योग्यता का किस तरह प्रयोग करना चाहिए यह सहज में ही अनुमान कर लिया जा सकता है।

हम लोगों के अंतःकरण में एक अंतर्हित शक्ति आसन जमाकर बैठी है। जो कुछ भला या बुरा काम हम करते हैं उसे सदा तौलता रहती है। इसकी आंखों में धूल झोंककर हम इसे धोखा नहीं दे सकते, इसे घूस देकर राजी नहीं कर सकते। अगर हम ठीक तरहसे काम नहीं करते तो हमें दंड अवश्य मिलेगा। अगर हम अपना काम ठीक तरह से करते हैं तो हमें पुरस्कार मिलेगा। इसको हमारे कामों से तभी संतोष होगा जब हम अपनी सबसे उत्तम शक्ति का प्रयोग इसके निष्पादन में लगाते हैं। इसी से हमें भी पूर्ण और स्थायी शांति मिल सकती है।

१०

पुरुषार्थ

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः
विघ्नैः पुनःपुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति ।
आरभ्यते हि कर्माणि श्रान्तः श्रान्तः पुनः पुनः ।
कर्माण्यारभमाणं हि पुरुषं श्रीनिषेवते ॥

एक नदी के किनारे खड़े होकर अनेक लड़के ढेला फेंक रहे थे। उनमें से एक लड़का सबसे दूर ढेला फेंकता था। ढेला फेंकने के लिये वह अपनी जगह से दस कदम पीछे हटता और वहीं से दौड़ता हुआ आता और ढेला फेंकता। जितना कम जोर वह करता उतना ही कम दूर उसका ढेला जाता। इससे अनुमान किया गया कि ढेला का दूर जाना या नजदीक रह जाना जोर पर निर्भर है। जितना जोर मारकर हम ढेला फेंकेंगे वह उतना ही दूर जाकर गिरेगा।

यह एक साधारण घटना का विवरण है, पर इससे कितना भारी निष्कर्ष निकलता है। यह जीवन-संग्राम भी लड़कों के उसी खेल की तरह चढ़ा-ऊपरी का खेल है। इसमें भी हम लोग जितना अधिक जोर मारेंगे उतने ही आगे बढ़ते जायंगे। अगर हम अधूरी शक्ति का प्रयोग करते है तो हम अपने ध्येय तक कभी

जो कुछ काम तुम करना चाहते हो उसका आगे बढ़ाना तुम्हारी तत्परता पर निर्भर है। जितना गुड़ डालोगे उतना ही मीठा होगा। अपने काम में तुम अपनी शक्ति, बल तथा पौरुष का जितना अधिक प्रयोग करोगे उतनी ही अधिक सफलता तुम्हें मिल सकेगी।

कितने लोग ऐसे हैं जो काम तो बड़ा कर डालना चाहते हैं, पर उसके लिये प्रयास करना नहीं चाहते। जितनी शक्ति लगाने की आवश्यकता है उतने का प्रयोग नहीं करते। वे इस बात का समझने का यत्न नहीं करते कि किसी बात को चाहने और प्राप्त करने में बड़ा अंतर है। जिस संकल्प में 'दृढ़ता' नहीं है और जिसमें 'दृढ़ता' है, उन दोनों मे घोर अंतर है। उन्हें यह बात समझ लेनी चाहिए कि जो आदमी तत्परता के साथ कोई काम करता है और जो आदमी आराम के साथ काम करता है, उन दोनों में वही फर्क रहेगा जो उन आदमियों में रहता है जो काम में लग जाते है और सदा आगे बढ़ते रहते हैं तथा जो बैठे-बैठे उपयुक्त अवसर और बाहरी सहायता की बाट जोहते रहते है।

अगर तुमने दृढ़ संकल्प कर लिया है कि हम इस काम को करेंगे ही तो निश्चय जानो कि प्रवाह का वेग तुम्हारे विरुद्ध कितना भी तेज क्यों न हो तुम्हें पीछे नहीं हटा सकता, भीषण-से-भीषण बाधाएँ भी तुम्हारी गति नहीं रोक सकतीं। तुम आगे बढ़ते ही जाओगे और अंत में सफल होगे। पर यदि तुम्हारे संकल्प में दृढ़ता नहीं है, तुम संशय से भरे हो तो तुम पार नहीं कर सकते। प्रवाह का झोंक तुम्हें पीछे घसीट लाएगा और तुम उन अन्य लोगों की भाँति किसी अज्ञात देश में बह जाओगे, जो तुम्हारे ही समान बिना दृढ़ संकल्प के ही आगे बढ़ रहे थे।

चाहे तुममें कितनी भी योग्यता क्यों न हो अगर तुममें वह दृढ़ता नहीं है जो पीछे कदम रखना नहीं जानती, जो आदर्श को

एक बार पकड़कर फिर छोड़ना नहीं जानती तो तुम कुछ भी काम नहीं कर सकते। यह युग संघर्ष का युग है। जीवन-संग्राम में जो खींचा-तानी इस समय हो रही है उसमें वे ही सफल हो सकते हैं जो अपनी सारी शक्ति अपने काम में लगा देना चाहते हैं, जो उसी काम के लिये अपना जीवन संकल्प कर देते हैं। आधे मन से काम करने का फल भी अधूरा ही रहता है। नीति के भी ये ही वाक्य हैं—

निरुत्साहस्य दीनस्य शोकपर्याकुलात्मनः।
सर्वथा व्यवसीदन्ति व्यसनञ्चापि गच्छति॥

किसी ने कहा, भी है—

ये समुद्योगमुत्सृज्य स्थिता दैवपरायणाः।
ते धर्ममर्थं कामञ्च नाशयन्त्यात्मविद्विषः॥

नीति भी यही कहती है—

यत्रोत्साहसमारम्भो यत्रालस्यविहीनता।
नयविक्रमसंयोगस्तत्र श्रीरचला ध्रुवम्॥

यह बात मोटे-मोटे अक्षरों में लिख लो कि जितना प्रयास तुम करोगे उससे अधिक सफलता तुम्हें किसी उपाय से नहीं मिल सकती। जब तक हम अपने मन में यह बात जमा नहीं लेते तब तक हम इस जीवन-संग्राम मे पूर्ण तत्परता के साथ नहीं प्रवृत्त हो सकते। जब तक मनुष्य के दिमाग से यह बात दूर नही होती कि हमें किसी का आशाभरोसा नही करना चाहिए, किसी सुअवसर के लिये नहीं ठहरना चाहिए, अपने को बनाना या बिगाड़ना हमारे ही हाथ में है, तब तक वह अपना चरित्र-गठन नहीं कर सकता।

इस संसार में ऐसे आदमियो की भरमार है जो सहायता क लिये रास्ता दिखाए जाने के लिये, पीछे से ठेले जाने के लिये

चुपचाप बैठे हैं। पर सिवा अपनी योग्यता घटाने के वे और कुछ नहीं कर सकते। अगर किसी की सहायता से वे अपने लक्ष्य तक पहुँच भी गए तो उनमें योग्यता और दृढ़ता नहीं कि वे उसपर अड़े रहें। कितने लोगों को हमने कहते सुना है कि अगर मुझे अमुक व्यक्ति की भाँति अवसर मिला होता तो मैंने भी अमुक काम कर दिखाया होता। पर खेद इस बात का है कि मुझे किसी ने उस काम के योग्य बनने में सहायता नहीं की।

ऐसे लोगों से किसी तरह की आशा नहीं की जा सकती। इनके मार्ग में कितनी भी सुविधाएँ क्यों न रख दी जायँ ये उससे लाभ नहीं उठा सकते। काम करनेवाले दूसरे ही होते हैं। उनके मार्ग में कैसी भी बाधाएँ क्यों न हों, उन्हें कैसी भी असुविधाओं का सामना क्यों न करना पड़े वे आगे बढ़ते जायँगे।

इस देश में, जीवन-संग्राम में कितना भीषण संघर्ष है। शिक्षितों की अवस्था और भी खराब है। एक साधारण नौकरी के लिये कितनी अर्जियाँ आ जाती हैं! किसी कार्य को आरंभ करने के लिये कितने रुपये और पैसे की जरूरत पड़ती है। फिर भी लाखों गरीब किस मुसीबत के साथ अँगरेजी स्कूलों में शिक्षा पाते हैं। यदि उन्हें अपनी शक्ति पर भरोसा न रहे, यदि उन्हें इस बात की आशा न हो कि पढ़-लिखकर हम परिश्रम की बदौलत अपना बेड़ा पार कर ले जायँगे तो क्या वे उन रुपये पैसेवालों को देखते हुए एक दिन भी पढ़ाई के लिये इतनी कठिनाई झेलें। कितने तो ऐसे होते हैं जिनका इस संसार में कोई सहायक नहीं है बल्कि घर का बोझ सिर पर है। पर इन कठिनाइयों की वे कुछ भी परवा नहीं करते। वे दृढ़प्रतिज्ञ होकर जीवन-संग्राम के लिये अपने को तैयार ही करते हैं। वे कालेजों में पढ़ने जाते हैं, वकालत पढ़ते हैं। उन्हें वकालत पढ़ते देख कितने लोग उनकी हँसी उड़ाते हैं, क्योंकि वकालत पेशे में

सफलता पाना इस देश में टेढ़ी खीर हो रहा है। पर वे इसकी परवा नहीं करते। वे जानते हैं कि नीचे का आदमी जब कभी ऊपर उठना चाहता है तो यही हालत होती है। वे अपने संकल्प पर अटल रहते हैं और अंत समय तक निबाहते हैं। अगर उन्हें इस तरह आगे बढ़ना न पड़े, अगर कोई उदार मित्र उनका हाथ पकड़कर आगे कर दें तो हमारा यही कहना है कि थोड़े ही दिनों में समाज की दशा खराब और शोचनीय हो जायगी। "अपनी शक्ति पर भरोसा रखो। तुम देखोगे कि हृदय की प्रत्येक तंत्री से यही ध्वनि निकलती है।"

अबोध बालक को भी विश्वास पर ही चलना पड़ता है। अगर उसे विश्वास नहीं है तो वह कभी भी चलना नहीं सीख सकता। जमीन से खड़ा होने का उसे कभी साहस नहीं होगा, क्योंकि उसे डर रहेगा कि कहीं हम गिर न पड़ें। इस सम्बन्ध में छोटे-छोटे बच्चे और पशु जो प्रतिभा दिखलाते हैं वह बड़े बूढ़ों में भी देखने में नहीं आती।

तैराकी को लीजिए। इसका कुल दारमदार विश्वास पर है। अगर हमें यह विश्वास नहीं है कि जल में हमारा शरीर उतराता रहेगा तो हम पानी में कभी भी पैर न रखेंगे। हजारों आदमी केवल इसलिये डूब गए कि उन्हें अपनी शक्ति पर भरोसा नहीं था। उन्हें इस बात का विश्वास नहीं हुआ कि पानी में मेरा शरीर उतराता रहेगा। इसी डर से उन्होंने तैरना नहीं सीखा और डूब गए।

बाहरी सहायता की आशा छोड़कर मैदाने-जङ्ग में उतर आइए। आप देखेंगे कि भीतर से आपको अद्भुत सहायता मिलती है, जिसका आपने कभी अनुमान तक नहीं किया था। पर यह शक्ति आपकी सहायता के लिये अपना हाथ तभी बढ़ा सकती है जब आप किसी बाहरी सहायता का आशा-भरोसा

छोड़ देंगे और अपने बाहुबल के भरोसे अलग चट्टान पर जाकर खड़े हो जायँगे।

अपने पैरों खड़े होने का क्या फल होता है, इसके उदाहरण हमारे देश में कम नहीं हैं। अगर हम खोजकर निकालने जायँ तो इस देश में सैकड़ों उदाहरण प्रतिदिन मिलेंगे। फिर भी एक दो महान व्यक्तियों का उदाहरण दे देना ही उचित होगा। सबसे ज्वलन्त उदाहरण स्वर्गीय लोकमान्य का है। छोटी अवस्था में इनके पिता का स्वर्गवास हो गया। घर की कोई सम्पत्ति नहीं थी। विधवा माता का पालन करना पड़ता था, फिर भी महात्मा तिलक हताश नहीं हुए। बी. ए., एल. एल. बी. पास किया और फिर वे क्या-से-क्या हुए उसे बतलाने की आवश्यकता नहीं। यही बात सर आशुतोष मुकर्जी के बारे में कही जाती है। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर सड़क की लालटेनों की रोशनी में पढ़ते थे।

हमारा तो यहाँ तक कहना है कि वह मनुष्य संसार में सबसे अभागा है जिसे जीवन में यह अवसर नहीं मिलता कि वह अपने हृदय की छिपी शक्ति को प्रौढ़ कर सके अथवा अवसर मिलने पर भी ऐसा करने से वह वंचित रहे। एकाध उदाहरण के अतिरिक्त अधिकांश अवस्था में यही देखा गया है कि जिन्हें इस तरह की बाहरी सुविधाएँ मिल गई हैं वे अपने जीवन में कोई भी भारी काम नहीं कर सके हैं।

आत्मनिष्ठा को प्रौढ़ करने की उतनी ही आवश्यकता है जितनी आवश्यकता डाक्टर और वकील को अपने पेशे में चतुर होने की। विलासितापूर्ण जीवन बितानेवाला व्यक्ति कभी भी डाक्टर व वकील नहीं बन सकता।

मनुष्य-योनि में उत्पन्न होने का अभिप्राय यही है कि हम अपनी आत्मनिष्ठा का उद्बोधन करें। यह तभी साध्य है जब हममें पूर्ण दृढ़ता रहे।

जिन लड़कों का लाड़-प्यार अधिक होता है, जिनकी पग-पग पर देख-रेख होती रहती है, अर्थात् बिना नौकर या चपरासी के जो तिलभर भी हिल-डोल नहीं सकते, जिन्हें मानव समाज में आकर मिलने का अवसर कम ही मिलता है, ऐसे लड़के सदा बेकार, अयोग्य और वाहियात होते हैं। जिस बाप ने रुपये कमाने के फेर में अपने बेटे की परवाह नहीं की और जिस माता ने दुलार के वश अपने बेटे पर पानी की तरह रुपया बहाया, उस लड़के से खराब कोई दूसरा नहीं हो सकता। इस लड़के के मुकाबिले उन ग़रीबों का स्मरण कीजिये, जो अपने ध्येय तक पहुँचने के लिए अनेक तरह की विपत्तियाँ झेलते हैं और यातनाएँ सहते हैं।

जिस आदमी में उत्साह नहीं है, साहस की आग जिसके हृदय में नहीं जल रही है, जो अपने से बलिष्ठ शक्तिशालों का साधन समझता है, वह इस संसार में कुछ नहीं कर सकता। इस तरह के मानसिक भाव ही दासवृत्ति के द्योतक हैं और समता तथा स्वतन्त्रता के भाव विरोधी हैं। सोचने की बात है कि किसी में यह योग्यता कहाँ से आ सकती है कि वह तुम्हारे हृदय की बात समझे। इसलिए उसे इस बात का अधिकार कहाँ है कि वह तुम्हारे लिए कार्य-विवरण तैयार करे।

एक युवक ने मेरे पास पत्र भेजा है। उस पत्र में वह मुझसे पूछता है कि मैं आरं[illegible] प्रकार करूँ। जिस नवयुवक ने अपने जीवन का लक्ष्य [illegible] लिया है, जो अपने ध्येय तक पहुँचने के लिए हृदय [illegible] और अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहता है, [illegible] अनुभव नहीं कर सकता। जितने बड़े-बड़े लोग [illegible] दादाभाई नौरोजी से लेकर महात्मा गाँधी तक—[illegible] समय भी वर्तमान हैं और जिन्होंने अपने जीवन को सार्थक एवं सफल बनाया—उनमें

से एक ने भी इस तरह का प्रश्न किसी से नहीं किया था।

यह संघर्ष का युग है। इस युग में या तो हमें ठेलनेवालों में या ठेले जानेवालों में दो में से एक में अवश्य होना पड़ेगा। अगर हम किसी घटना के घटित करने का यत्न नहीं करते हैं तो वह घटना नहीं घटित हो सकती। काहिल और सुस्त आदमी जो अपने हृदय की अवस्था से भी परिचित नहीं है, जो सदा अस्थिर रहता है, जिसमें कार्य-दृढ़ता नहीं है, कभी भी कोई काम नहीं कर सकता। अगर तुम सचमुच कुछ करना चाहते हो तो तुम्हें उस शक्ति को जगाकर काम में लाना पड़ेगा जिसे ईश्वर ने तुम्हारे अन्दर भर दिया है! साथ ही तुम्हारे आस-पास जो शक्ति छितराई पड़ी है उसका भी प्रयोग करो।

जो तुम्हारे मार्ग का बाधक हो रहा है, जिससे तुम्हारे काम में अड़चन पड़ रही है वही तुम्हारा साधक हो सकता है, अगर तुममें आगे बढ़कर काम करने की तत्परता है।

आगे बढ़ने की क्षमता, चरित्र-बल, धुन, दृढ़ता आदि ऐसे गुण हैं जो घटना को आप-से-आप सामने बुलाते हैं। अगर चुपचाप बैठकर किसी की बाट देख रहे हो कि ठीक समय पर वह तुम्हें बतलाएगा कि किस तरह कार्य आरम्भ करना चाहिये अथवा आगे बढ़ना चाहिए तो तुम्हारी भी वही गति होगी जो तुम्हारे समान प्रतीक्षा करनेवालों की हुई है।

अगर हम कोई काम करना चाहते हैं तो हमें उसके लिये तुरत तैयार हो जाना चाहिए तब तो टूटे-फूटे हथियार से भी हम लड़ सकते हैं और उन्हीं से अपना काम चला सकते हैं। अगर हमारा शरीर उस जीवट से बना है जो किसी बाहरी सहायता की अपेक्षा नहीं करता, सदा अपने ऊपर निर्भर रहता है, बाधाओं और कठिनाइयों को देखकर घबराता नहीं तो यह अवश्य ऊपर उठेंगे।

स्वर्गीय लोकमान्य का कहना था कि ईश्वर सदा तत्पर का साथ देता है। बात भी ठीक है। जो अपने काम के लिए हर तरह से तैयार है, चौकन्ना है उसी का वह साथ देता है।

तुम्हारे सामने का द्वार तुम्हारे लिये बन्द है, क्योंकि तुम खोलने का साहस नहीं करते। तुम आकर द्वार पर बैठे हो कि ताली मिले तो इसे खोलें। इतने में दूसरा व्यक्ति जो तुमसे चलता-पुरजा है, तेज है आगे आता है और धक्का देकर दरवाजा खोलता है और घुस जाता है। जिसने दृढ़ संकल्प कर लिया है ताकत भी उसी का पक्ष लेती है।

जिस आदमी के हृदय में यह भाव उत्पन्न हुआ कि मैं अमुक काम के लिये विचार करूँगा अथवा चेष्टा करूँगा वह कुछ भी नहीं कर सकता। जिस हृदय में दृढ़ता है और संकल्प है उसे कोई भी नहीं रोक सकता। कितने नवयुवक इतने तत्पर होते हैं कि उन्हें रोकने का प्रयास करना भी बेकार हो जाता है। मैं एक लड़के को जानता हूँ। उसके मार्ग में हर तरह की असुविधाएँ हैं। न भोजन का ठिकाना है और न फीस का, फिर भी उसे डाक्टर होने की धुन पड़ी है और आशा है कि साल-भर में ही वह डाक्टर हो जायगा। हर तरह की कठिनाइयों को झेलकर भी उसने पढ़ना नहीं छोड़ा है। इसी तरह के और भी अनेक हैं। उनकी बदकिस्मती ने सब कुछ हर लिया है, पर उनके साहस पर वह हाथ नहीं लगा सकती है।

कितने ऐसे भी नवयुवक मिलते हैं जिनके सामने इस तरह की कठिनाइयां नहीं थीं फिर भी वे सफल नहीं हो सके। अपनी असफलता का कारण वे आराम को ही बतलाते हैं। वे कहते हैं कि अब हमारे विधाता ही वाम हो गए तो हमारे पुरुषार्थ से क्या हो सकता है। पर दृढ़ता जो काम उठाती है उसे कुछ भी असम्भव नहीं दिखाई पड़ता।

भाग्य-भरोसे जो रहता है वह भी इस तरह की बहाने-बाजियाँ पेश करता है, जिसने दृढ़ संकल्प कर लिया है उसके मार्ग में ये सब बातें नहीं आतीं। जिस भाग्य को तुम अपने भले-बुरे का विधायक समझते हो वह तुम्हारी ही कल्पना है। जो काम तुम करना चाहते हो उसका फलाफल भाग्य पर नहीं, बल्कि तुम पर निर्भर है। भाग्य ने जो पासा फेंका है उसे बदलने की तुममें शक्ति है, तुम्हें भी अवसर मिलते हैं, उनके प्रयोग की योग्यता के अनुसार ही तुम अपने भाग्य में हेर-फेर कर सकते हो।

एक आदमी सदा यही कहा करता था कि अगर मेरे सिर-पर गृहस्थी का बोझ न होता तो मैं संसार को जीत कर अपने वश में कर लेता, पर जिस अवस्था में मैं पड़ गया हूँ, कुछ नहीं कर सकता! भाग्यवश उस दिन वह अवसर उसे मिल गया। कुटुम्ब का भार उतर गया और उसे काम करने का अवसर मिला। तब वह कहने लगा—"मैं किस लिये परिश्रम करूँ? अगर इसका सुख भोगनेवाला मेरे कोई होता तो मैं काम करने के लिये उत्साह ग्रहण करता, पर जब मेरे आगे-पीछे कोई नहीं है तो मैं व्यर्थ परेशान क्यों होने जाऊँ।"

आलसी आदमी हमेशा कुछ-न-कुछ बहाना किया करता है। उसके मार्ग में सभी बाधायें दिखाई देंगी, जिन्हें वह नहीं पार कर सकता। पर जिसने दृढ़ संकल्प कर लिया है उसके कोश में 'बाधा' शब्द है ही नहीं। असुविधाएँ, विरोध, बाधा आदि से वह प्रौढ़ ही होता रहता है। वह अपनी धुन में इतना पक्का है कि उसका काम भाग्य से आप ही सरल होता जाता है। इसी तरह की दृढ़ता उच्च आत्माओं में पाई जाती है।

स्वर्गीय लोकमान्य में यही गुण था। महात्मा गांधी में यही गुण है। जो काम वे हाथ में लेते हैं उसके लिए हर तरह से

तत्पर रहते हैं। इसके लिये शिक्षा की जरूरत रहती है। और महात्मा भी फालतू समय को अध्ययन में ही लगाते हैं। अगर विपत्तियों और बाधाओं का भय महात्माजी के ऊपर भी वही प्रभाव डालता जो उसने अन्य भारतीयों के ऊपर डाला तो संसार की बातें जाने दीजिये इस देश में भी इनकी पूछ न होती। जैसे करोड़ों आदमी आए और गए पर उन्हें किसी ने नहीं जाना उसी तरह ये भी चले जाते किसी ने न जाना होता। पर उन्होंने देखा कि हृदय में कोई शक्ति बैठी हुई कह रही है कि तुम संसार का उद्धार करने के लिए आए हो और उन्होंने उसकी प्रेरणा के अनुसार काम करना आरंभ किया। जहाँ इनके साथियों ने निराशा का घोर अंधकार देखा वहाँ इन्हें आँख का निर्मल प्रकाश दिखलाई दिया। इनके जीवन की घटनाओं पर विचार कीजिये। आरंभ से लेकर आज तक एक गति रही है अर्थात ये विपत्तियों की परवा न करके सदा काम में तत्पर रहे हैं।

अगर हम इस डर से काम नहीं करते या काम में हाथ नहीं लगाते कि यह काम असंभव है और हमसे नहीं हो सकता तो हम अपनी योग्यता को कभी प्रस्फुटित नहीं कर सकते। इतिहास की घटनाओं का मनन कीजिए। आप देखेंगे कि प्रत्येक घटना एक समय असंभव ही प्रतीत होती थी। जो काम अधिकांश आदमियों को असंभव प्रतीत हुए उन्हें किसी-न-किसी ने संभव समझा और किया। यदि उसने भी असंभव समझ कर छोड़ दिया होता तो आज संसार न जाने कहाँ पिछड़ा रहता।

आधुनिक सभ्यता के प्रत्येक साधन के बारे में यही कहा जा सकता है। भाप से चलनेवाले इंजिन से लेकर हवाई-जहाज तक के संबंध में केवल यही बात चरितार्थ है। इन सब बातों की जिस समय कल्पना की गई थी लोग हँसी उड़ाते थे, पागल

कहते थे। आज तो भला हम लोग यह मानने भी लगे हैं कि विज्ञान से सब साध्य है। मनुष्य की कल्पना में जो बात आ सकती है उसे असंभव नहीं कह सकते। अब कोई भी व्यक्ति दृढ़ता के साथ यह कहते नहीं सुनाई देता कि यह असंभव है, यह नहीं हो सकता। केवल कमजोरों के मुँह से इस तरह की बातें निकलती हैं। साहसी आदमी के मुँह से इस तरह की बातें नहीं निकलतीं।

अब प्रयास से ही हम अपना संगठन कर सकते हैं। अगर बाधाएँ मार्ग में न रहें और हमें उन्हें दूर करना न हो तो उन्नति का मार्ग ही रुक जाय फिर तो सभी समान हो जायँगे। जो आदमी दूसरों के सहारे रहता है वह कभी भी पूर्णता को नहीं प्राप्त हो सकता। ऐसे लोगों के लिये अनुभव शब्द कुछ नहीं है। क्योंकि उनमें वह योग्यता नहीं आती जिसकी प्राप्ति केवल पुरुषार्थ से संभव है।

इस तरह के कितने ही आदमी प्रतिदिन मारे-मारे फिरते देखने में आते हैं। उनमें किसी तरह की योग्यता नहीं है और न उनके जीवन का कोई खास उद्देश्य है। कभी वे इस काम में हाथ डालते हैं तो कभी उस काम में। उन्होंने अपनी शक्ति को इतना पुष्ट नहीं कर लिया है कि वे ठीक मार्ग से चल सकें और अपने आदर्श तक पहुँच सकें। असल बात तो यह है कि उन्होंने कोई ध्येय ही नहीं बनाया है।

जैसे बिना दिशादर्शक यंत्र के जहाज निर्दिष्ट मार्ग से नहीं चल सकता और न निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच ही सकता है उसी तरह बिना किसी लक्ष्य को सामने रखकर चलनेवाला आदमी कोई काम नहीं कर सकता। अगर तुम संसार में कुछ करना चाहते हो तो अपने ध्येय को सामने रखो और कठिनाइयों को लाँघते हुए वहाँ तक पहुँचने का यत्न करो।

अगर तुम दूसरों के ही सिर पर खेलना चाहते हो, दूसरों के अनुभव से काम लेना चाहते हो, दूसरों के द्वारा परिष्कृत मार्ग पर चलना हो और अपनी शक्ति का संगठन नहीं करना चाहते, अपना चरित्र-बल प्रौढ़ नहीं करना चाहते, अपनी कार्य-क्षमता का विकास नहीं करते तो तुम इस संसार में क्षणभर के लिये भी नहीं ठहर सकते। यदि तुम वास्तव में किसी योग्य बनना चाहते हो तो तुम्हें एक भी अवसर नहीं खोना चाहिए जिससे तुम अपनी योग्यता बढ़ाने की संभावना देखते हो।

जिसके जीवन का कोई उद्देश्य नहीं है, और उसको सार्थक करने की शक्ति और तत्परता नहीं है उसका जीना न जीना बराबर है। जहाँ इस जीवन से संघर्ष और आगे बढ़ने की कल्पना मिटी यह जीवन भार हुआ। किसी उद्देश्य को लेकर काम करने में ही उत्साह मिलता है।

इस जीवन को सार्थक बनाने के लिये इसके लक्ष्य के सामने किसी महत् उद्देश्य का होना उतना ही आवश्यक है जितना कालिदास के शकुंतला नाटक के लिये राजा दुष्यंत। हमारी सार्थकता उसी उद्देश्य पर निर्भर है। अगर इस संसार में आकर हमने ईश्वर की प्रेरणा को अंशतः भी चरितार्थ नहीं किया, मानव समाज को एक भी नया संदेश नहीं दिया, संसार की कुछ भी सहायता नहीं की तो हमारा जन्म ग्रहण करना निष्फल है। अच्छा तो यह होता कि हम पैदा ही न होते।

हमारे लिये दो ही मार्ग हैं या तो दृढ़प्रतिज्ञ होकर काम करें और कुछ कर दिखाएँ अथवा उदासीन होकर पड़े रहें और संसार के साथ चलते चले जायँ। यदि हम गिरने से बचना चाहते हैं तो हमारे लिये केवल यही उपाय है कि हम आज ही

जल्दी और देरी की परवा न करके, अपने काम से पीछे नहीं हटेंगे और उसे पूरा करके ही छोड़ेंगे।

एक बात और। किसी काम में लगे रहने की दृढ़ता, तत्परता, दृढ़-संकल्प आदि का स्वास्थ्य से कम संबंध नहीं है। किसी हद तक तो शरीर-बल ही सबसे प्रधान है। जो बीमारियों का शिकार है वह कुछ नहीं कर सकता। इसी तरह मानसिक दुर्बलता भी उपेक्षणीय नहीं है, क्योंकि ईश्वर जन्म से किसी को शारीरिक या मानसिक दुर्बलता नहीं देता। वह तो बलिष्ठ और शांत-संपन्न ही पैदा करता है।

११

ईमानदारी और सचाई

भूमि कीतिर्यशो लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति हि ।
सत्यं समनुवर्तन्ते सत्यमेव भजेत्ततः ॥

सफलता की जड़ ईमानदारी है। चाहे तुम जीवन की किसी भी अवस्था में क्यों न हो, अगर तुम ईमानदार नहीं हो तो कुछ भी नहीं हो। इस संसार में ईमानदारी का मुकाबला करनेवाला कुछ नहीं है। ईमानदारी खरा सोना है जहाँ चाहो ले जाकर उसे भुना लो।

यह युग बेईमानी का युग है। इस समय चालबाजी और धोखेबाजी का बाजार गर्म है। अगर अत्युक्ति न हो तो निःसंकोच कहना पड़ता है कि आजकल व्यापार ही इस बेईमानी, चालबाजी और जुआचोरी पर चल रहा है। फिर भी ईमानदारी और ईमानदार की कदर सबसे अधिक है। बल्कि आजकल इसकी मर्यादा और भी बढ़ गई है और दिन-दिन बढ़ती जा रही है। शायद ऐसा समय कभी नहीं आया था जब व्यवसाय में ईमानदारी की इतनी अधिक कदर थी।

आजकल के नवयुवक चरित्र को कुछ समझते ही नहीं हैं, उसे एकदम गौण मानते हैं। उनका प्रधान लक्ष्य फुर्तीलापन, चतुराई, सूझ, चालाकी और प्रभाव पर रहता है। ईमानदारी और सचाई को तो वे कुछ मानते ही नहीं।

किसी समय व्यवसाय में उस आदमी का सबसे अधिक कदर थी जो बहुत तेज और चालाक समझा जाता था और दूसरों से अधिकाधिक लाभ उठा सकता था। पर आज वह बात नहीं रही। अगर हमने समाज को अपनी ईमानदारी, नेकनीयती और सच्चरित्रता का पूरा विश्वास दिला दिया तो निश्चय जानिए कि हमारा आरंभ बहुत अच्छा हुआ है। अब हमारे मार्ग में किसी तरह की कठिनाई नहीं रह सकती।

संसार का अधिकतर काम ख्याति (नाम) पर चलता है। इसी के अनुसार बाजार में साख चलती है। किसी के साथ कारबार करने में लोगों के दिल में पहली बात यही आती है कि क्या यह ईमानदार है ? क्या इसकी बातों पर भरोसा किया जा सकता है ? क्या यह अपनी बात पर रहेगा ? इन्हीं बातों के संतोषजनक उत्तर पर किसी की साख निर्भर है।

किसी बड़े भारी बंक का कहना है कि केवल बात पर करोड़ों रुपये फेंक दिए जाते हैं। आज भी ऐसे अनेक आदमी हैं जो अपनी हैसियत से एक पाई भी अधिक लेना नहीं चाहते। इसी तरह एक दूसरे बंक का कहना था कि यदि एक ग़रीब ईमानदार और एक जुआचोर धनी मेरे यहाँ उधार लेने आए तो मैं उस ईमानदार गरीब को ही रुपया उधार देना अधिक पसंद करूँगा।

मैं दो रोजगारियों को जानता हूँ। उनकी हैसियत दस हजार रुपये की भी नहीं है पर वे लाखों का कारबार करते हैं क्योंकि बंकों में उनकी साख है। उनकी सफलता की कुंजी उनका चरित्र है।

हार्वर्ड के प्रसिद्ध राष्ट्रपति इलियट महोदय का कहना है कि तुम्हारे समय के लोग तुम्हारे संबंध में क्या राय रखते हैं, यह तुम्हारे लिये सबसे बड़ी बात है। इससे हमारा अभिप्राय यह नहीं है कि तुम्हारे जान-पहचानवाले तुम्हें कैसा समझते हैं। कितने तो

तुम्हें जानते ही न होंगे, देखा भी न होगा। केवल सुन-सुनाकर अपनी राय कायम कर ली होगी, पर यह है सबसे जरूरी।

असहयोग आंदोलन पूर्ण विकास पर था। देश बेरोक टोक आगे बढ़ता जा रहा था। बारडोली में सत्याग्रह की तैयारी हो चुकी थी। एक दिन और,बस फतह अपनी थी। इसी समय देश के एक कोने से भयानक घटना का समाचार मिला। एक अठारह वर्ष के लड़के ने लिख भेजा, अगर यहाँ की अमानुषिक घटना का हृदय विदारक दृश्य 'बापू' अपनी आँखों से देख लें तो जलियाँवाला के हत्याकांड को भूल जायँ। 'महात्माजीने वहीं से पैर पीछे हटाया। लोगों ने लाख सिर पीटा, पर किसी की एक न चली। क्यों ? इस लड़के की बात को इतना भरोसा था कि जो कुछ वह कहता है सच कहता है और इसी एक विश्वास ने इतना भारी संग्राम पल-भर में स्थगित कर दिया।

ईमानदारी और निष्कलंक जीवन के समान मनुष्य का सहायक और कुछ नहीं हो सकता। सचाई के समान पोख्ता दूसरा गारा नहीं। अगर तुमने यह दृढ़ कर लिया है कि किसी भी अवस्था में हम झूठ नहीं बोलेंगे तो तुम्हारा जो उपकार होगा किसी दूसरी बात से नहीं हो सकता। ईमानदारी और सचाई जीवन की नींव को प्रौढ़ कर देती है।

महात्मा गाँधी ने वकालत पेशे में यह सिद्धांत बना लिया था कि चाहे हमें एक पैसे की भी आमदनी न हो, पर हम झूठा मुकदमा हाथ में न लेंगे। झूठा मुकदमा लेकर, जिस समय मैं इजलास पर खड़ा होकर बहस करना आरंभ करूँगा मेरी आत्मा कहेगी,'गाँधी ! तू झूठा है तू झूठा।' उस समय मैं सब कुछ भूल जाऊँगा और यही बात मेरी जबान से जोर से निकल पड़ेगी।

महात्माजी की सफलता की कुंजी क्या है ? केवल ईमानदारी। उनकी बात लोग इसीलिये मानने को तैयार हो जाते हैं कि लोग

जानते हैं कि जो कुछ वे कहते हैं सच समझकर कहते हैं। लोगों ने देखा है कि वे जितने तत्पर हैं उतने ही ईमानदार और सिद्धांतों के कट्टर हैं। उनसे उन्हें कोई भी शक्ति हटा नहीं सकती। इसी ईमानदारी और तत्परता के कारण भारतवासी आज उन्हें ईश्वर समझते हैं चाहे कोई कुछ भी कहे जनता का विश्वास नहीं डिग सकता।

ईमानदार आदमी सदा सच बोलता है। सचाई ईश्वर की आवाज है। सच बोलनेवाला आदमी सदा पक्षपात रहित होता है। जो कुछ वह कहता या करता है, व्यक्तित्व का ख्याल रखकर नहीं कहता, नहीं करता। उसका लक्ष्य तो सिद्धांत रहता है।

किसी एक आदमी की बात औरों की बात के सामने क्यों इतनी मानी जाती है? क्योंकि लोग समझते हैं कि वह सच कह रहा है। नीति भी यही कहती है—

ये वदन्तीह सत्यानि प्राणत्यागेऽप्युपस्थिते।
प्रमाणभूता भूतानां दुर्गाण्यतितरन्ति ते॥

उसी के ऐसा दूसरा आदमी वही बात उस ढङ्ग से कहता है पर लोगों का दिल नहीं भरता, उसका कुछ असर नहीं पड़ता। क्योंकि लोग जानते हैं कि इस आदमी का कोई सिद्धान्त नहीं है, इसकी बातों का कोई एतबार नहीं है। चाहे आप नेता हों, या वकील हों, डाक्टर हों, या सौदागर हों, या कारखानेदार हों आपकी सफलता आपकी बातों पर निर्भर करती है। कितनी कंपनियाँ खुलती हैं और पूँजी का अभाव न होने पर भी नहीं चलतीं, क्योंकि जनता उसके संचालकों का भरोसा नहीं करती।

केवल रुपया पैदा कर लेना ही सब कुछ नहीं है। अगर रुपया पैदा करने की चिंता में हमने अपना चरित्र बिगाड़ डाला तो हमने बड़ा बुरा सौदा किया। बेईमान, चालबाज, जुआचोर आदमी से बुरा इस संसार में कोई नहीं है।

इससे हमारा यह मतलब नहीं है कि रुपया कमाना हमारा लक्ष्य नहीं होना चाहिए। यह सबके लिए आवश्यक है, पर रुपये की धुन में हमें अपना चरित्र नहीं बेच देना चाहिये। यह अभीष्ट नहीं है। 'आदमी अपने पेशे में तो चतुर है, पर व्यवहार का लचर है' यह बात सुनने में कितनी लज्जाजनक मालूम होती है।

धनिकों में अधिकांश ऐसे ही पाए जायँगे जिनमें चरित्रबल का सर्वथा अभाव है। चाहे उनके घर में अतुल सम्पत्ति ही क्यों न भरी हो, पर उनके पीछे कोई उनका नाम तक नहीं लेता। उनका अनुसरण कोई भी नहीं करना चाहता।

संसार धन का गुलाम नहीं है; आदमीयत का गुलाम है, ईमानदारी का गुलाम है, सचाई का गुलाम है। हम लोग आदमी की उपासना करते हैं, रुपये-पैसे की नहीं।

संसार में जितने बड़े आदमी हो गए हैं उनके जीवन-चरित्र का अध्ययन कीजिए, आप देखेंगे कि उनके पीछे कोई असाधारण शक्ति थी। आप देखेंगे कि व्यावसायिक उन्नति के सिवा उनके पीछे और भी कुछ था अर्थात् सचाई और ईमानदारी। उन्होंने सदाचार को रुपये क्या प्राणों से बढ़कर समझा। उनसे बातचीत कीजिये, आपको मालूम हो जायगा कि आप रुपये से उन्हें वश में नहीं कर सकते। वे अपने व्रत में हिमालय से भी कड़े हैं।

उन्हीं में से एक महात्मा गाँधी हैं। जिस समय उन्होंने सत्याग्रह का बीड़ा उठाया था वे समझते थे कि इसके लिये क्या क्या झेलना पड़ेगा। उन्होंने उसे झेला, पर एक कदम भी पीछे नहीं हटाया। उन लोगों ने सिद्धान्त के लिये अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया है, जेल गये हैं, प्राणों को भी संकट में डाला है।

सदाचार के संसार की यही व्यवस्था है कि अगर आदमी

प्रवेश करना चाहता है तो उसे सच बोलना होगा। प्रकृति के नियम सदा झूठ और दगाबाजी का गला घोंटने के लिये तैयार रहते हैं, अन्तिम विजय सदा सच्चे को मिलती है। किसी व्यक्ति का जीवन अन्त तक देखिए आपको मालूम हो जायगा कि उसकी चालाकी, चातुरी, फुर्तीलापन, आदि अन्त में कोई काम नहीं देता।

किसी दूकानदार को ले लीजिए। अगर वह ईमानदारी से सौदा बेचता है तो दूर-दूर से भी लोग उसी की दूकान पर आते हैं। क्यों? लोग जानते हैं कि एक बच्चा भी पैसा फेंककर बराबर चीज ला सकता है। अगर किसी तरह की भूल हो गई है तो ठीक कर दी जा सकती है। बात छोटी है, पर मार्के की है। चुनार में एक बिसाती है। आस-पास के गाँवों में उसका नाम प्रसिद्ध है। लोग राह-चलते को भी पैसा देकर कह देते हैं, 'भैया! साव की दूकान से दो पैसे का नमक ले लेना।' क्योंकि लोग जानते हैं कि साव डाँड़ी नहीं मारते, धूर नहीं तौल देते, धोखा नहीं देते।

संसार में जहाँ-कहीं दो आदमियों का संसर्ग रहेगा, वहीं ईमानदारी और सचाई की आवश्यकता पड़ेगी। यह गुण इतना प्रबल है कि अपनी छाप सबपर लगा देता है यहाँ तक कि यह और सब कमी पूरी कर देता है। चाहे हममें कितनी भी कम योग्यता क्यों न हो, अगर हम ईमानदार हैं तो हमारा मार्ग खुला है, हम सदा आगे बढ़ते जायँगे। क्योंकि इससे एक तो हमारा मन स्थिर रहता है, दूसरे अन्य लोग हमारा विश्वास करते हैं और ये ही तो सफलता की कुंजियाँ हैं।

ईमानदारी और सचाई हृदय के सच्चे उद्गार होने चाहिएँ। केवल सांसारिक लाभ होते देखकर इन्हें अपनाने में चरित्र-बल नहीं मिल सकता।

केवल बुराई न करना ही सच्चरित्रता की निशानी नहीं है। उसके प्रतिकूल आचरण से ही चरित्र-बल बढ़ता है। चरित्र-बल क्रियात्मक है, निषेधात्मक नहीं। बुरी बातों को छोड़ने से ही काम नहीं चल सकता। ये तो चरित्र-गठन के प्रकारांतर के साधन हैं।

बुरा न होकर भी एक आदमी भला नहीं हो सकता। वह बुराई न भी करता हो तो संभव है कि वह कभी-कभी ईमानदारी के पथ से बहक जाय। एक मित्र ने मेरे पास लिखा था कि वर्तमान समय के धर्माध्यक्ष इतने अच्छे हैं कि बेकार हैं! लकीर के वे इतने कट्टर फकीर हो रहे हैं कि कोई काम करने नहीं देते। परिणाम यह हो रहा है कि समाज उनसे विमुख होता जा रहा है। समाज जबानी जमाखर्च का पक्षपाती नहीं है। वह तो सब बातें प्रत्यक्ष देखना चाहता है।

हमने कितने आदमियों को बड़े अभिमान के साथ कहते सुना है, "हमारे लड़के में एक भी दुर्गुण नहीं है। न तो सिगरेट तंबाकू पीता है, न नशा-पानी खाता है और न झूठ बोलता है। गंदी बात भी कभी मुँह से नहीं निकालता।" पर हमने देखा है कि इतने निषेधात्मक गुणों के होते हुए भी ऐसे लड़के सदा कमजोर पाए गए हैं। ऐसे बहुत-से लोग मिलेंगे जिनमें किसी तरह का दुर्गुण नहीं है, फिर भी वे किसी योग्य नहीं। उनकी कोई गणना नहीं। उनका कहीं भी प्रभाव नहीं पड़ सकता।

जिनकी सदाचारिता का कुछ मूल्य है, इसके लिये जिनकी कुछ कदर है, उनका चरित्र-गठन केवल बुरी आदतों से दूर रहने से नहीं हुआ है। उन्होंने अच्छी आदतों पर अनवरत आचरण किया है। जिस सिद्धांत को उन्होंने उठाया है उसे अंत तक पाला है। उन्होंने सचाई को पूर्ण तत्परता के साथ अपनाया

है। क्रियात्मक की कदर है, केवल निषेधात्मक होने से काम नहीं चल सकता।

जिस मनुष्य के पास केवल इन गुणों के और किसी तरह की योग्यता नहीं है, उसे चाहिए कि वह अपना यश इस तरह स्थापित कर दे कि लोग उसके गुणों को समझने लगें। अगर उसने ऐसा नहीं किया है तो उसके गुण बेकार हैं। जिस दिन लोगों को मालूम हो जायगा कि यह आदमी ईमानदार और सच्चा है, अपने उसूलों का पक्का है, साहसी है, दृढ़व्रती है, धुनी है, सचाई, ईमानदारी तथा न्याय के नाम पर लड़ने से नहीं डरता, वह सदा सचाई की ओर दौड़ता है, उस दिन लोग उस पर भरोसा करेंगे और उनका आदर करेंगे।

नवयुवक को संसार में प्रवेश करने के पहले दो प्रमाण-पत्र अवश्य ले लेने चाहिए। पहला ईमानदारी का और दूसरा तत्परता का। अगर चरित्र पर किसी तरह का धब्बा नहीं है और सौदा साफ हो रहा है, किसी तरह का कटाक्ष नहीं किया जा रहा है तो उसके मुकाबिले में किसी बात की गणना नहीं है। जिस समय हम अपने अतीत जीवन की ओर दृष्टि फेरते हैं और देखते हैं कि वह सदा निष्कलंक रहा है तो हमें कितनी शांति मिलती है? क्या इस तरह की शांति प्रत्येक प्राणी के लिये अभीष्ट नहीं है?

१२

कठिनाई का भय

एक दिन मैं अपने एक व्यापारी मित्र से मिलने गया। वे बड़े भारी व्यापारी हैं और सब कुछ अपने हाथों से कमाया है। मैंने देखा कि उनके सामने की दीवाल पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा है, 'सबसे मुश्किल काम सबसे पहले करो'। मैंने उनसे इसका अभिप्राय पूछा। वे कहने लगे—काम टालने की मुझ में बड़ी बुरी आदत पड़ गई थी। जिस काम में मेरा मन नहीं लगता था, अथवा जो काम मुझे कठिन मालूम होता था, उसे मैं सदा दूसरे दिन के लिए टाल देता था। इससे मुझे अनेक तरह की कठिनाइयों में पड़ना पड़ता था। तब लाचार होकर मैंने यह लिखकर आँख के सामने टाँग दिया। धीरे-धीरे मैं पिछड़े हुए काम को सँभालता गया और आज मेरी यह दशा है कि सबसे कठिन काम पर मेरी दृष्टि सबसे पहले जाती है। जिन कामों को आगे कठिन और दुःसाध्य समझकर मैंने टाल दिया था, उन्हें जब मैंने दृढ़ता और तत्परता के साथ हाथ में लिया तो मुझे मालूम हुआ कि वे बड़े ही सहल काम हैं। यही मेरी सफलता का रहस्य है।

कितने लोगों को विफल होने का यही कारण होता है कि वे जिस काम को कठिन अथवा रूखा समझते हैं, नहीं करते। जिसे करने में उनकी तबियत लगती है अर्थात् जो बहुत ही सरल है, उसे तो वे तुरत उठा लेते हैं और कड़े काम को टालते

जाते हैं और उसे टालने की भी कोई नियत अवधि नहीं रहती। साथ ही-साथ रोज-रोज आनेवाली कठिनाई उनके मस्तिष्क पर इतना अधिक प्रभाव जमाती है कि वे परेशान हो जाते हैं। पर उस समय उनको समझ में यह बात नहीं आती कि इस तरह की प्रतीक्षा और जी चुराना योग्यता का घातक है और बल को घटा देता है। ऐसे आदमी के सिर पर एक बोझ पड़ा रहता है कि अमुक काम अभी तक करना है। इसका असर उसके मन पर पड़ता है और उसका मिजाज चिड़चिड़ा हो जाता है, मन की ताजगी, सरसता और सरलता का लोप हो जाता है।

जिन्हें जीवन में सफलता नहीं मिल सकी है अर्थात् जो निष्फल रहे हैं उनके जीवन का इतिहास उठाकर पढ़िए। मालूम होगा कि उनकी विफलता का एकमात्र कारण यही रहा है कि वे अपने जीवन में कड़े और कठिन एवं नीरस काम को सदा टालते गए हैं और उसे करने से जी चुराते रहे हैं। यह सबसे भारी भूल है। इंद्रियों के धीरे-धीरे प्रयोग से ही हममें पूर्ण योग्यता आती है और इसका अंतिम फल भी यही है।

ऊपर हमने जो कुछ लिखा है उससे हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि हम अपने कामों का कठिनाई के हिसाब से क्रम बाँध लें और उन्हें करना शुरू करें। हमारे कहने का अभिप्राय केवल इतना ही है कि जो कठिन काम हमारे हाथ में आ जाय उसे छोड़ना नहीं चाहिए। हम उससे जितना जी चुराएँगे वह उतना ही कठिन प्रतीत होगा। जो आदमी इसी तरह की आदत डाल लेता है, उसमें वह दृढ़ता और ताकत नहीं रह जाती कि समय पड़ने पर कठिन काम कर ले।

अभी हाल में ही एक आदमी की निंदा में यह समाचार निकला था कि वह अपनी बात का धनी नहीं है। कठिन काम

करने का उसे साहस नहीं है वचन तो उसने दे दिया, काम भी बुरा नहीं है। पर उसमें शक्ति नहीं है कि वह हाथ लगाए। ऐसे आदमियों की कमी नहीं है। वे आगे तो बड़े उत्साह के साथ सदिच्छा से आते हैं, पर जिस समय काम करने का समय आता है वे बगलें झाकने लगते हैं और सबसे सहल काम में ही हाथ लगाते हैं। वे लोग सोचते हैं कि जिस तरह वचन दिया है उसी तरह उसे तोड़ भी सकते हैं। पर जल्दी अथवा देर में भाग्य अपना कड़ा पंजा हमारी गर्दन पर रखता है और धक्का देकर हमें बाहर निकाल देता है।

एक आदमी की यही हालत थी। वह प्रत्येक काम के दोनों पहलुओं को समझ लेता था। जो पहलू उसे सहल मालूम होता उसी से चलता, चाहे वह सही रहा हो या गलत। परिणाम यह हुआ कि जन्मभर उसके चरित्र का गठन नहीं हुआ। समस्त जीवन उसने हाय-हाय में बिताया, पर कहने लायक एक भी काम नहीं किया। उसे कभी भी अवकाश नहीं मिला। जो कुछ उसने किया है उससे चरित्रहीनता का परिचय मिलता है। यह बुरी आदत उसे स्कूल से ही पड़ गई थी। वही आज तक चली आ रही है। परिणाम यह हुआ है कि समाज में उसकी गिनती नहीं है। आवश्यकता पड़ने पर उसकी सहायता की कोई भी आशा नहीं करता।

अगर हम काम करना चाहते हैं और इस संसार में कुछ ख्याति पैदा करने के भी इच्छुक हैं तो हमें काम से जी नहीं चुराना चाहिए। बिना इस तरह काम किए तो हममें योग्यता आ नहीं सकती। फिर लोग ऐसा करते क्यों हैं? केवल इसलिए कि वह काम बहुत ही कड़ा है और कठिन परिश्रम की आवश्यकता है और उससे वे भागते हैं।

जो नवयुवक इस संकल्प से जीवन में प्रवृत्त होता है कि

हम अपनी परिस्थिति से पूर्ण लाभ उठाकर जीवन की अंतिम सीढ़ी पर पहुँचेंगे, वह किसी भी काम से मुँह न मोड़ेगा, जिससे वह ऊपर उठने की संभावना देखता है। पर इसके प्रतिकूल हमलोग प्रतिदिन देखते हैं कि सैकड़ों नवयुवक इसके विरुद्ध आचरण करते हैं। जानते हैं कि 'कड़ुवी औषध बिन पिए मिटे न तन की ताप' और फिर भी कड़ुआपन का स्मरण कर पीछे हट जाते हैं।

मजबूत होने, दृढ़ होने और शक्ति संपादन करने का—जिससे हमारा चरित्र गठन हो सकता—एक ही तरीका है कि हमलोग 'कड़ुवी औषध' को आँख मूँदकर पी जायँ। अगर आँख मूँदकर उसे एक घूँट में पी जायँ तो इतना बुरा न लगेगा।

सब बात मन की स्थिति पर निर्भर है। काम हाथ में लेने के पहले ही अगर तुम्हारे मन में यह विचार पैदा हुआ कि हम इस काम को उठाने के योग्य नहीं हैं तो तुम्हारी असफलता अनिवार्य है। संसार में कोई भी कठिनाई या जटिलता नहीं है, जिसे सुलझाने का साधन भी न तैयार हो, अगर तुमने पहले ही सोचना-विचारना आरंभ कर दिया तो तुम्हें ऐसी-ऐसी विपत्तियाँ दिखाई देंगी, जिनका कहना नहीं, पर तुम्हें काम करते समय कभी भी उनका सामना नहीं करना पड़ेगा। जो काम हाथ में उठाओ, देख लो कि उससे तुम्हें क्या लाभ है, तुम्हारी मर्यादा कहाँ तक आगे बढ़ती है, तुम्हारे अनुभव में क्या जुड़ता है, तुम्हारे चरित्र में कितनी दृढ़ता आती है। अगर तुम्हें लाभ की संभावना दिखाई दे तो उसे फौरन हाथ में ले लो।

हम लोगों में से अधिकांश आदमियों की कमजोरी का यही कारण है, कि वे कठिन और नीरस काम करने से सदा जी चुराते हैं। जो काम करने में उन्हें तकलीफ मालूम होने की संभावना है, या उनके आराम में खलल पहुँचने की संभावना

है, उसे वे छूना भी नहीं चाहते। इसका परिणाम यह होता है कि उनका चरित्र चंचल और संकल्प ढीला हो जाता है तथा उनमें दृढ़ता नहीं रहती।

हाथ में फोड़ा हो गया है। चीरा लगवाने की आवश्यकता है। पर डर के मारे चीरा नहीं लगवाते और महीनों हाथ को लेकर पड़े रहते हैं। यह भी वे जानते हैं कि चीरा लगवाने के बाद १० मिनिट भी दर्द नहीं रहेगा, पर वे चीरे के दर्द की कल्पना से ही पस्त हो जाते हैं। इसलिए जब तक हर तरह से लाचार नहीं हो जाते, वे उस दुखदायी काम में नहीं पड़ना चाहते। इसी कारण कितनी जानें चली गई हैं, क्योंकि टालते-टालते विष सारे शरीर में फैल गया और अन्त में देखा गया कि चीरा लगाना बेकार है। इस तरह कितने आदमी ऐसे निकलेंगे जो आज साधारण चीरा लगवाना नहीं स्वीकार करते, पर आगे चलकर उन्हें पूरे हाथ से हाथ धोना पड़ता है।

कठिन कामों की कठिनाई की कल्पना करके हम लोग कितनी मानसिक पीड़ा उठाते हैं और टालते-टालते उन्हें इतना कठिन बना देते हैं कि फिर उनका करना भी असंभव हो जाता है। इस तरह की डरावनी बातें हमारे मन पर विकार डालती चली जाती हैं। हमारा सुख हर लेती हैं। इसे कभी भी शान्ति नहीं मिलती। अवकाश का समय भी शान्ति से नहीं बीतता क्योंकि जिस काम को कठिन समझ कर 'हमने टाल दिया है वह सदा बोझ की तरह लदा रहता है। स्मृतिपथ से कभी भी दूर नहीं होता।

जो आदमी अपनी अवस्था पर सदा शंका करता है, इस शरीर पर दया दिखलाना चाहता है, इसे कठिनाई में नहीं डालना चाहता वह इस जीवन में कुछ नहीं कर सकता। जो आदमी सफल होना चाहता है उसे उतने ही परिश्रम से काम

करना पड़ेगा जितने परिश्रम से वह दूसरों से ले सकता है। चाहे उसे काम भाए या न भाए पर यदि वह सफल होना चाहता है तो उसे हर अवस्था के लिए तैयार रहना पड़ेगा। इस तरह की आदत हमें लाभ की आशा है, उसकी रुखाई और निरसता पर हमें कभी भी ध्यान नहीं देना चाहिए, हमें उसे तुरत करने की आदत डालनी चाहिए, इससे हमारी उत्तरोत्तर बढ़ती होगी।

भला चंगा रहना किसे प्रिय नहीं है? सब कोई जानते हैं कि सुख और शान्ति का यही मूल है। पर कितने ऐसे लोग हैं जो अपना स्वास्थ्य ठीक बनाए रखने के लिए जीभ के स्वाद पर काबू रखने को तैयार हैं? थोड़ी कसरत तक करना नहीं चाहते। इसे झंझट या जंजाल समझते हैं। वे सब काम अपनी इच्छा के अनुसार करना चाहते हैं। जो जी में आए खाना चाहते हैं, पहनना चाहते हैं, चाहे वह उनकी शारीरिक स्थिति के अनुकूल हो या नहीं। परिणाम यह होता है कि अधिक लोग ऐसे ही मिलते हैं जिनका स्वास्थ्य देखने ही काबिल होता है। जीते हुए भी मरे के समान हैं।

कितने नवयुवक ऐसे हैं जो पढ़ना तो चाहते हैं, पर परिश्रम करना नहीं चाहते। साथियों के साथ बातचीत करने में जो समय बीतता है उसे पढ़ने में लगाना वे नहीं चाहते। अगर किसी युक्ति से उन्हें शिक्षा दे दी जाय तो वे उसे ग्रहण करने के लिये तैयार हैं, पर वे सीधा परिश्रम करके प्राप्त करने का मार्ग नहीं पकड़ना चाहते। वे अपनी स्वच्छन्द प्रवृत्ति को बंधक रखकर विद्या सीखना नहीं चाहते। यह उन्हें मंजूर नहीं है।

कितने ऐसे हैं जो जानते हैं कि कसरत करने से स्वास्थ्य ठीक रहेगा पर उस बंधन में पड़ना नहीं चाहते। लाचार होकर जितना कड़ा काम उन्हें करना पड़ता है उससे कड़ा काम वे

नहीं करना चाहते और सदा सहायक के लिए ताक लगाये रहते हैं। पर इस तरह के काम की कोई गणना नहीं है। यह ठीक मार्ग नहीं है। इससे हमारी अभिलाषा पूरी नहीं हो सकती।

हममें से अधिकांश की यही हालत है कि हम लोग अपने आराम को गँवाकर कोई काम नहीं करना चाहते। कम मेहनत कर बुरी चीज ग्रहण करना हम लोग अधिक अच्छा समझते हैं। परिणाम यह होता है कि हम लोग दूसरे या तीसरे दर्जे तक ही रह जाते हैं।

जिससे काम करना है, जिसने काम करने का दृढ़ संकल्प कर लिया है, फिर कठिनाई की बाधा उसके मार्ग को नहीं रोक सकती। असहयोग आंदोलन को ही ले लीजिए। कितनी बाधाएँ राह में थीं। कितने लोग इसके विरुद्ध थे। पर महात्माजी दृढ़ थे, कटिबद्ध थे। क्या अगर कठिनाइयों और बाधाओं का ख्यालकर महात्माजी ने आगे हृदय न बढ़ाया होता तो यह होना कभी भी साध्य था? क्या इतनी जागृति देश में संभव थी?

जीवन की अंतिम सीढ़ी तक कितने लोग पीछे पड़े रहते हैं, सफलता नहीं प्राप्त कर सकते। इसका एकमात्र कारण यही है कि उन्होंने ठीक मार्ग को छोड़ दिया है। वे पगडंडियों के फेर में रह गए हैं और कठिनाइयों से बचने के लिए सीधे मार्ग को छोड़कर तिरछे मार्ग से चल निकले हैं। पर जो दृढ़ है जिसने निश्चित संकल्प कर लिया है वह तो आँख मूँदकर सीधे रास्ते पर चलता है और अपने लक्ष्य पर पहुँचता है। पर वह दुर्बल और कमजोर आदमी, जिसमें दृढ़ता और अध्यवसाय नहीं है जो कठिन और नीरस काम से अलग रहना चाहता है, जो अपने सुख और आराम को त्यागना नहीं चाहता, जो विघ्नबाधाओं के नाम से ही घबराता है और इसीलिये बाँके तिरछे रास्ते से

अथवा पगडंडियों से जाता है, वह अपने ध्येय तक नहीं पहुँचता और अगर पहुँचता भी है तो बहुत देर के बाद।

जिन्हें आज तक निराशा ही देखनी पड़ी है अगर वे एक महीने भी अध्यवसाय से काम लें और दृढ़ संकल्प कर लें कि एक महीने तक हम बिना इधर-उधर देखे काम करते रहेंगे और नीरस सरस की परवा नहीं करेंगे, बल्कि वही काम करेंगे जो हमें अधिक लाभदायक प्रतीत होगा, तो निश्चय है कि उन्हें नया साहस और प्रोत्साहन मिलेगा और उसका फल उन्हें तुरत दिखाई देगा। जिन्होंने सफलता पाना ही निश्चित कर लिया है वे कठिनाई और बाधाओं की परवा नहीं करते, उनका सारा लक्ष्य ध्येय पर रहता है और वे सीधे उसी ओर चलते हैं।

कठिन काम को करने का केवल एक तरीका है। उसे तुरत कर डालो। तुम्हारे मन पर वह अपना विषैला प्रभाव न जमाने पाए और तुम उसके दाँत तोड़ दो। इससे तुम्हें जो संतोष होगा, कठिन कामों को तुम जिस आसानी से कर सकोगे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। कठिन काम को टाल देना उसके बल को दुगुना बढ़ाना है और दूना परिश्रम करना है।

प्रत्येक व्यक्ति को उचित है कि वह अपने दरवाजे पर यह लिखकर लटका दे कि यह काम अभी करो। इसमें जरा भी देर नहीं होनी चाहिए। इससे बड़े-बड़े लाभ हुए हैं। अनेक बंकों का दिवाला निकलते-निकलते बच गया, लोगों ने बड़े-बड़े काम कर डाले। कितने लोगों की आदत है कि वे 'अभी करते हैं' के आदी पड़ जाते हैं। इससे उन्हें भीषण क्षति उठानी पड़ता है। खेत में मेड़ बांधनी है; 'अभी बाँधते हैं' कहकर बैठ गए और जानवर घुसकर खेत चर गए। अभी वैद्य के यहाँ जाते हैं और इधर रोगी मर गया। इससे आराम अवश्य मिलता है, पर इसी नीति से मनुष्य का जीवन एकदम नष्ट हो जाता है।

इस तरह सहज काम हाथ में लेना और कड़े से जी चुराना भी एक तरह का नशा है। अगर तुम इस तरह की आदत को दूर नहीं करते तो तुम जीवन को उत्कृष्टता में पहली सीढ़ी से आगे नहीं बढ़ सकोगे।

जो आदमी हर तरह के कामों को करता रहता है, वह अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर लेता है। उसे यह बात सोचने की आवश्यकता ही नहीं रहती कि यह काम हम कर सकेंगे या नहीं। वह तो यह देखता है कि यही सबसे उत्तम काम है या इससे भी उत्तम कोई काम है। वह तो केवल यह देखेगा कि उसका उत्थान किस काम से होता है। अपने ध्येय को लेकर वह एक कदम आगे किस तरह बढ़ता है।

कितने लोगों को सभा में बोलते शर्म मालूम होती है। यह बड़ी भारी कायरता है। वे सोचते हैं कि किसी छोटी सभा से आरम्भ कर बड़ी सभा में बोलेंगे। पर वे भूल करते हैं। क्योंकि वहाँ भी वही ख्याल पैदा हो जाता है और आक्रमण कर बैठता है। इस तरह वे सभा-समाज में बोल नहीं सकेंगे।

अवसर को हाथ से जाने नहीं देना चाहिए। अच्छा अवसर आया देखकर 'करना कि नहीं' की चिन्ता कभी भी न होनी चाहिए। यह बीमारी कोढ़ की बीमारी से भी खराब है। जिस तरह कोढ़ को तुम एक क्षण भी नहीं बरदाश्त कर सकते उसी तरह इस बीमारी को भी तुम्हें नहीं बरदाश्त करना चाहिए।

जिस काम को हमें करना पड़ेगा उसे अगर हमने किया तो क्या करामात है। उसमें हमारी कोई प्रशंसा नहीं है विवश होकर तो मुर्दादिल भी लड़ने को तैयार हो जायगा। भय और मजबूरी तो दुर्बल-से-दुर्बल आदमी को खड़ा कर सकती है। पर वीर वही है जो वीरता के लिये लड़ता है, डर से नहीं।

जीवन के दैनिक संघर्ष किसी भी संग्राम से कम नहीं हैं। जिस दिन मानव-समाज का इतिहास लिखा जायगा उस दिन उन लोगों का नाम सबसे पहले रहेगा जिन्होंने मानव-समाज को उत्तम बनाने का यत्न किया है। युद्ध आरम्भ होने के पहले ही भीरु बन जाना सबसे बुरा है। चरित्र-बल और मौलिकता के विकास पर इससे भीषण कुठाराघात नहीं हो सकता।

अगर तुम देखते हो कि तुम्हारे मार्ग की बाधाएँ भीषण हैं और तुम उन्हें सहज में पार नहीं कर सकते तो डरने या हताश होने का कोई कारण नहीं है। जो विपत्तियां या बाधाएँ दूर से पहाड़ मालूम होती हैं वे निकट आने पर राई के समान हो जायँगी। केवल साहस और दृढ़ता के साथ आगे बढ़ते जाओ। तुम्हारी प्रगति आप-से-आप रास्ता साफ करती जायगी। ऐसे लोगों का जीवन-चरित पढ़ो और उससे साहस ग्रहण करो। तुम्हारी बाधाएँ घट जायँगी।

जिस समय तुम अपने ध्येय की ओर देख रहे हो अपनी दूरबीन के बड़े शीशे से देखो और जब तुम उस काम को करते समय आनेवाली कठिनाइयों की कल्पना करते हो तो शीशा उलट दो। कठिनाइयाँ छोटी नहीं दिखाएँगी केवल उनकी निकट संभावना नहीं रहेगी। वे सुदूर पर खड़ी दिखाएँगी। इस तरह तुम अपनी कठिनाइयों को सदा घटाते और सफलता की संभावना को बढ़ाते रहो। अपना साहस और अपनी दृढ़ता बढ़ाओ। चाहे कितनी भी भीषण बाधा क्यों न उपस्थित हो तुम्हारा मार्ग नहीं रुक सकता। तुम अपने ध्येय तक पहुँच ही जाओगे।

१३

आत्म-संयम

महामति हर्बर्ट स्पेंसर ने लिखा है कि आत्मसंयमी होना आदर्श पुरुष की सबसे बड़ी निशानी है। जिस आदमी ने अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं कर लिया है, जिसकी इन्द्रियाँ पूर्ण उच्छृङ्खल है और इधर-उधर दौड़ा करती हैं उसके आचरण से कभी न-कभी गृहस्थी, समाज अथवा सारा देश संकट में फँस सकता है। इतिहास के पन्ने इस तरह की उच्छृङ्खला के कारण किए गए सर्वनाश की घटनाओं से भरे पड़े हैं। लाखों नवयुवक जिनसे बड़ी-बड़ी आशाएँ की जा सकती थीं, जिनमें बड़ी-बड़ी योग्यताएँ थीं, जिनकी सदिच्छाएँ अनन्यतम थीं; इसी कारण नष्ट हो गए।

समाचार-पत्रों को उठाकर पढ़िए, दो-चार उदाहरण रोज मिलेंगे कि क्रोध के वश होकर अमुक व्यक्ति ने सर्वनाश कर डाला। क्षणिक क्रोध के वश में होकर जिसने अपना सर्वनाश कर डाला है उससे मिलकर पूछिए आत्मसंयम न रखने का फल कितना कड़ुआ होता है। मिनिट दो मिनिट के क्रोध में आकर उन्होंने अपना जन्म सिद्ध अधिकार किस तरह खो दिया है।

इस बात को हम लोग जानते हैं कि आत्मसंयम बहुत ही कठिन काम है। जिस समय क्रोध के कारण रक्त खौलने लगता है उस समय चुप लगा जाना, मुँह से एक शब्द भी न निकालना

अतिशय कठिन है, पर साथ ही हम लोग यह भी जानते हैं कि इस तरह मिजाज का गुलाम हो जाना भी कितना खतरनाक है। इससे केवल योग्यता पर ही चोट नहीं पहुँचती, इससे प्राणहानि भी होती है। दूसरों के सामने अपनी विवशता प्रकट करना कि हमारा इन्द्रियों पर अधिकार नहीं है, कितना बुरा है।

लड़का अनुभव से ही आग और काटनेवाली चीजों से दूर रहता है कि उनके छूने से हाथ जल या कट जायगा। पर बड़े होने पर भी गर्म मिजाज से बाज नहीं आता, जिसका डंक जन्म-भर अच्छा नहीं होता।

जिस मनुष्य में आत्मसंयम नहीं वह बिना अभ्यास का माझी है, जिस तरह हवा के झोंके उसके जहाज को मनमाने तौर पर ले जायँगे उसी तरह इसकी जीवन-नौका भी जोश-खरोश और उत्तेजनारूपी हवा के धक्के से इधर-उधर मारी-मारी फिरेगी। परिणाम यह होगा कि सारी उमर गँवाकर भी यह अपने मकसद (ध्येय) तक नहीं पहुँच सकेगा। जिस मनुष्य ने आत्मसंयम का पाठ नहीं पढ़ा है उसकी शिक्षा वगैरह सब बेकार है। इस उपर्युक्त बात को कालेज के एक प्रोफेसर ने पूरी तरह चरितार्थ किया था। जोश में आकर अपने छात्रों को कुछ खरी-खोटी बुरी तरह सुना दी। लड़के बिगड़ गए और हड़ताल करने पर उतारू हो गए। प्रिंसिपल साहब बाहर गए थे। तार देकर बुलाए गए। मामला सुनाया गया। प्रोफेसर साहब को विवश किया गया कि लड़कों से माफी माँगें। उनकी सारी विद्वत्ता, मान-मर्यादा और शिक्षा एक मिनिट के जोश के कारण धूल में मिल गई। किसी आदमी के लिये यह कितनी हीनता की बात है कि क्षणिक जोश के कारण उसकी गणना मनुष्यों में न होकर पशुओं में होने लगे। दूसरों की दृष्टि में वह पशुवत् प्रतीत होने लगे। कभी-कभी इस तरह की उत्तेजना और दंड प्रतीकार का

रूप भी धारण कर लेता है। जिस प्रोफेसर की चर्चा ऊपर की गई उसका तो इसी से उद्धार हो गया।

इंद्रियों को वश में करना सबसे बड़ी विजय है। अगर प्रलोभन हमारे सबसे कमजोर अंगों को अपनी ओर खींच रहा हो तब तो आत्मसंयम में हमारी और भी तारीफ है। आदमी कैसा भी बढ़िया क्यों न हो, उसमें एक-न-एक दुर्बलता रहती ही है। अगर हमने इस कमजोरी पर भी अधिकार जमा लिया तो हमारी विजय अनिवार्य है। पर अगर यह छिद्र रह गया तो हमारी विजय सदा संदिग्ध रहेगी।

आत्मसंयम के बिना पूरी योग्यता हममें नहीं आ सकती। हमारे भीतर जो शक्ति है, जो हमारे मन और इंद्रियों का मालिक है, उसकी समता राजा भी नहीं कर सकता।

अनेक तरह की विपत्तियाँ तुम्हें चारों ओर से घेर रही हैं, पर तुम जरा भी विचलित नहीं होते, हर तरह के प्रलोभन तुम्हें अपने मार्ग से डिगाना चाहते हैं। दरिद्रता भीषण रूप धारण कर तुम्हारी परीक्षा कर रही है, पर तुम जरा भी नहीं डिगते, तुम उस अवस्था में भी अधीर होकर कोई अनर्थ नहीं कर बैठते। क्या यह साधारण बात है?

पर इस तरह की योग्यता की प्राप्ति कहाँ और कैसे हो सकती है? विचार-प्रणाली को ठीक मार्ग पर ले जाने से जिस व्यक्ति ने अपनी विचार शक्ति का सिलसिला ठीक कर लिया है उसे मालूम हो जाता है कि आत्मसंयम आप-से-आप ही आ सकता है। मानसिक और शारीरिक शत्रुओं से अपनी रक्षा करना वह सीख लेता है। वह जानता है कि जिस समय दिमाग क्रोध की ज्वाला से जल रहा है उस समय उत्तेजना पूर्ण विचारों को मन में लाकर उसे जगाना उचित नहीं होगा, बल्कि शान्तिपूर्ण विचारों द्वारा उसे ठंडा करना उचित होगा।

अगर तुम्हें जल्दी क्रोध आ जाता है, अगर तुम जरा-जरा सी बात पर उत्तेजित हो जाते हो तो इस कमजोरी के लिये पश्चात्ताप मत करो, किसी से अपनी लाचारी मत प्रकट करो, बल्कि उलटा मार्ग पकड़ो। इस दुर्बलता की चर्चा भी किसी से मत करो। कवि शेक्सपियर के शब्दों में जो गुण तुममें नहीं हैं उसे पाने का यत्न करो। जोर लगाकर शांत बनना सीखो। अपने मन को समझाओ कि उत्तेजित, क्रोधी और उच्छृंखल होने के बजाय तुम्हें शांत होना चाहिए और जरा-जरा सी बात पर थान-पगहा नहीं तुड़ाना चाहिए। थोड़े दिन के बाद ही तुम देखोगे कि तुम्हारी अवस्था एक दम बदल गई है। तुमपूरे संयमी हो गए हो। केवल विचार-प्रणाली से ही हम भले या बुरे बन सकते हैं।

जिन लोगों में आत्मसंयम नहीं वे हर तरह से अपनी विवशता प्रकट करते हैं। यह तो उसी के बराबर हुआ कि जेब में छेद है और रुपया गिर जाता है और रखनेवाला अपनी लाचारी दिखलाता है। जो आदमी आत्मसंयम प्राप्त करने के लिये तैयार है वह अवश्य सफल होगा। पर यह सहज काम नहीं है। अगर विजय पाने के लिये कहीं भीषण संग्राम करना है तो यहीं करना है अगर हमारी कामना सदिच्छापूर्ण है, हार्दिक है तो हम इन्द्रियों का दमन कर सकते हैं और संयमी बन सकते हैं।

हम लोग अपने विचारों के गुलाम हैं, क्योंकि हम लोग उनके अनुसार चलना चाहते हैं। पर यदि हम में दृढ़ता है तो ऐसा कोई भी विचार नहीं है जिसे हम पराजित नहीं कर सकते, जिस पर अधिकार नहीं जमा सकते, जिसमें ताकत नहीं है वही अपने प्राण पर अधिकार नहीं कर सकता।

उदाहरण के लिये किसी बदमिजाज आदमी को ले लीजिए। बदमिजाजी मिथ्याभिमान, स्वार्थ और गरूर के ही कारण होती

है। इसलिये जिस मनुष्य में इसे दमन करने की योग्यता नहीं वह किस काम का है। जो बात-बात में कुत्तों की तरह भूँकने लगता है उसमें कोई गुण नहीं हो सकता। इस तरह के आदमी बड़े ही खतरनाक होते हैं। क्षण-भर में वे दोस्त को दुश्मन, अपने को बेगाना बना सकते हैं और अपने तथा अपने वंश की मर्यादा पर पानी फेर सकते हैं।

अगर बाल्यकाल से ही यत्न किया जाय तो इस तरह की दुर्बलता आदमी में आ ही नहीं सकती। आरंभ में ख्याल न करने का फल होता है कि लापरवाही के कारण बढ़ते-बढ़ते यह आदत वज्रवत् हो जाती है। इस लिये अगर छोटेपन में ही इस बात पर ध्यान दिया जाय तो कितने भारी सर्वनाश से आदमी बच सकता है। अगर बचपन में ही लड़कों का ख्याल उस ओर से घुमा दिया जाय तो समाज का कितना बड़ा उपकार हो।

प्रकृति ने मनुष्य में वह योग्यता भरी है कि यदि वह सतर्क रहे, अपनी आदतों पर अधिकार कर ले, अपने आस-पास की अवस्थाओं पर कब्जा कर ले और अपने शरीर का राजा बना रहे। पर जरा सी असावधानी के कारण वह कौड़ी का तीन हो जाता है। जरा-जरा-सी बात में आकाश-पाताल एक करने लगता है।

हम लोगों में अनेक ऐसे हैं जो आत्मसंयम के मूल सिद्धांत को भी नहीं समझते। साधारण बातों पर ही हमारा मिजाज बिगड़ जाता है और हम बेकार आत्मसंयम खो बैठते हैं। सालमन ने कहा था कि जिसे सहज में क्रोध नहीं आता वह बड़ा आदमी है, पर जिसे क्रोध आता ही नहीं वह तो पूरा वीर है। हम लोग बहुता सुना करते हैं, यह बड़ा योग्य आदमी है, कड़ा परिश्रम करता है, पूरा ईमानदार है, पर आत्मसंयमी नहीं है,

साधारण बात भी उसे बरदाश्त नहीं है। इन छोटी-छोटी बातों का विशेष महत्त्व लोग न समझते हों, पर मेरी तो यही धारणा है कि बड़ी-बड़ी बाधाओं को दूर करने के लिये छोटी-छोटी कठिनाइयों को ही पार करना होगा। जिसने साधारण बोझ सँभाल लिया है वह बड़ा बोझ भी सँभाल सकता है। धीरे-धीरे छोटी घटनाओं से आदत डालकर वह बड़ी-बड़ी घटनाओं में आत्मसंयम नहीं खो सकता पर केवल जोश पर कब्जा कर लेना ही आत्मविजय नहीं है। आत्मसंयम से आत्मविजय का दायरा भारी है। वही आत्मविजयी है जो परीक्षा के समय अपनी छोटी-बड़ी सभी शक्तियों को लाकर काम में बिना रोक-टोक के लगा सकता है, प्रकृति ने उसमें जो योग्यता दी है उसका प्रयोग पूरी तरह से कर सकता है।

घोर संकट के आ जाने पर अथवा किसी असम्भव काम के उपस्थित हो जाने पर क्या करना पड़ता है। यही परीक्षा का समय है। अगर वह अपना मिजाज बिगाड़ नहीं देता, अगर वह आगे बढ़ता चला जा रहा है, जब कि वह देख रहा है कि दूसरे पीछे हट रहे हैं, असम्भव काम के सामने आ जाने पर भी अगर उसका हृदय उसे आगे जाने के लिये ही प्रेरित करता है, तो हम दृढ़ता से कह सकते हैं कि वह अपनी इन्द्रियों का राजा है। हम लोग दृढ़ता से कह सकते हैं कि वह क्या नहीं कर सकता। उसका शरीर और मन जिस धातु का बना है उससे वह असम्भव को भी सम्भव कर सकता है।

जिस आदमी में आत्मसंयम नहीं है, जो अपनी लालसाओं को वश में नहीं कर सकता, जो साधारण प्रलोभनों के फेर में आ जाता है, जो जोश का शिकार है, सिद्धान्त पर नहीं चलता, वह इस संसार में किसी योग्य नहीं हो सकता।

कैसा व्यक्ति में कितनी योग्यता क्यों न आ जाय, अगर

उसमें आत्मसंयम नहीं है तो सब कुछ बेकार है। शराबियों को ले लीजिये। इन्द्रियों के दास बनकर वे अपने घर की भी दुर्दशा कर डालते हैं। वे जानते हैं कि इस बुराई का क्या फल होता है, पर उन्होंने जरा आत्मसंयम नहीं किया और आरम्भ से ही इस तरह इन्द्रियों के शिकार बन गए।

जरा विचार कीजिए। इस जीवन में इससे बढ़कर विपत्ति क्या हो सकती है कि हम इन्द्रियों के दास बनकर सारी आशाओं पर एक साथ ही पानी फेर दें। यह तो इसी के बराबर हुआ कि राजा किसी नालायक को गद्दी पर बैठा दे और आप उसकी खिदमत बजाए। केवल आत्मसंयम न रखने के कारण आजीवन पिछड़े रहना कितनी भारी हीनता है।

कितने लोग जो आत्मसंयम नहीं रख सकते यह बहाना पेश करते हैं कि हममें जोश बहुत अधिक है। पर ईश्वर ने किसी व्यक्ति को जोश का दास नहीं बनाया है। जितना जिसमें जोश है उतनी ही उसमें विजय करने की शक्ति भी है। केवल आरम्भ करने की आवश्यकता रहती है।

हम लोगों के हृदय में पशुबल का निवास है। अगर हम आत्मविजयी कहलाना चाहते हैं तो उचित है कि सबसे पहले इसी पाशविक प्रवृत्ति पर कब्जा करें। इसी को दबाएँ और इसी को जीतें। जब तक हम अपनी इन्द्रियों के गुलाम हैं तब तक हम अपने शरीर या मन के मालिक कैसे बन सकते हैं।

हमारी कमजोरी कितनी भी तुच्छ क्यों न हो, कभी-न-कभी इसका परिणाम भीषण होगा। एक साधारण छेद भी खाई के जल को धीरे-धीरे बहा देता है। आग की एक चिनगारी ही गावों को जला देती है। क्षणिक उत्तेजना के कारण जिन्दगी-भर का किया-कराया काम न [illegible] जाता है। इस तरह के आत्मसंयम

के अभाव में भीषण-भीषण कांड हो जाते हैं। जोश में आकर बिना समझे-बूझे कुछ कह दिया और लिख दिया जिससे मैत्री टूट जाती है, सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाता है।

मनुष्य के ऊपर जितनी विपत्तियां आती हैं उनमें से अधिकाँश आत्मसंयम न होने के कारण ही आती हैं। अगर हम लोग यह आदत डाल लें कि उत्तेजित होकर कुछ करने या कहने के पहले क्षण-भर सोच-विचार लें तो हमारी हर तरह से रक्षा हो सकती है।

मेरे एक मित्र ने मुझसे एक बार कहा था कि आज तक मुझे एक बात से जितना सन्तोष हुआ उतना और किसी बात से नहीं। एक बार मैंने क्रोध में एक झूठी चिट्ठी लिखी। संयोगवश चिट्ठी उस दिन नहीं भेजी जा सकी। सबेरे मैंने उसे खोलकर फिर पढ़ा। शान्त होने पर मैंने देखा कि अनर्थ कर डाला है। मैंने फाड़कर फेंक दिया।

अगर क्रोध में आपको भी इस तरह के पत्र लिखने पड़ जायँ तो मेरे इन्हीं मित्र का अनुसरण कीजिए। कितने आदमी ऐसे हैं जो इस तरह के पत्रों के वापस पा जाने के लिये अपना सर्वस्व गँवा देना चाहेंगे। अगर आप लिखें ही नहीं तो सबसे उत्तम है। किसी जोश या उत्तेजना का प्रकट न करना सबसे बड़ी करामात है। इस तरह उसका नाश हो जाता है। अगर लगातार हम उत्तेजनाओं का दमन करते रहें तो थोड़े दिन के बाद हम देखेंगे कि उनका आप-से-आप नाश हो जाता है।

एक आदमी ने मुझ से कहा—"संसार में सबपर विजय पा सकता हूँ, पर लालच पर नहीं; इसका प्रभाव मेरे ऊपर इतना अधिक पड़ता है कि हर तरह से लाचार हो जाता हूँ।" हममें से बहुतों की यही हालत है।

बहुत कम लोग मिलेंगे जिन्होंने आत्मदमन कर लिया है और अपने प्रकाश से दूसरों को मार्ग दिखाने की योग्यता प्राप्त कर ली है। हम लोगों में से कुछ लोग थोड़ा-बहुत आत्मसंयम प्राप्त कर लेते हैं। पर अधिकांश भूमि तो यों ही पड़ी रहती है। जिस शक्ति को मस्तूल पर चढ़कर बैठना चाहिए वह हर जगह प्रधानता नहीं पाता। हर जगह युद्ध मचा रहता है। जोश अपना प्रभाव दिखाना ही चाहता है। अधिकांश अवस्था में उसकी ही विजय होती है।

इतने पर भी जो दृढ़ हैं वे अपने शरीर को काबू में रख सकते हैं। परमपिता ने हमें इसके योग्य ही बनाया है। जिसकी विचार-प्रणाली ठीक है वह हर तरह की योग्यता प्राप्त कर सकता है। वह प्रत्येक दुर्बलता का दमन कर सकता है।

इसलिये पहला काम तो मानसिक स्थिति को सँवारना है। सब काम एक दिन में समाप्त नहीं हो सकता। पर धीरे-धीरे हम उत्तेजित मिजाज पर कब्जा कर सकते हैं और इस तरह धीरे-धीरे हम अपने पर अधिकार कर सकते हैं।

अगर हम अपनी दुर्बलता को इस तरह नहीं छोड़ सकते तो हमें उसे कोई प्रत्यक्ष रूप दे देना चाहिए। इससे बड़ी सहायता मिलती है। उनकी हीनता और असारता देखकर हमें साहस हो जाता है और हम उन्हें मार गिराते हैं। हमारे एक मित्र में सिगरेट पीने की बुरी लत थी। कोशिश करने पर भी वे उससे मुक्त नहीं हो सके। एक दिन उन्होंने सिगरेटों को जमा किया और कहा—"मैं मनुष्य हूँ और तू घास है। हमारा और तेरा संग्राम आज से होगा। देखें तू पकड़े रहता है या मैं तुझे उठा फेकता हूँ। फल वही हुआ जो आदमी और घास के संग्राम में हो सकता है।

एक दूसरे आदमी का दास्तान है। वह महाक्रोधी था। वह गीता की पुस्तक सदा अपने साथ रखता था। क्रोध आते ही वह गीता का पाठ करने लगता था, थोड़े ही दिनों में उसकी वह आदत जाती रही।

अगर हम हृदय से चाहें तो अपनी इन्द्रियों के दास नहीं बन सकते। जो हृदय से चाहता है और उसके अनुरूप मूल्य देने के लिये तैयार है वह अपने शरीर का पालक है।

केवल मानसिक आधिपत्य न होने से ही हम इतने दीन और दुःखी रहते हैं। इस तरह के आदमी मन का द्वार खोल देते हैं हर तरह की अच्छी और बुरी चीजें उसमें घुसने देते हैं। उससे घृणा, द्वेष, कुचाल और डाह का उदय होता है। उसके मन पर अशांति का राज्य हो जाता है। फिर भी वे विस्मय के साथ पूछते हैं—"हम इतने अशान्त क्यों हैं?" शायद उनके ध्यान में यह बात नहीं आती कि हम अपने विचार पर अधिकार नहीं करते, मन को इधर-उधर दौड़ने देते हैं और अपने दुश्मन को घर में घुसने का अवसर देते हैं जो अपनी कुरूप छाया उस पवित्र मन्दिर पर डालता है जिसका निर्माण केवल शुभ्र और सौम्य विचाररूपी देवता के रहने के लिये ही हुआ है।

१४

समय का उपयोग

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब्ब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करोगे कब्ब॥

क्या तुमने कवि के इस कथन पर कभी विचार किया है? क्या तुमने कभी भी यह सोचा है कि इस नरदेह में जो कुछ करना-धरना है, वह इसी क्षण कर डालना है। तुम नहीं कह सकते कि दूसरे क्षण में तुम्हारी क्या दशा होगी। तुम रहोगे या नहीं। इसलिए तुम्हें क्षण-भर भी इधर-उधर नहीं करना चाहिए। जो कुछ करना है इसी क्षण कर डालो।

आज तक कोई भी वीर ऐसा नहीं पैदा हुआ जो यह बतला सके कि इस क्षण के बाद जो समय आनेवाला है उसमें क्या होगा। जो समय एक बार खो दिया गया उसे फिर लौटाया नहीं जा सकता।

जब हम यह अनुमान करते हैं कि हमारे समय का बहुत ही कम हिस्सा उपयोग में आता है उस समय हमें इस जीवन की बहुमूल्यता का पता लगता है। समय का मूल्य रुपये से भी अधिक है। इसीलिये कहा जाता है क्षण-भर भी समय न खोओ। इसी क्षण को जोड़कर घंटे होते हैं, दिन होते हैं, महीना, वर्ष और सारी जिंदगी होती है। नीति भी यही कहती है—

क्रमशः पूर्यते घट

पर इस बात का कौन ख्याल करता है क्या किसी ने क्षण-भर के लिये भी सोचा है कि जो समय हम व्यर्थ गँवाते हैं उसे जोड़-बटोरकर उज्ज्वल जीवन बना सकते हैं।

कुछ लोगों का ख्याल है कि किसी-न किसी तरह तो हम अपनी जिंदगी सुधार लेंगे ही। वे उसे व्यर्थ गँवाना या पानी में फेंकना नहीं चाहते। पर इनमें बहुत कम ऐसे हैं जो कभी इस बात पर विचार करते हैं कि अगर इस जीवन को सार्थक बनाना है तो प्रत्येक क्षण को किसी-न-किसी काम में लाना आवश्यक है। केवल सदिच्छाओं और महदाकांक्षाओं से ही काम नहीं चल सकता। जिस मनुष्य ने अपने जीवन का कार्य-क्रम ठीक-ठीक नहीं बना लिया और उस पर पूरी तरह से आचरण नहीं किया, वह धीरे-धीरे गिरकर धूल में मिल जायगा।

अपने जीवन का जितना समय हम काम में लाएँगे उसी हिसाब में हमें सफलता मिलेगी। उससे अधिक की आशा हमें नहीं करनी चाहिए। इस जीवन को उपयोगी बनाने के लिये सबसे बड़ी पूँजी वे ही क्षण हैं जो व्यर्थ बकवाद में खो दिए जाते हैं।

जितनी अधिक किफायतसारी से हम रहेंगे उतना ही रुपया हम बचा सकेंगे। जितना अधिक हम बचा सकेंगे उतनी ही जल्दी हम पराधीनता से छूट सकेंगे। जितनी अधिक हमारी जानकारी बढ़ती जायगी उतना ही ज्यादा हमारा अधिकार बढ़ता जायगा। साथ-ही-साथ उसी क्रम से हमारे जीवन की उपयोगिता भी बढ़ती जायगी। इसी लिए यह परिणाम निकला कि हमारा रत्ती-रत्ती बटोरना हमारे जीवन को बहुत ही ऊँचे चढ़ा सकता है।

हमारी तो यही इच्छा रहती है कि जो नवयुवक इस तरह अपने प्रत्येक क्षण को काम में लगाता है, उसका जीवन नक्षत्र की तरह आकाश में चमकता रहता है ताकि अन्य नवयुवक उसके दिव्य प्रकाश से उत्साह ग्रहण करें और अपने समय का एक क्षण भी व्यर्थ न जाने दें।

अगर किसी काम में लगातार थोड़ा-थोड़ा समय भी लगाया जाय तो उसका फल बहुत ही अच्छा होगा। जिस काम के पीछे हम पड़ जायेंगे, उसे पूरा ही करके छोड़ेंगे। नीति भी यही कहती है—

शनैः कन्था शनैः पन्था शनैः पर्वतलंघनम् ।

अर्थात् अनवरत गति धीमी होकर भी बड़ा काम कर देती है। अगर मूर्ख भी एक घंटा रोज पढ़ने में लगाए तो दस वर्ष में वह पूरा विद्वान् हो सकता है। एक घंटे में कम से कम २० पृष्ठ सावधानी और समझ कर पढ़ा जा सकता है। इस तरह एकवर्ष ७००० पृष्ठ से भी अधिक एक आदमी एक घंटा समय लगाकर पढ़ सकता है। सात हजार पृष्ठों में कम से कम २० पोथियाँ मोटी-मोटी तैयार होंगी।

अब अनुमान कीजिए कि जो आदमी एक घंटा प्रतिदिन समय लगा कर २० पोथियाँ पढ़ डालेगा, उसके जीवन की उपयोगिता कितनी बढ़ जायगी। अब जो व्यक्ति इससे अधिक समय लगा देगा—जिसे वह प्रतिदिन व्यर्थ की बकवाद में गँवाता है, उसकी क्या दशा होगी ?

आज भारतवर्ष का बच्चा-बच्चा स्वर्गीय लोकमान्य और महात्मा गाँधी की पूजा हृदय से करता है। उनकी सफलता को विस्मित होकर देखता है। पर क्या एक भी ऐसा व्यक्ति है जिसने इस बात को भली-भाँति समझा है कि उनकी सफलता

की कुञ्जी इसी में थी कि उन्होंने अपने समय का पूर्ण उपयोग किया। एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोया। महात्मा गाँधी इस देश के भाग्य-विधाता हो रहे हैं। इन्होंने पुस्तकों का साथ क्षण-भर के लिए भी नहीं छोड़ा। असहयोग-आन्दोलन के प्रचार-कार्य में कुछ समय खर्च हो जाता था। दिन-रात सभाएँ करनी पड़ती थीं। एक क्षण भी अवकाश नहीं मिलता था। महज पढ़ने के लिए उन्होंने सोमवार का दिन मौनव्रत रखने का निकाला। उस दिन वे किसी से न बोलते। दिन-भर २४ घंटे का मौनव्रत धारण करते और लिखते-पढ़ते। जेल में वे कुरान का अध्ययन कर रहे थे। वहाँ भी पढ़ना नहीं छूटा। लोकमान्य ने जेल में ही अपने तीनों महान् ग्रन्थ लिखे। जो लोग उनके कार्यों को विस्मय से देखते हैं अथवा ईर्ष्या करते हैं और व्यर्थ की बकवाद में समय खोते हैं, उनके उस समय के लिए—यदि वे उसे अपना बना सकें—वे क्या वस्तु देने के लिए तैयार नहीं होंगे ?

अगर दो चार बार पुरस्कार ही पा जाना हम समय का सदुपयोग समझते हैं, तो हम समय का मूल्य नहीं जानते। हम पहले ही कह आए हैं कि हमारा समय रुपये से भी बहुमूल्य है। अगर सबसे मूल्यवान मणि उसकी तुलना में रख दी जाय तो उसका मूल्य नहीं चुकाया जा सकता है।

बहुधा लोग कहते हैं कि अगर हममें योग्यता होती तो हम न जाने क्या कर दिखाते। इस तरह लोग अपने आलस्यमय जीवन और व्यर्थ के समय खोने पर परदा डालना चाहते हैं। पर यदि देखा जाय तो मालूम होगा कि वे ही लोग अपनी योग्यता का दसवाँ हिस्सा भी काम में नहीं लाते और व्यर्थ समय नष्ट करते हैं। जो कुछ उन्हें मिला है उसे तो नष्ट करते

ही हैं और यदि इससे कुछ अधिक मिल गया होता तो उसकी भी यही दशा होती।

हम जो कुछ अच्छी आदत डालना चाहते हैं उसमें सबसे अच्छी आदत यही है कि हम अपने समय को किसी भी तरह नष्ट न होने दें। अगर यह आदत हमारे नवयुवकों में—घर छोड़कर परदेश जाने के पहले ही—डाल दी जाय तो उनमें स्थिरता, साहस और शक्ति आ जायगी। इससे वे उन प्रलोभनों में नहीं पड़ सकेंगे जो इस जीवन संघर्ष में उनके सामने उपस्थित होंगे।

बड़े कुटुम्बवाली गृहस्थी में यह दोष सबसे अधिक पाया जाता है। भोजन के बाद तो दो-चार घण्टे गप्प में अवश्य ही काटते हैं। पर यह निरर्थक है। इससे किसी को लाभ नहीं होता। बकवाद में समय व्यर्थ जाता है। घर का कोई लड़का पढ़ना चाहता है और कोई खेलना। पर उनके काम का कोई नियत समय नहीं है। वे नहीं जानते कि उन्हें क्या करना चाहिए। इसलिये वे अपने समय को व्यर्थ गँवाते हैं।

यह एकाकी घटना नहीं है। घर-घर यह बात देखने में आती है। शहरों में तो इसके लिये नाटकालय, संगीतालय और संगतें बनी हैं और देहात भी इस पाप से नहीं बचा है। अगर जाड़ा है तो आग के पास, नहीं तो किसी मंदिर की फर्श पर दस आदमी इकट्ठे हो जायँगे और व्यर्थ की निंदा और प्रशंसा में समय गँवाएँगे। इससे किसी तरह का लाभ नहीं होता। न तो कुछ जानकारी ही बढ़ती है और न मन को ही शांति मिलती है।

साथ ही कोई भी घर ऐसा नहीं होता जिसमें एकाध लड़का ऐसा न पैदा होता हो जो उस अवस्था से ऊपर उठना चाहता है। पर जहाँ इस तरह की लीला प्रतिदिन हो रही है

वहाँ किसे समय और अवसर है कि परिश्रम करके पढ़े-लिखे और अपने समय का उपयोग कर ऊपर उठे। अगर बालक असाधारण और अलौकिक न हुआ तो शीघ्र ही उसका उत्साह भंग हो जायगा और उन्हीं लोगों की श्रेणी में आ जायगा।

कभी-कभी एकाध ऐसे नवयुवक दिखाई दे जाते हैं जिनके मार्ग में किसी तरह की बाधा भी पैर नहीं अड़ा सकती। वे इतने दृढ़ रहते हैं कि उन्हें नये उत्साह की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अगर उनका मकान चण्डूखाने को मात कर रहा है तो वे एक कोने में चुपचाप बैठ रहेंगे। पर जिन लड़कों में साधारण उत्साह है, जो बाहरी प्रेरणा और उत्साह के बल पर ही आगे बढ़ सकते है या कुछ कर सकते हैं, वे इस तरह की परिस्थिति में पड़कर सिवा नष्ट और बरबाद होने के कुछ नहीं कर सकते। धीरे-धीरे उनमें भी वही आदत पड़ जायगी और वे चैन करने लगेंगे। कभी उन्हें इस अवस्था पर खेद होता है, पर यह बात बहुत दिनों तक नहीं रहती। धीरे-धीरे आदत खराब हो जाती है और सारी आकांक्षाओं का एकबारगी लोप हो जाता है।

अगर अभिभावकों की समझ में यह बात आ जाय कि लड़के अपने समय के मूल्य को समझने लगें और पढ़ने-लिखने एवं अध्यवसाय मे ही अपना समय बिताएँ तो निश्चय है कि संसार का संकट बहुत कुछ कम हो जाय। प्रत्येक बालक में आत्मोन्नति और जीवन को उपयोगी बनाने की आदत डाली जाय। यह बात उनके जीवन में जितनी उपयोगी होगी उसकी समता प्रभूत सम्पत्ति भी नहीं कर सकेगी।

जहाँ तक सम्भव हो पढ़ने लिखनेवाले लड़कों के लिये अलग कमरा होना चाहिए चाहे कमरा कितना भी छोटा क्यों न हो, उसमें रोशनी पर्याप्त होनी चाहिए। चाहे वह कमरा

सादगी का अवतार ही क्यों न हो, पर वह इतना परिच्छिन्न और परिष्कृत होना चाहिए कि लड़के के मन को हर ले और पढ़ने में उसकी तबियत लगे। अगर गृहस्थी की दशा ऐसी सुसम्पन्न नहीं है कि प्रत्येक बालक के लिये अलग-अलग कमरे का बन्दोबस्त किया जा सके तो सबके लिये एक ही कमरा ठीक कर देना चाहिए। अगर अभिभावक चाहें तो घर को विद्या-भवन बना सकते हैं।

जो लोग गरीब हैं वे सीधा उत्तर देते हैं कि हमारे पास धन तो है ही नहीं हम शिक्षा कहाँ से दें। उनसे हमारा कहना है कि रुपये-पैसे की परवा मत करो। अपने बच्चों को तुम समय की उपयोगिता बतलाओ। समय को बहुमूल्य समझने की शिक्षा दो, जिन्होंने संसार में बड़ा से-बड़ा काम किया है उनका जीवन पढ़कर सुनाओ। वे अपनी उन्नति आप-से आप कर लेंगे। केवल उनके हृदय में उच्च बनने की पिपासा जगा दो।

पर कुछ लोगों की धारणा है कि बिना स्कूल गए शिक्षा का क्रम चल ही नहीं सकता। पर यह बात नहीं है। इस देश में इतने बड़े-बड़े दिग्गज विद्वान् बिना किसी स्कूली या कालेजी शिक्षा के ही हुए हैं। काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् पण्डित शिवकुमारजी इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। इसी तरह के अनेक विद्वान् पण्डित हैं। योरोपीय देशों में भी हजारों इस तरह के विद्वान् निकलेंगे जिन्हें स्कूली शिक्षा नहीं प्राप्त हो सकी है। अब्राहम लिङ्कन के जीवन-चरित से हमें क्या शिक्षा मिलती है? उन्हें स्कूल का मुँह देखना भी नसीब नहीं हुआ था युवावस्था तक उन्होंने शायद ही दस-बीस किताबें पढ़ी थीं, पर उन्होंने जो योग्यता प्राप्त की थी उसका सानी नहीं। तो क्या अब्राहम लिंकन से भी गरीब कोई हो सकता है? उए

वहाँ किसे समय और अवसर है कि परिश्रम करके पढ़े लिखे और अपने समय का उपयोग कर ऊपर उठे। अगर बालक असाधारण और अलौकिक न हुआ तो शीघ्र ही उसका उत्साह भंग हो जायगा और उन्हीं लोगों की श्रेणी में आ जायगा।

कभी-कभी एकाध ऐसे नवयुवक दिखाई दे जाते हैं जिनके मार्ग में किसी तरह की बाधा भी पैर नहीं अड़ा सकती। वे इतने दृढ़ रहते हैं कि उन्हें नये उत्साह की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अगर उनका मकान चण्डूखाने को मात कर रहा है तो वे एक कोने में चुपचाप बैठ रहेंगे। पर जिन लड़कों में साधारण उत्साह है, जो बाहरी प्रेरणा और उत्साह के बल पर ही आगे बढ़ सकते हैं या कुछ कर सकते हैं, वे इस तरह की परिस्थिति में पड़कर सिवा नष्ट और बरबाद होने के कुछ नहीं कर सकते। धीरे-धीरे उनमें भी वही आदत पड़ जायगी और वे चैन करने लगेंगे। कभी उन्हें इस अवस्था पर खेद होता है, पर यह बात बहुत दिनों तक नहीं रहती। धीरे-धीरे आदत खराब हो जाती है और सारी आकांक्षाओं का एकबारगी लोप हो जाता है।

अगर अभिभावकों की समझ में यह बात आ जाय कि लड़के अपने समय के मूल्य को समझने लगें और पढ़ने-लिखने एवं अध्यवसाय में ही अपना समय बिताएँ तो निश्चय है कि संसार का संकट बहुत कुछ कम हो जाय। प्रत्येक बालक में आत्मोन्नति और जीवन को उपयोगी बनाने की आदत डाली जाय। यह बात उनके जीवन में जितनी उपयोगी होगी उसकी समता प्रभूत सम्पत्ति भी नहीं कर सकेगी।

जहाँ तक सम्भव हो पढ़ने लिखनेवाले लड़कों के लिये अलग कमरा होना चाहिए चाहे कमरा कितना भी छोटा क्यों न हो, उसमें रोशनी पर्याप्त होनी चाहिए। चाहे वह कमरा

सादगी का अवतार ही क्यों न हो, पर वह इतना परिच्छिन्न और परिष्कृत होना चाहिए कि लड़के के मन को हर ले और पढ़ने में उसकी तबियत लगे। अगर गृहस्थी की दशा ऐसी सुसम्पन्न नहीं है कि प्रत्येक बालक के लिये अलग-अलग कमरे का बन्दोबस्त किया जा सके तो सबके लिये एक ही कमरा ठीक कर देना चाहिए। अगर अभिभावक चाहें तो घर को विद्या-भवन बना सकते हैं।

जो लोग गरीब हैं वे सीधा उत्तर देते हैं कि हमारे पास धन तो है ही नहीं हम शिक्षा कहाँ से दें। उनसे हमारा कहना है कि रुपये-पैसे की परवा मत करो। अपने बच्चों को तुम समय की उपयोगिता बतलाओ। समय को बहुमूल्य समझने की शिक्षा दो, जिन्होंने संसार में बड़ा से-बड़ा काम किया है उनका जीवन पढ़कर सुनाओ। वे अपनी उन्नति आप-से आप कर लेंगे। केवल उनके हृदय में उच्च बनने की पिपासा जगा दो।

पर कुछ लोगों की धारणा है कि बिना स्कूल गए शिक्षा का क्रम चल ही नहीं सकता। पर यह बात नहीं है। इस देश में इतने बड़े बड़े दिग्गज विद्वान् बिना किसी स्कूली या कालेजी शिक्षा के ही हुए हैं। काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् पण्डित शिवकुमारजी इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। इसी तरह के अनेक विद्वान् पण्डित हैं। योरोपीय देशों में भी हजारों इस तरह के विद्वान् निकलेंगे जिन्हें स्कूली शिक्षा नहीं प्राप्त हो सकी है। अब्राहम लिङ्कन के जीवन-चरित से हमें क्या शिक्षा मिलती है? उन्हें स्कूल का मुँह देखना भी नसीब नहीं हुआ था, युवावस्था तक उन्होंने शायद ही दस-बीस किताबें पढ़ी थीं पर उन्होंने जो योग्यता प्राप्त की थी उसका सानी नहीं। (?) क्या अब्राहम लिंकन से भी गरीब कोई हो सकता है? उस

वहाँ किसे समय और अवसर है कि परिश्रम करके पढ़े-लिखे और अपने समय का उपयोग कर ऊपर उठे। अगर बालक असाधारण और अलौकिक न हुआ तो शीघ्र ही उसका उत्साह भंग हो जायगा और उन्हीं लोगों की श्रेणी में आ जायगा।

कभी-कभी एकाध ऐसे नवयुवक दिखाई दे जाते हैं जिनके मार्ग में किसी तरह की बाधा भी पैर नहीं अड़ा सकती। वे इतने दृढ़ रहते हैं कि उन्हें नये उत्साह की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अगर उनका मकान चण्डूखाने को मात कर रहा है तो वे एक कोने में चुपचाप बैठ रहेंगे। पर जिन लड़कों में साधारण उत्साह है, जो बाहरी प्रेरणा और उत्साह के बल पर ही आगे बढ़ सकते हैं या कुछ कर सकते हैं, वे इस तरह की परिस्थिति में पड़कर सिवा नष्ट और बरबाद होने के कुछ नहीं कर सकते। धीरे-धीरे उनमें भी वही आदत पड़ जायगी और वे चैन करने लगेंगे। कभी उन्हें इस अवस्था पर खेद होता है, पर यह बात बहुत दिनों तक नहीं रहती। धीरे-धीरे आदत खराब हो जाती है और सारी आकांक्षाओं का एकबारगी लोप हो जाता है।

अगर अभिभावकों की समझ में यह बात आ जाय कि लड़के अपने समय के मूल्य को समझने लगें और पढ़ने-लिखने एवं अध्यवसाय में ही अपना समय बिताएँ तो निश्चय है कि संसार का संकट बहुत कुछ कम हो जाय। प्रत्येक बालक में आत्मोन्नति और जीवन को उपयोगी बनाने की आदत डाली जाय। यह बात उनके जीवन में जितनी उपयोगी होगी उसकी समता प्रभूत सम्पत्ति भी नहीं कर सकेगी।

जहाँ तक सम्भव हो पढ़ने लिखनेवाले लड़कों के लिये अलग कमरा होना चाहिए चाहे कमरा कितना भी छोटा क्यों न हो, उसमें रोशनी पर्याप्त होनी चाहिए। चाहे वह कमरा

सादगी का अवतार ही क्यों न हो, पर वह इतना परिच्छिन्न और परिष्कृत होना चाहिए कि लड़के के मन को हर ले और पढ़ने में उसकी तबियत लगे। अगर गृहस्थी की दशा ऐसी सुसम्पन्न नहीं है कि प्रत्येक बालक के लिये अलग-अलग कमरे का बन्दोबस्त किया जा सके तो सबके लिये एक ही कमरा ठीक कर देना चाहिए। अगर अभिभावक चाहें तो घर को विद्या-भवन बना सकते हैं।

जो लोग गरीब हैं वे सीधा उत्तर देते हैं कि हमारे पास धन तो है ही नहीं हम शिक्षा कहाँ से दें। उनसे हमारा कहना है कि रुपये-पैसे की परवा मत करो। अपने बच्चों को तुम समय की उपयोगिता बतलाओ। समय को बहुमूल्य समझने की शिक्षा दो, जिन्होंने संसार में बड़ा से-बड़ा काम किया है उनका जीवन पढ़कर सुनाओ। वे अपनी उन्नति आप-से आप कर लेंगे। केवल उनके हृदय में उच्च बनने की पिपासा जगा दो।

पर कुछ लोगों की धारणा है कि बिना स्कूल गए शिक्षा का क्रम चल ही नहीं सकता। पर यह बात नहीं है। इस देश में इतने बड़े बड़े दिग्गज विद्वान् बिना किसी स्कूली या कालेजी शिक्षा के ही हुए हैं। काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् पण्डित शिवकुमारजी इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। इसी तरह के अनेक विद्वान् पण्डित हैं। योरोपीय देशों में भी हजारों इस तरह के विद्वान् निकलेंगे जिन्हें स्कूली शिक्षा नहीं प्राप्त हो सकी है। अब्राहम लिङ्कन के जीवन-चरित से हमें क्या शिक्षा मिलती है? उन्हें स्कूल का मुँह देखना भी नसीब नहीं हुआ था, युवावस्था तक उन्होंने शायद ही दस-बीस किताबें पढ़ी थीं, पर उन्होंने जो योग्यता प्राप्त की थी उसका सानी नहीं। तो क्या अब्राहम लिङ्कन से भी गरीब कोई हो सकता है? उ

है, संतति की देखभाल करना है, उनका भविष्य सुधारना है, बुरी आदतों से दूर रखकर उनमें अच्छी आदतें डालना है। अगर व्यर्थ के कामों में समय नष्ट कर गृहिणी समय का उपयोग करे तो क्या संसार का संकट इतना ही भीषण बना रह सकता है?

बिना किसी उद्देश्य के हम इस जीवन को सार्थक नहीं बना सकते है। जो आदमी अपने जीवन का सदुपयोग करना चाहता है उसे उचित है, कि वह अपने फालतू समय के प्रयोग के लिये एक नियम बना ले। जिन्हें हमने सफलता की सीढ़ी पर सबसे ऊपर देखा है, उन्होंने अपना कार्यक्रम बना लिया था और वे प्रतिदिन उसीके अनुसार चलते थे। अपने भविष्य को संशयात्मक बनाने के लिए अथवा मार्ग में बाधा खड़ी करने के लिए उन कार्यक्रम में किसी तरह का व्यवधान नहीं होने देते थे। इस तरह कार्यक्रम बना लेने से तथा उस पर आचरण करने से चरित्र का गठन होता है। जिन लोगों को हमने अत्यंत हीनावस्था से ऊपर उठते देखा है, उन्होंने अपने समय का एक क्षण भी फालतू नहीं खोया है।

इसलिए हमें आज से ही तत्पर होकर थोड़ा समय इस ओर लगाने का यत्न करना चाहिए। अगर घर का प्रत्येक प्राणी एक-एक काम लेकर बैठ जाय और प्रतिदिन एक एक घंटा समय लगाए तो एक वर्ष में उस गृहस्थी की क्या दशा हो जायगी, यह सहज में ही अनुमान किया जा सकता है। कितने ऐसे लोग मिलते है जो अंतकाल में इसी बात पर पछताते हैं कि बाल्यकाल में मुझे उचित शिक्षा नहीं मिली। इतने पर भी वे अपना अमूल्य समय प्रतिदिन नष्ट करते हैं, जिसके उपयोग से वे अनुमान से अधिक शिक्षा पा सकते हैं दिन भर काम करने के बाद फालतू

समय का जिस तरह प्रयोग किया जाता है, उसे देखकर समझ लिया जा सकता है कि अमुक व्यक्ति कैसा होगा।

जिस किसी तरीके से हो सके ज्ञान प्राप्त करना ही आदमी को विज्ञ बनाता है और उसके हृदय को उदार तथा उन्नत करता है। शिक्षा के न होने से हृदय की संकीर्णता दूर नहीं होती।

जिस नवयुवक में आत्मोन्नति की आदत पड़ गई है, जो प्रतिदिन अपनी अवस्था सुधारता रहता है, अवसर का स्वागत करने के लिए सदा तैयार रहता है उसके सुख की समता कोई नहीं कर सकता। उसके विश्वास का दायरा बढ़ जाता है और उसकी रुचि प्रस्फुटित हो जाती है।

अगर तुम्हें उन्नत होने की हार्दिक अभिलाषा है, अगर तुम प्राथमिक अवस्था की कमी को सच्चे हृदय से पूर्ण करना चाहते हो तो यह बात सदा स्मरण रखो कि जिस किसी से तुम्हारा संसर्ग होगा वह कुछ न कुछ तुम्हें देगा ही। कुछ न कुछ नई बातें तुम उससे सीखोगे, और तो और एक साधारण किसान भी तुम्हें कितनी बातें बतलाएगा, जिन्हें तुम नहीं जानते होगे।

कितने लोग ऐसे मिलेंगे जो इस जिंदगी में न जाने कितने कामों में हाथ डालते हैं। उन्हें किसी में रुचि नहीं रहती, केवल अपने खास काम की धुन उन्हें रहती है। परिणाम यह होता है कि उन्हें अपने काम में भी सफलता नहीं मिलती।

जो आदमी हर तरह की चीजों को जानने के लिए तैयार है, जो समझता है कि जिस किसी वस्तु से संसर्ग होगा, कुछ न कुछ नया सीखने को मिलेगा, जो मधुमक्खियों की भाँति हर फूल से रस चूस लेता है, उसी आदमी का जीना सार्थक है।

कितने लोग ऐसे हैं जो व्यर्थ में अपना समय नष्ट करते हैं और आलस्य में जीवन बिताते हैं। यदि वे वही समय किसी उपयोगी काम में लगायें तो उसका कोई अच्छा परिणाम हो

सकता है पर वे अपने को ऊचा बनाने के लिए भी क्षणिक आनन्द के इस साधन को छोड़ना नहीं चाहते और यह साधारण बात भी नहीं है। यह संघर्ष का युग है। जीवन की समस्या इतनी कठिन हो गई है कि हमें केवल जीवन के लिये हर तरह के साधनों से सुसज्जित रखना चाहिए। इस संघर्ष से बचने के लिये सबसे उत्तम उपाय यही है कि हम अपने जीवन की उपयोगिता बढ़ा दें, क्योंकि अच्छी वस्तु की माँग हर जगह बढ़ती जा रही है। अब मूर्ख रहने के लिये कोई बहाना नहीं हो सकता। जिसे शिक्षा पाने की सदिच्छा है वह प्राप्त कर सकता है। मजदूरी करके जिसे पेट पालना पड़ता है वह भी फालतू समय पढ़ने-लिखने में लगा सकता है।

बुद्धि के दरबार में बिना टिकट कोई जाने नहीं पाता। जो टिकट का पैसा देने के लिये तैयार नहीं है उसे भीतर घुसने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हो सकता। उसके दरबार में सोने चाँदी के सिक्के नहीं चलते। वहाँ मिहनत और अध्यवसायरूपी पैसे की पूछ है। जो यह खर्च करने के लिये तैयार है उसे भीतर जाने की आज्ञा मिल सकती है।

जिस समय हम यह विचार छोड़ देते हैं कि हमारे मार्ग में असुविधाएँ हैं उसी समय हमारा रास्ता साफ हो जाता है और हम विजय की ओर बिना किसी कठिनाई के बढ़ते हैं। चाहे हमारी गति धीमी ही क्यों न हो, हम अवश्य अपने मकसद पर पहुँच जायँगे।

प्रतिदिन हम लोग सुनते हैं कि गरीबों के लिये यहाँ कुछ नहीं है और अमीर बहुत कुछ कर डालते हैं, पर यह प्रकृति का नियम नहीं है। प्रकृति ने किसी वस्तु पर किसी का अधिकार नहीं स्थापित किया है। समय पर किसी का अधिकार नहीं। रङ्क और राजा के लिये यह सदा बराबर रहता है। अपनी असीम

सम्पत्ति लुटाकर भी राजा एक क्षण समय नहीं खरीद सकता।

क्या तुमने इस बात पर कभी विचार किया है कि जिस समय को तुम फालतू बातों में खो रहे हो उसका उपयोग कर कितने लोग बड़े बन गए हैं।

कितने लोग जिनमें बड़े-बड़े कामों के कर डालने की योग्यता है मारे-मारे फिरते हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि उन्होंने अपनी योग्यता का पूरी तरह से प्रयोग नहीं किया है हम लोग इस तरह की बातें प्रतिदिन देखते हैं। पर जरा भी ध्यान नहीं देते। हम लोगों के दिल में यह बात कभी भी नहीं समाती कि धीरे-धीरे हम लोग राई से पहाड़ खड़ा कर सकते हैं—

करत-करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत-जात तें, सिल पर होत निसान॥

अगर हम अपने समय का चौबीसवाँ हिस्सा भी रोज किसी उपयोगी काम में नियमित रूप से खर्च करें तो हम बड़ा भारी जिम्मेदारी ढोने के लायक हो सकते हैं।

किसी बड़े भारी अनुभवी आदमी ने लिखा है कि हम लोग समय का ठीक तरह से प्रयोग नहीं करते इसीलिये समय हमारा दरवाजा ऐसा बेमौके खटखटाता है, जब हम उसका स्वागत करने के लिये एकदम तैयार नहीं रहते।

शिक्षा शक्ति है। जो कुछ नयी जानकारी तुम हासिल करोगे, जो कुछ शिक्षा तुम प्राप्त करोगे, तुम्हारा भविष्य उससे सुधरेगा। जीवन में हम जो कुछ लेना चाहते हैं उसका अनुमान हमारी तैयारी से होगा। जीवन में सबसे बड़ी कमाई आत्मोन्नति है। इससे जो लाभ तुम उठा सकते हो और कहीं से प्राप्त नहीं है।

तुम्हारा संदेश

तुम्हें यह जानना जरूरी है कि ईश्वर ने तुम्हें यहाँ किस लिये भेजा है। उसका संदेश मुहर में बन्द करके तुम्हारे हृदय में रखा है। तुम्हीं मुहर को तोड़ कर उसे बाहर निकाल सकते हो।

एक अमरीकन की कथा है। ईश्वर ने उसे प्रभूत संपत्ति दी थी। स्कूल में वह बढ़ियाँ चित्रकारी कर लेता था। उसके मित्रों ने समझा कि यह चतुर चित्रकार होगा और आग्रह कर उसे पेरिस भेजा। तीन वर्ष की कड़ी शिक्षा से उसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। वह घबड़ाकर चला आया और खेती करने लगा। इस समय वह अमरीका में सबसे बड़ा किसान है और आधुनिक रीति से खेती करने में आदर्श है। हर साल वह कृषि-संबंधी नई जानकारी के लिये बाहर (विदेशों में) जाता है। हजारों आदमी उसके खेत में काम करते हैं। छोटे मोटे किसानों की वह सदा सहायता करता रहता है। ईश्वर के संदेश को उसने समझ लिया और उसे सुनाकर वह लोगों का उपकार कर रहा है। अगर इसी व्यक्ति कोअपनी दशा सुधारने का अवसर न मिला होता तो उसका भविष्य कितना अंधकारमय रहता।

संसार में इस तरह के हजारों आदमी मिलेंगे जो केवल जीविका के लिये मारे-मारे फिर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने अपनी योग्यता नहीं समझी है और अंडबंड काम में लग गये हैं। जिस

काम के लिये ईश्वर ने उन्हें बनाया नहीं है उसी में लगकर वे अपनी शक्ति बुद्धि और योग्यता का ह्रास कर रहे हैं। अगर इतना श्रम वे अपनी ठीक श्रेणी में करें—अर्थात् उस काम में जिसके लिये ईश्वर ने उन्हें बनाया है—तो वे अधिक सफल और सुखी हो सकते हैं।

इस तरह व्यक्तियों के दुरुपयोग से समाज की जो हानि हो रही है उसका अनुमान करना कठिन है। इन लोगों का काम करना ठीक गोल छेद में चौकोर खूँटी को गाड़ने का यत्न करना है।

कितने काम ऐसे हैं जिनमें गलत आरंभ का फल बड़ा ही विषम होता है और कितने पेशे ऐसे हैं जहाँ एक बार घुसकर फिर निकलना कठिन है। प्रायः देखने में आता है कि एक काम में लग जाने के बाद एकाएक उसे छोड़कर दूसरे में घुसने का रास्ता नहीं मिलता और हम हाथ मल-मलकर रह जाते हैं।

इसलिये किसी काम के उठाने के पहले हमें यह निश्चय कर लेना चाहिये कि यह हमारे लिये उपयुक्त है अथवा नहीं। अगर तुमने अपने उपयुक्त काम नहीं तलाश कर लिया है तो तुम्हारी बुरी गति होगी। उस काम में तुम्हारी शक्ति और योग्यता का व्यर्थ ह्रास होगा। तुम्हें उस काम से संतोष नहीं होगा और न उसमें तुम्हारी तबियत लगेगी। वह काम तुम्हें भार-सदृश प्रतीत होगा।

अगर किसी काम में तुम्हारी तबियत न लगे, अगर वह तुम्हें सुखकर प्रतीत न हो, अगर उसमें हाथ डालने पर तुम्हारे हृदय की तंत्री उसी का राग न अलापे तो समझ लो कि वह काम तुम्हारे उपयुक्त नहीं है। अगर तुम्हारे काम में तुम्हारी तबियत लगे, अगर उसे करने के लिये तुम्हारे मन में नित्य नया उत्साह उठे, अगर तुम्हारी इच्छा उसे करने के लिये बढ़ती रहे तो तुम्हें समझना चाहिए कि उपयुक्त काम मिल गया है।

अगर रुचि के अनुरूप काम नहीं मिला है तो उन्नति नहीं हो सकती। अगर हमारी रुचि कला में है तो कल-पुर्जों में पड़े रहना हमें कष्टकर होगा। अगर हमारी रुचि व्यवसाय में है तो बैठे-बैठे कलम चलाना अखरेगा। जिस काम में हमारा जीवन बीतना है वह हमें रोचक होना चाहिए। जिस काम से ज्ञानेन्द्रियों पर जोर पड़े, मन का क्षोभ हो वह विकास का मार्ग रोक देता है।

ईश्वर ने प्रत्येक आदमी को जुदा-जुदा काम के लिए भेजा है। पर उसे तलाश करना कठिन है। कितने नवयुवक चाहते हैं कि उनकी प्रवृत्ति इतनी स्पष्ट होनी चाहिए कि उसमें किसी तरह की भूल न हो सके। पर यह सदा ठीक नहीं हो सकता। साधारणतः तो ऐसी बात देखने में नहीं आती। जो लोग इस संसार में अपनी अमर कीर्ति छोड़ गए हैं उनमें भी यह बात देखने मे नहीं आई थी। कभी-कभी इसकी प्राप्ति अचानक हो जाती है।

बेल महोदय का झुकाव टेलीफोन की तरफ नहीं था। उनका यह अविष्कार अचानक घटना थी। वे साधारण अध्यापक थे। एक दिन उन्होंने देखा कि रस्सी के सहारे १६० गज की दूरी पर से दो आदमी बातचीत कर सकते हैं। इसी से उनके हृदय में भाव जगा कि क्या इस तरह दूर-दूर तक आवाज नहीं फेंकी जा सकती। अब तो यह साधारण बात हो गई। कोई भी आदमी इस तरह का परिणाम निकाल सकता है।

यहीं उसके आविष्कार का आरंभ हुआ। वे उसकी धुन में लग गए और एक दिन वह आया जब उन्होंने संसार के सामने सबसे अद्भुत चीज रख दी।

कितनों का यही हाल है। महात्मा गाँधी बैरिस्टर थे और रुपया कमाने के लिए अफ्रीका गए थे। सत्याग्रह के मंत्र का

जप उन्होंने बालकाल से ही नहीं किया था। पर प्रवासी भारत-वासियों की हीन दशा ने उन्हें चिंतित कर दिया और उन्हें एकाएक यह तरकीब सूझी।

तुम्हारी प्रवृत्ति किस ओर है इसका पता लगाने के लिए श्रम करना पड़ेगा। दस-बीस काम इस तरह के मिलेंगे जिसमें तुम्हारी रुचि समान है। पर उनमें से एक ही काम होगा जिसे तुम सबसे अधिक पसंद करोगे और उसी को तुम्हें ढूंढ़ निकालना है। चाहे वह किसी तरह का काम क्यों न हो, अगर तुम्हारे मन की प्रवृत्ति उस ओर है तो उसे ही तुम्हें ग्रहण करना चाहिए।

आजकल रुपये की उपासना सबसे अधिक हो रही है। यह युग ही भौतिकवाद का युग है। इस युग में मन की प्रवृत्ति या झुकाव का पता लगाने में आर्थिक प्रलोभन से सदा बचते रहना चाहिये। हम अपने घरवालों को रुपये के पीछे दीवाना देखते हैं तो स्वभावतः हमारे हृदय में ये ही भाव उठेंगे कि इस संसार में जो कुछ है रुपया है। इसके अतिरिक्त कुछ नहीं है।

केवल रुपया कमाने के लालच से किसी पेशे को पकड़ना सबसे भारी भूल है। हमें इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि हमारे चरित्र पर इसका कैसा असर पड़ता है। जो काम हम उठाएँ उसका उद्देश्य हमारा चरित्र-गठन, विकास और उदार आदर्श होना चाहिए।

अगर हम किसी ऐसे पेशे को ग्रहण करते हैं जिसमें हमारी मनुष्यता का ह्रास हो हमारी योग्यता घट जाय, हम ऊपर उठने के बजाय नीचे गिरते जायँ, हम में लालच, स्वार्थ, अभिमान का बढ़ती हो तो इससे बढ़कर मानव-समाज का दूसरा अपकार हमसे हो ही नहीं सकता। ऐसा आदमी अपने साथ और ईश्वर के साथ विद्रोह और विश्वासघात करता है।

किसी काम को हम ग्रहण करें तो हमारा पहला उद्देश्य मनुष्यत्व को सँभालना होना चाहिए। नवयुवकों को समझना चाहिए कि यह जीवन पाठशाला है, इसमें रहकर हमें अपना विकास करना है, अपनी योग्यता को प्रस्फुटित करना है। हम तभी पूर्णता को प्राप्त हो सकते हैं, जब हम अपनी सारी योग्यता का पूरी तरह से विकास कर दें।

अगर पुत्र अपने जीवन के झुकाव की तलाश में है तो पिता का धर्म है कि वह उसे बतलाए कि तुम्हें ऐसा काम तलाश करना चाहिए जिसमें तुम मानव समाज का भी कुछ उपकार कर सको उसे समझना चाहिए कि तुम अपने सामने महात्मा गाँधी और लोकमान्य तिलक का आदर्श रखो। अगर इन दोनों महानुभावों के हृदय में अपनी ही उन्नति की कामना होती तो आज ये संसार का इतना उपकार किस तरह कर सकते। महात्मा गोखले अगर रुपया कमाना ही चाहते तो वे लाखों की संपत्ति बटोर गए होते, पर भारतीय जनता को आज वे इस तरह जगा न सके होते। मालवीयजी अगर चाहते तो आज वकालत में सरनाम हो गए होते, पर 'काशी विश्वविद्यालय' हमें देखने को नसीब न हुआ होता।

किसी महात्माके जीवन के दोनों पहलुओं का परिणाम दिखाकर प्रत्येक पिता अपने पुत्र के हृदय में उदारता का भाव भर सकता है। हृदय की रुक्षता निकाल सकता है। इतनी शिक्षा पाकर वह फिर भी स्वार्थी नहीं बना रह सकता और रुपये कमाने को ही अपने जीवन का लक्ष्य नहीं बना सकता।

मनुष्यत्व खोकर अगर विश्व की संपत्ति भी मिल जाय तो उसे नहीं ग्रहण करना चाहिये। मर्यादा की रक्षा करते हुए अगर हमें कुलीगीरी भी करनी पड़े तो कोई लज्जा की बात नहीं है। पर हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिस पेशे को हम ग्रहण

करते हैं उससे हमारी उन्नति होती है। अगर तुम जज या मजिस्ट्रेट हो सकते हो और ईमानदारी से काम कर सकते हो तो कोई कारण नहीं कि तुम पेशकार ही बने रह जाओ। हमें जीवन के दोनों पहलुओं को सुधारना है।

अगर मनुष्यत्व की रक्षा होते हुए तुम्हें ऊँचे उठने की संभावना है तो तुम नीचे रहकर संतोष न करो। हम आरंभ में ही कह चुके हैं कि इस संसार में आकर तुम्हें अधिक-से-अधिक फल प्राप्त करना है। इसमें किसी तरह भी पीछा छुड़ाने का यत्न न करो। सीधे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ो और ईश्वर की मंशा पूर्ण करो। यही तुम्हारा परम कर्तव्य है।

अपने लक्ष्य को किसी तरह गिराना महापाप है ईश्वर की दृष्टि में अपराध है। प्रायः देखने में आता है कि कितने ही नवयुवक ऐसे पेशे अख्तियार कर लेते हैं जिन्हें उनसे आधी योग्यता रखनेवाला आदमी भी सपन्न कर सकता है। वे उसी में रहकर ऊपर उठने के लिये यत्न करते हैं पर वे यह नहीं समझते कि उनमें कितनी बुरी आदत पड़ती जा रही है। उस हीन दशा के वे प्रतिदिन आदी होते जा रहे हैं और एक दिन वे उसी में संतोष समझने लगेंगे। इसलिये हमें सदा ऊँचा आदर्श रखना चाहिए। क्योंकि इससे हमारी सदा ऊपर उठने की अभिलाषा बनी रहेगी।

हमें कोई भी ऐसा पेशा नहीं अख्तियार करना चाहिए जिससे हमें अपनी अच्छी आकांक्षाओं के विकास का अवसर न मिले इस तरह के काम—जो हमें नीचे गिरानेवाले हैं—हमारे उत्साह को भंग कर देते हैं।

जिस किसी काम से हमारी उन्नति मारी जाय, हमारी योग्यता का पूर्ण विकास न हो सके, हम बौने हो जायँ, उसे हमें

छोड़ देना चाहिए। जितने काम ऐसे हैं जिन्हें करने में किसी तरह की हानि नहीं दिखलाई देती, पर उनसे मनुष्य की योग्यता का पूर्ण विकास नहीं होता। उनके करने में उन गुणों का विकास नहीं होता, जिनसे हम सबसे उत्तम बन सकते हैं। कितने काम ऐसे हैं जो प्रकृत्या आदमी को आलसी बनाते हैं।

पर कितने पेशे ऐसे हैं, जैसे—शराब बेचना, जिनका असर ही ह्रास होता है। कितने ऐसे हैं जो मनुष्य को रूखा और बेमुरौवत बना देते हैं। इसी तरह कितने पेशे ऐसे भी हैं जिनमें दया नहीं रह जाती। हृदय की सरलता सूखकर पत्थर हो जाती है।

इसका कारण यह है कि हमारे आस-पास की परिस्थिति का प्रभाव हमारे हृदय पर पड़ता है और हमारे चरित्र का गठन उसी तरह का हो जाता है।

कितने पेशे ऐसे भी होते हैं जिनमें तुम्हें जीविका का अच्छा सहारा है, पर तुम्हारा उत्थान नहीं हो सकता। उनमें रहकर तुम्हारा विकास नहीं हो सकता, तुम ऊपर नहीं उठ सकते। इसलिये जीविका के लिये भी तुम ऐसे पेशे में न पड़ो जिससे तुम्हारा विकास मारा जाय। तुम्हारी मौलिकता का ह्रास हो, तुम्हारी बुद्धि तीक्ष्ण न हो सके। तुम्हें ऐसा कोई भी पेशा नहीं ग्रहण करना चाहिए जिससे तुम मानव-समाज का कुछ भी उपकार न कर सको या जिससे शरीर और स्वास्थ्य का नाश हो। जिस काम के करने में अस्वास्थ्यकर जगह में रहना पड़े उसे भी मत ग्रहण करो। ऐसी जगहों में जब पेड़-पौधे नहीं जी सकते तो मनुष्यरूपी पौधा कैसे जी सकता है।

ऐसे पेशे को ग्रहण करो जिसका उद्देश्य अच्छा हो, जिसके पीछे उच्च आकांक्षाओं का सहारा हो। जिस पेशे को ग्रहण कर रहे हो उसमें काम [illegible] की अवस्था का अध्ययन करो कि

इस पेशे का उनके जीवन पर कैसा असर पड़ा है। क्या इस पेशे में आकर वे उदारचित्त हैं, बुद्धिमान हैं, कृपालु हैं, दूसरों की सहायता में तत्पर रहते हैं। क्या समाज उनसे किसी तरह की आशा करता है? क्या समाज में उनकी इज्जत मर्यादा है? पर ये सब बातें तुम्हें एकाकी उदाहरण से नहीं मालूम हो सकतीं। तुम्हें उस पेशे में जानेवालों के समुदायिक जीवन पर विचार करना चाहिए।

हमने ऐसा पेशा ग्रहण कर लिया है जिससे हमारे चरित्र का ह्रास हो रहा है। हमारा उत्थान होकर हमारा पतन हो रहा है। हम अच्छे न बनकर दिन-दिन बुरे बनते जा रहे हैं। क्या इस तरह का पेशा ग्रहण करना उचित है, जिसे हमारी सदिच्छाएँ न स्वीकार करें, जिसे हमारे मन की उच्च वृत्तियाँ घृणा से देखें। जीवन का आधा हिस्सा तो इसी में समाप्त हो जाता है कि हमने उपयुक्त पेशा ग्रहण किया है या नहीं। जब तक हमें अपने काम से उत्साह न हो हम अपनी सारी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकते।

जिस काम के करने से हमारा जी घबराता है, हमारी तबियत जिसे करना नहीं चाहती उस काम में हमें सफलता कभी भी नहीं मिल सकती। यह संभव है कि दृढ़व्रती हर तरह की कठिनाइयों का सामना करके भी अपना कदम आगे बढ़ाता जायगा और सफलता उसे आलिंगन करेगी ही, पर उसका काम अमर नहीं होगा और उसे संतोष नहीं होगा। सच्ची सफलता के एक भी लक्षण उसमें दृष्टिगोचर नहीं होंगे।

इस तरह के स्कूल हर शहर और गाँवों में होने चाहिएँ जहाँ रहकर लड़के इस बात का पता लगाएँ कि ईश्वर ने उन्हें कौन-सा संदेश लेकर भेजा है। अमरीका में इस तरह के प्रबंध की व्यवस्था हो रही है और आशा की जाती है कि थोड़े ही दिनों में वह

इस तरह का प्रबंध हो जायगा कि नवयुवकों की सहायता के लिये चतुर व्यापारी काम करेंगे और उन्हें उचित और उनकी योग्यता के अनुसार पेशा ढूँढ़ देने में सहायता करेंगे।

अगर लड़के को उचित शिक्षा मिलती जाती है तो उसके खेलने की और काम करने की अवस्था में घोर अंतर नहीं डालना चाहिए। खेल की ओर उसकी प्रवृत्ति देखकर भी कभी-कभी उसके मन की प्रेरणा का पता लगता है इसलिये एक अवस्था से उसे दूसरी अवस्था में धीरे धीरे ले जाना चाहिए। ताकि उसे किसी तरह का अन्तर न प्रतीत हो।

कोई कारण नहीं है कि एक बच्चे को खेल की सामग्री में जितना आनंद मिलता है, एक बड़े आदमी को काम में भी उतना ही आनंद न मिले। जिस तरह लड़के से जवान हो जाता है उसी तरह खेल से काम आरंभ हो जाना चाहिए। जिस तरह लड़कों के लिये ईश्वर ने खेल बनाया है उसी तरह जवानों के लिए काम बनाया है।

आदमी का चेहरा देखकर ही कहा जा सकता है कि इसने अपने लिये ठीक पेशा नहीं तलाश किया है। चेहरे की मुर्दनी, उदासीनता, काम का बोझ-सा प्रतीत होना ही यह बतला देता है। अगर अपने अपने काम से सब संतुष्ट हैं तो समझ लेना चाहिए कि सबको अपने अनुरूप काम मिल गया है और इससे संसार की सुख-शांति बढ़ेगी। लोग इस समय अशांत, दुखी और अस्तव्यस्त क्यों हैं? क्योंकि उन्हें अनुरूप पेशा नहीं मिल सका है, उनकी प्रबलतम शक्ति भी काम में रुचि नहीं रखती। यह दुरवस्था साधारण मुहर्रिर और किसान से लेकर बड़े-से-बड़े ओहदेवाले तक में हो सकती है।

हम समझते हैं कि अगर हम यह काम छोड़कर (जिसे हम अपने अनुरूप नहीं समझते) दूसरे काम में जायें (जो हमारे

योग्य है) तो हमारी आमदनी दूनी होने की संभावना है। पर इस डर से नहीं जाते कि कहीं यह तो मिले ही नहीं, वह भी हाथ से चली जाय। हममें से जिनके विचार इस तरह के हैं वे अपने में कुछ ऐसी योग्यता देखते हैं जिसके अनुरूप उनका वर्तमान काम नहीं है, पर उनके ऊपर इस तरह का भार है कि वे उस काम को छोड़कर दूसरे काम में हाथ नहीं डाल सकते। इससे वे उसी आधी रोटी से ही गुजारा करते हैं और अपने भविष्य को नष्ट कर देते हैं।

किसी नवयुवक में उत्तम प्रतिभा है, उसे देखने से पता लगता है कि वह बड़ा बड़ा काम कर सकता है पर वह अपना भविष्य ऐसे पेशे में पड़कर नष्ट कर रहा है, जो उसके योग्य किसी भी तरह नहीं है। उस काम में उसकी योग्यता का बहुत कम हिस्सा काम में आता है। उस नवयुवक को देखकर किसे दुःख न होगा।

कभी-कभी इस तरह की बातें अचानक हो जाती हैं और कभी-कभी उस नवयुवक की बेजानकारी के कारण। एक नवयुवक कालेज से ताजा निकलता है। काम करने की अभिलाषा आग की तरह उसके हृदय में जल रही है। वह न आगा देखता है न पीछा। जो काम सामने आता है उसे उठा लेता है; उस समय वह यह नहीं देखता कि अमुक काम उसके अनुरूप है अथवा नहीं। उससे अच्छा काम उसे नहीं मिलता इसलिये वह उसी काम में पड़ा रहता है। समय-समय पर उसकी तनख्वाह भी बढ़ती जाती है इसीलिये उसकी आशा जरा हल होती जाती है और इसी तरह वह अपना जीवन उसी साधारण काम में नष्ट करता है जब कि वह अध्यवसाय से अच्छे-से-अच्छा काम कर सकता है, अगर उसे उपयुक्त पेशा मिल जाय।

इसी को हम गोल छेद में चौकोर खूँटी का गाड़ना कहते हैं उनकी असाधारण योग्यता देखकर उनके मालिक उन्हें उसी काम में फँसा रखना चाहते हैं। इस तरह बहुत-सा समय प्रलोभन के फेर में खोकर अन्त में उन (नवयुवकों) की आँखें खुलती हैं और वे देखते हैं कि उन्होंने भारी भूल की है। उस समय वे देखते हैं कि अब तो उलटफेर का समय नहीं रहा, वह हो ही नहीं सकता।

यहीं आरंभ की भूल का कुफल मिलता है। जिस नवयुवक में अध्यवसाय होगा। वह इस तरह की असुविधाओं को पार करके कुछ अवश्य बढ़ जायगा। पर इतनी उन्नति तो अध्यवसायी सुस्त आदमी भी कर सकता है। इस अवस्था में पड़कर कितने नवयुवक अपने को ठगना आरम्भ करते हैं वे अपने हृदय को सन्तोष देते हैं कि जो कुछ मुझसे हो सकता है कर रहा हूँ। इस तरह कितने ही होनहार नवयुवक अपना जीवन बिताते हैं।

कभी कभी माता-पिता भी इस दोष के भागी होते हैं। अपनी सन्तति को जबर्दस्ती वे ऐसे काम में लगा देते हैं जिसे करने की उनमें योग्यता नहीं है। परिश्रम और अध्यवसाय से वह आगे बढ़ता है, अच्छी तनखाहें पाने लगता है और अभिभावक इतने से ही सन्तोष कर लेते हैं। उसे दूसरे देश में नहीं जाने देते, जहाँ वह अपनी विशेष उन्नति कर सकता है। कहीं-कहीं तो मार्ग की कठिनाइयों का भय दिखलाकर ही उसे आगे बढ़ने से रोकते हैं और वह अपनी योग्यता के अनुरूप काम नहीं पा सकता।

तुरन्त ही आमदनी होने के प्रलोभन ने कितने ही नवयुवकों का सर्वनाश किया है इससे बढ़कर कड़ी चट्टान दूसरी नहीं है। तुरन्त आमदनी की चाट में वे अपने भविष्य को नष्ट कर देते। उस समय वे इस बात पर विचार नहीं करते कि भविष्य में

हम जो कुछ हो सकते हैं उसके सामने वर्तमान की यह तनख्वाह कुछ नहीं है।

चाहे इस जीवन में तुम्हें जो कुछ करना पड़े इस तरह के प्रलोभनों मे मत फँसो। वर्तमान के थोड़े लाभ के लिये अपने सारे भविष्य पर पानी मत फेर दो। हमेशा इस बात का पता लगाओ कि तुम्हारी योग्यता के अनुसार सबसे उत्तम काम क्या है। अगर इस तरह के काम की तैयारी में अथवा मिलने में कुछ समय लग जाय तो कोई परवा मत करो। इस बात पर सदा ध्यान रखो कि यह तुम्हारी प्रवृत्ति के अनुकूल है। अगर इसके लिये तुम्हें एक से दूसरे में भी जाना पड़े तो परवा मत करो।

एक लड़की किसी कारखाने में काम कर रही थी। उसका काम एकदम संतोषजनक नहीं था। कारखानेदार उसे निकाल देना चाहता था, पर उसके मन में दया आई और उसने उस लड़की को बुलाकर पूछा। उसने उत्तर दिया कि यह काम मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता मैं सदा बेमन से काम करती हूँ। आप-से-आप मेरे हाथ पैर नहीं चलते। मैं जबर्दस्ती चलाती हूँ। रंगसाजी की ओर मेरा झुकाव है। अगर उस काम में आप मुझे रख दें तो मैं आपको संतुष्ट कर सकती हूँ। कारखानेदार दयालु था। लड़की की बात उसे जँच गई और उसने तुरत उसे बदल दिया। बात सच निकली, उस विभाग में जाकर लड़की ने वह योग्यता दिखलाई कि कारखानेदार विस्मित हो गया।

हमारे मार्ग में सबसे बड़ी कठिनाई तलाश करने की है कि यह काम हमारे उपयुक्त है अथवा नहीं। कितने आदमी बिन समझे बूझे ही काम में लग जाते हैं। वे यह भी नहीं जानते कि यह काम कैसा है और इसका क्या परिणाम होगा। थोड़े ही दिनों में उनका उत्साह मंद पड़ जाता है और वे देखते हैं कि

वह उसके योग्य नहीं है, पर वे उसमें इस तरह जकड़ गए हैं कि उससे छुटकारा भी नहीं पा सकते। कितने लोग ऐसे भी हैं जो तैयारी की कठिनाई से ही घबरा उठते हैं और आसान देखकर कोई ऐसा पेशा उठा लेते हैं जो उनके अनुरूप नहीं होता।

तैयारी की कठिनाई भी कितने ही नवयुवकों का भविष्य नाश कर देती है। एक लड़का वकीली में बड़ा मजा देखकर वकालत पढ़ने लगा। दो महीने में ही उसकी तबियत ऊब गई। उसने वकालत पढ़ना छोड़ दिया। अपने पिता के पूछने पर उसने कहा—"मुझे खेद है कि मैंने इसमें अपना इतना समय नष्ट किया।"

किसी काम के सीखने में कठिनाई पड़ती है और यह स्वाभाविक है कि नवयुवक ऊकता और घबरा जायेंगे। पर अगर वह काम उनके अनुरूप निकला और एक बार भी उनको तबियत लग गई तो फिर उन्हें उसमें बराबर आनंद मिलता रहेगा। पर अभाग्यवश इस देश में यह अवसर कम ही को मिलता है। अपने पेशे को वे जीवन-मरण का सवाल नहीं समझ लेते। उनका संबंध इतना ढीला रहता है कि वे आसानी से अलग किये जा सकते हैं। उनमें इतनी दृढ़ता नहीं है कि वे अंत समय तक उसपर अड़े रहें और अपने ध्येय तक पहुँच जायँ।

किसी काम को हाथ में लेने के पहले अपनी योग्यता की परीक्षा कर लो। उसके बाद ऐसा काम तलाश करो जिसमें तुम अपनी योग्यता को पूरी तरह दिखला सको। जिस काम को तुम ग्रहण करो उसे अपने जीवन का एक अंग समझ लो और उसे इस तरह करो जिसमें तुम अपनी सारी योग्यता का प्रतिपादन कर सको।

वंशपरंपरागत कोई पेशा नहीं होता। यह ख्याल कभी भी मन में न लाओ कि तुम्हारे पिता, चाचा या भाई वकील हैं इसलिये तुम भी वकील बनो। किसी की प्रेरणा या दबाव में आकर भी कोई पेशा न ग्रहण करो। दूसरों को उसी में मालामाल होते देखकर भी उसे मत ग्रहण करो। भलेमानुसों के अनुरूप समझकर भी कोई काम मत ग्रहण करो। केवल 'मर्यादापूर्ण पेशे' के फेर में पड़कर कितने नवयुवकों ने अपना सर्वनाश किया है। जिस पेशे को उन्होंने इस धारणा से ग्रहण किया कि इसमें हम अपनी योग्यता पूरी तरह दिखलाएँगे उसी में उन्होंने अपनी अयोग्यता का पूरा परिचय दिया।

जिस समय तुम यह समझ लो कि हमें अपने अनुरूप पेशा मिल गया है तो इधर-उधर मत देखो। अपनी सारी योग्यता उसमें लगा दो तुम्हारी पकड़ दृढ़ होनी चाहिए। किसी तरह के भी प्रलोभन में पड़कर तुम वहाँ से न हटो कठिनाइयों की संभावना तुम्हें उदास या हताश न कर दे।

दृढ़ता, तत्परता और अध्यवसाय ही हमारी सफलता के मूल हैं, क्योंकि इससे दूसरों का हमपर विश्वास जमता है और यही आजकल सबसे बड़ी बात है। इससे हमें हजारों तरह से सहायता मिलती है। दृढ़व्रती की प्रतिष्ठा सभी करते हैं और उसकी सहायता के लिये सदा तैयार रहते हैं। सबको इस बात का विश्वास रहता है कि ऐसे आदमी विफल मनोरथ नहीं हो सकते। उनकी दृढ़ता और तत्परता ही उनकी सफलता के लिये प्रमाण होती है।

जीवन के संघर्ष में प्रवृत्त होने के पहले उस अंतरात्मा की मंद ध्वनि पर गौर कर लो और उसे अच्छी तरह पहचान लो, क्योंकि कभी-कभी नीच भाव भी उसे अपने वशवर्ती करके

प्रेरित करते हैं। यह बात सदा ध्यान में रखो कि तुम्हारा बनना और बिगड़ना दोनों इसी पर निर्भर है। इसलिये तुम्हें सोच-समझकर ऐसा पेशा पसंद करना चाहिए जिससे तुम्हारा उत्थान हो सके, तुम्हारी आत्मिक उन्नति हो, तुम सुखी रहकर देश और समाज का उपकार कर सको और अंत में जो तुम्हारे आश्रित हैं उन्हें सुख पहुँचाओ।

१६

सुख के साधन

किसी अनुभवी लेखक ने लिखा है कि हमें प्रत्येक घटना के अच्छे पहलू पर भी वही दृष्टि रखनी चाहिए जो दृष्टि उसके बुरे पहलू पर रखते हैं। गंगाजी की बाढ़ आई। खरीफ की फसल डूब गई। हजारों मन का नुकसान हुआ। पर क्या साथ-ही-साथ लाभ भी नहीं होता? नई मिट्टी पड़ जाती है और खेतों की पैदावार बढ़ जाती है।

अगर हम किसी काम के बुरे पहलू पर ध्यान न देकर सदा उसके अच्छे पहलू पर ही दृष्टि रखें तो हमारा बड़ा उपकार हो सकता है। इसमें सभी सुखी रहेंगे और यह जीवन सुख का आगार बन जायगा।

कितने लोग ऐसे निराशावादी मिलते हैं जिन्हें सुख के कोई भी लक्षण नहीं दिखाई देते। उन्हें चारों ओर अँधेरा दिखाई देता है। इस तरह वे धीरे धीरे अपने सुख के सभी द्वार बंद कर देते है। आशंका भय, संदेह और चिंता में पड़कर वे अपने सुख के सभी साधनों को खो देते हैं।

केवल चाहने से सुख नहीं मिल सकता है। उसके पाने के लिये यत्न भी करना चाहिए। अगर हम सुखी होना चाहते हैं तो हमें उचित है कि हम अपने हृदय का द्वार सदा खुला रखें और उसमें प्रकाश आने दें।

इस जीवनमें सुख का दूसरा उत्तम मार्ग नहीं है। सुखी होने

के लिये सबसे उत्तम मार्ग यही है कि किसी चीज के बुरे पहलू पर दृष्टि मत डालो। सदा अच्छी बातों की ही कल्पना करते रहो। इसमें जादू का सा असर है। यह सारी बीमारियाँ दूर कर देता है, चिंता के गहरे-से-गहरे घाव को भर देता है और जलते हृदय को शान्ति प्रदान करता है। चाहे उसके पास धन का सर्वथा अभाव हो, पर यदि उसका हृदय प्रसन्न है तो उसके चारों ओर सुख ही सुख है। पर मनहूस आदमी कुबेर होकर भी सुखी नहीं हो सकता।

इसी तरह के एक मनहूस आदमी को मैं जानता हूँ। वह बड़ा ही धनी था। पर जहां कहीं वह जाता मनहूसियत छा जाती। उसके मुँह से हँसी की बात कभी भी नहीं सुनी गई। उसे दाँत निकालते कभी भी किसी ने नहीं देखा। वह जितना मनहूस है उतना ही सूखा, लोभी और स्वार्थी है। उसके लड़के तक उससे नफरत करते हैं। बिचारी पत्नी के लिए तो दूसरा चारा नहीं है उसे तो सब कुछ बर्दाश्त करना ही पड़ता है। जहाँ तक मेरा अनुमान है उसके मरने पर एक आदमी भी दुःख नहीं जाहिर करेगा। क्या इस आदमी का जीना किसी प्रयोजन का है? मैं तो ईश्वर से यही वरदान मांगूँगा कि मुसकुराता चेहरा दे, चाहे दरिद्र ही क्यों न बनाए।

अन्तरात्मा की प्रसन्नता और चेहरे की मुसकुराहट ही इस संसार में सब कुछ है। इसी को प्राप्त करना चाहिए। अगर हम इस ससार में मनहूसियत से रहेंगे तो उसका फल हमारी मानसिक दुर्बलता होगी।

आत्मा की प्रसन्नता सबसे बड़ी पुष्टि है। इससे आँखों में प्रकाश चेहरे पर दीप्ति और शरीर की कान्ति बढ़ती है। चेहरे पर आशा के सुललित चिह्न देखने में आते हैं। मनुष्य के लिए यह वही काम करती है जो सूर्य पृथ्वी के लिए करता है। इससे

शरीर में स्फूर्ति आती है। शारीरिक तथा मानसिक योग्यता बढ़ती है।

प्रतिदिन की घटना से हम लोग प्रत्यक्ष देखते हैं कि किस काम से लोगों में सन्तोष, मानसिक पुष्टि, सुख और योग्यता की वृद्धि होती है उससे शरीर स्वस्थ रहता है और बीमारियाँ दूर भागती हैं। इसके विपरीत मनहूसियत का उलटा परिणाम निकलता है। यह तो स्वीकार कर लिया गया है कि उत्साहहीनता बीमारी का घर और शारीरिक योग्यता की जन्मदात्री ही है। इस तरह के व्यक्ति में वह प्राकृतिक योग्यता नहीं रह जाती कि वह बीमारियों का दमन कर सके।

आज शारीरिक दुर्बलता के इस तरह प्रत्यक्ष उदाहरण देखने में क्यों आ रहे हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि उत्साह भंग होने से उनका साहस घट जाता है। यही कारण है कि वैद्य लोग बीमार को हमेशा प्रसन्न और खुश रखना चाहते हैं उदास करनेवाला अथवा दुखी करनेवाला कोई भी संवाद उन्हें नहीं सुनाना चाहते। इस तरह से रोगी के अच्छे होने की अधिक सम्भावना रहती है। कितने असाध्य रोगी केवल प्रसन्न रखकर रोग मुक्त किए गए हैं। प्रसन्न करनेवाली बातोंमें जादू भरा रहता है। उनसे शरीर और मन दोनों को सहायता मिलती है। उनसे मन स्थिर होता है। मानसिक स्थिरता का असर शरीर पर पड़ता है। इससे स्वास्थ्य सुधरता है, ताकत बढ़ती है।

अपने को खुशी या दुखी बनाना हमारे हाथ में है। अपनी इच्छा के अनुसार हम अपने को सुखी अथवा दुखी बना सकते हैं। हमारे अन्तःकरण में दो मेहमान विराजमान हैं। एक तो हमें सुखी करता है जिसका नाम प्रसन्नता प्रेम, उल्लास, आशा, स्वास्थ्य और जीवन-प्रदीप है। दूसरा हमें दुखी करता है। जिसका नाम मनहूसियत, उदासीनता, घृणा, स्वार्थ, डाह और ईर्ष्या है। जिस

समय हम जिस मेहमान की उपासना करने लगते हैं उस समय हम अपने को वैसा बना लेते हैं। हम जिसकी चाहे पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ उपासना कर सकते हैं। हममें से प्रत्येक दावे के साथ कह सकता है कि हम अपनी आत्मा के मालिक हैं। हम स्वयं अपने भाग्य के विधायक हैं और अपनी इच्छा के अनुसार ही हम हृदयस्थ उस मित्र को निमन्त्रित करने जा रहे हैं।

जितनी बार हम बुरे पहलू पर दृष्टि डालते हैं—इसलिए नहीं कि बुरे पहलू को समझकर हम उसका सुधार करें, बल्कि अपनी अवस्था पर तरस खाने के लिये—जितनी बार हम अपनी अवस्था पर असन्तोष प्रकट करते हैं, और हम उतना ही इन कमजोरियों को दमन करने की अपनी शक्ति का ह्रास कर रहे हैं और अपनी परेशानी को और भी बढ़ा रहे हैं। साथ ही हम यह भी स्वीकार करते हैं कि हमारा शत्रु हमसे प्रबल है और हमारे जीवन को बेचैन, असह्य और अरोचक बना सकता है। इन शत्रुओं को निकाल भगाने का एकमात्र उपाय यही है कि हम लोग प्रसन्नता का द्वार खोल दें और उसे भीतर लाकर इन्हें मार भगाएँ। क्योंकि ये तो माया-मात्र हैं। वास्तविक वस्तु तो स्निग्धता, स्वास्थ्य सौंदर्य और सफलता है। वास्तविक वस्तु के अभाव में ही अवास्तविकता का उदय होता है।

कितने ही लोग ऐसे हैं जिन्होंने प्रसन्नता का द्वार खोलकर, अच्छे पहलू पर विचार कर और उसकी सहायता से रोग से ग्रस्त और जीर्ण-शीर्ण शरीर को भी स्वस्थ्य किया है। बुरे पहलू पर विचार करना छोड़कर उन्होंने अच्छे पहलू पर विचार करना आरंभ किया और इस तरह मानसिक और शारीरिक रोग से मुक्त होकर उन्नति की।

हम लोग अपनी इच्छा के अनुसार इस तरह के बन सकते

हैं। हम लोग अपने हृदय में से बुरे, सड़े गले और गंदे ख्याल निकालकर आशा पूर्ण भले भाव भर सकते हैं।

हमलोगों की दृष्टि सदा अपनी अयोग्यता पर रहती है। हम लोग सदा अपने दुःख दारिद्य पर ही विचार करते रहते हैं। हम लोग सदा भय और आतंक से ही दबे रहते हैं। हम लोग इसमें बुरी तरह निमग्न रहते हैं। हम बाहर दृष्टि ही नहीं डालते। किसी बड़े विद्वान् ने लिखा है—"मैं यथासाध्य यही यत्न करता हूँ कि मुझे किसी बात से पीड़ा न हो। जो कुछ मेरे ऊपर भला या बुरा पड़ता है उसका मैं सहर्ष स्वागत करता हूँ। हममें से जो ऐसा नहीं करते वे घोर पाप के भागी हैं।"

अगर हम विचार करके देखें तो हमें विस्मय होगा कि इस तरह सदा अच्छे पहलूपर विचार करने से हमारे उठने की कितनी अधिक संभावना है। अगर हमने दृढ़ संकल्प कर लिया है तो कठिनाइयाँ और विघ्न-बाधाएँ हमारा मार्ग नहीं रोक सकतीं हम उन्हें अवश्य पार कर जायँगे। इसी तरह की आशा और विश्वास के सहारे कितनी ही माताओं ने अपार संकट झेला है वे इसी विश्वास में संतुष्ट थीं कि एक-न-एक दिन इस विपत्ति का अंत होगा और ईश्वर के विस्तृत साम्राज्य में हमें भी सुख मिलेगा।

इस तरह के उत्साही युवक ऐसी परिस्थिति उपस्थित कर देते हैं कि सारा वायुमंडल सफलता के परिमाणु से भर जाता है। उनके शरीर से शक्ति और ज्योति निकलती है। दुर्बलों में नयी शक्ति का संचार करते हैं। उनकी दृढ़ता रास्ते की सारी खराबियों और कठिनाइयों को दूर कर दूसरों को उत्साह प्रदान करती है। इस संसार में दासता के जितने द्वार हैं उन्हें दूर करने के उतने ही उपाय भी हैं।

प्रभु ईसा मसीह ने भी अपने अनुयायियों से पग-पग पर

कहा है—धैर्य धरो और प्रसन्न रहो। जिस समय वे शूली पर चढ़ाए जा रहे थे उस समय भी उनके मुँह से ये ही शब्द निकलते थे—"संतोष रखो, प्रसन्न रहो। तुम्हारी आत्मा सुखी रहेगी। तुम्हारी प्रसन्नता का अपहरण कोई नहीं कर सकता।" जब तक हम प्रसन्न रहने की आदत नहीं डाल लेते प्रसन्नता हमारे हृदयरूपी दुर्ग में प्रविष्ट नहीं हो सकती। इसी तरह के भाव हृदय को प्रज्वलित करते हैं, आशा को प्रकाशित करते हैं, योग्यता को बढ़ाते हैं, और हमें काम करने के लिये प्रेरित करते हैं।

हमारे हृदय में जो कुछ विचार उठते हैं उनसे एक तरह की प्रतिध्वनि उठती है जिसका असर हमपर बहुत ही अधिक पड़ता है। हमारे विचार का कोई भी विषय क्यों न हो उसका असर केवल हमारे ही चरित्र पर नहीं पड़ता, बल्कि उसका असर हमारे समाज के प्रत्येक व्यक्ति पर पड़ता है। हमारे हृदय में जो कुछ है उसी का प्रकाश हम दूसरों पर डाल सकते हैं। अगर हम मनहूसियत की बातें सोच रहे हैं तो हम उसकी छाया प्रकट करेंगे। हमारे चेहरे से, मन से और आकृति से उसी की छाया चमकेगी। इसके प्रतिकूल अगर हमारे हृदय के भाव सौम्य हैं तो वही सुख और शांति की प्रतिभा अंग-अंग से प्रकट होगी। इससे हम सुखी रहेंगे, हमारा उत्थान होगा, हमारी योग्यता बढ़ेगी।

हमारा जन्म सुख के ही लिये हुआ है। अगर हम दुखी हैं, उदास हैं तो इसका कारण यही है कि हम लोगों ने उदासी लानेवाले विचारों का आलिंगन किया है, बुरे पहलू पर ही विचारना आरंभ किया है। महामति रस्किन ने लिखा है—तुम सुख भोगने के लिये ही उत्पन्न हुए हो और तुम्हारे चारों ओर सुख के बहुमूल्य साधन इकट्ठे कर दिए गए हैं। पर यदि तुम

उन्हें अपने आनंद का साधन नहीं बना सकते तो लाचारी है।

अपने में ही तल्लीन रहना, स्वार्थ में निमग्न रहना, आनंद के द्वार को बंद कर देता है और बहुत-सी ऐसी बातों को रोक देता है जो हमारे जीवन में घटित हो सकती हैं। जो लोग स्वार्थ के वशीभूत होकर दिन-रात अपनी ही चिंता में पड़े हैं जिन्हें दूसरों की परवा नहीं है, उन्हें सच्चा सुख कभी नहीं मिलता। स्वार्थ के चक्कर में वे इस तरह पड़ जाते हैं कि उन्हें यह खबर नहीं होती कि इस तरह वे सच्चे आनंद का मार्ग सदा के लिये बंद कर रहे हैं।

हम लोगों में से कितने लोग ऐसे हैं जो साधारण वस्तुओं के सौंदर्य को—जिससे हृदय अतिशय आकृष्ट होता रहता है—देखते ही नहीं। हम दुःख में सदा इस तरह निमग्न रहते हैं कि इस विश्व के वास्तविक सौंदर्य का हमें पता ही नहीं चलता। यदि वास्तव में देखा जाय तो उनमें इतना अधिक सौंदर्य रहता है कि रुपये पैसे से वे प्राप्त नहीं हो सकते। पर प्रकृति उन्हें मुफ्त में बांट रही है। ये सब चीजें हमारे ही सुख के लिए बनी हैं। किसी कवि ने लिखा है—जिस ईश्वर की लीला से यह पृथ्वी घूमती है उसने प्रत्येक वस्तु को हमारे सुख के लिये बनाया है। हमें उनका हृदय से कृतज्ञ होना चाहिए।

प्रकृति स्वर्ग का उद्यान है। इसमें सौंदर्य का असीम भांडार भरा है जो प्रतिक्षण हमें अपनी ओर बुलाता है। पर हमारी इन्द्रियाँ इस प्रकार सुस्त और बेकार पड़ गई हैं, हमने लाभ और स्वार्थ में पड़कर उन्हें इस तरह मुर्दा बना डाला है कि न तो उनकी बातों को सुनने के लिये कान रह गए हैं, न देखने के लिए आँखें रह गई हैं और न समझने के लिये दिमाग रह गया है। हम लोग स्वार्थ में इस तरह अंधे हो गये हैं कि हमने इस असीम सौंदर्य के लिये अपनी आँखें बन्द कर ली हैं। इस

मधुर राग के लिये कान बन्द कर लिए हैं, हमने आनंद के सभी मार्गों को बंद कर लिया है, जिससे हमारी आत्मा और हमारा शरीर आनंदित हो सकता है।

रुपया कमाने की धुन से हमें कभी-कभी क्षणिक अवकाश मिल जाता है तो हम रुककर जरा देर के लिये प्रकृति पर निगाह डालते हैं। उस समय हम देखते हैं कि इस हृदय-स्रोत में कैसी-कैसी वस्तुएँ बह रही हैं। कौन उत्कृष्ट सौंदर्य हमारे मन को पवित्र कर रहा है। यह सौंदर्य एक क्षण पहले भी उसी तरह विद्यमान था, पर हमें आँखें नहीं थीं कि इन्हें देखें, कान नहीं था कि इन्हें सुनें; हृदय नहीं था कि इतना आनंद लें। इस क्षण यह विश्व हमारे लिये एकदम नया प्रतीत हो रहा है। हम नई दुनिया में आ गए हैं। यह दुनिया इस समय कैसी सुन्दर प्यारी और सुहावनी मालूम हो रही है। चिंता, व्याकुलता और दुःख सुख का इसमें नाम-निशान नहीं है। पर हमारा स्वार्थ, रुपये पैसे की हमारी लालसा अधिक काल तक हमें इस आनंद में नहीं रहने देती। दूसरे ही क्षण फिर उसी नून, तेल और लकड़ी की धुन में व्यस्त हो जाते हैं। इस तरह परम पिता के दिए हुए सभी वरदानों से वंचित रहते हैं।

हम जहाँ कहीं जायँ अपने को उसी अवस्था में पाएँ जिस अवस्था में हमारा मन हमें रखेगा। अगर हम अपने मन को स्वस्थ नहीं रखते तो हमें कहीं भी शांति नहीं मिल सकती। हमारे हृदय में भाव जहाँ कहीं हम जाते हैं वहाँ अपना प्रभाव डालकर उसे अपने अनुरूप बना लेते हैं। इससे हमारा सुख दुःख सब हम पर निर्भर करता है। हृदय तथा मन की सारी चिंताओं की दवा मनुष्य के हाथ में है। स्वार्थ, घृणा, ईर्ष्या तथा द्वेषजनित जितनी मानसिक पीड़ाएँ हैं सबकी दवा उसके पास है। प्रेम, दया, उपकार और सदिच्छा ही इनकी दवा है।

हम इनका सदा प्रयोग करते रहें, फिर हमें उदास होने का कभी भी अवसर नहीं आएगा।

हममें से अधिकांश लोग दुखी इसलिये हैं कि उन लोगों ने अपने मन को ठीक तरह से परिचालित नहीं किया है। उन्होंने उसे यह नहीं सिखाया है कि सुख का साधन उसे किस तरह अपनाना चाहिये। हम लोगों की विचार-प्रणाली ही दूषित है। हम लोग इस तरह का विचार हृदय में लाते हैं जो हमारे संपूर्ण सुख और आनंद को मिट्टी कर देता है। हमें हताश कर देता है; उत्साहहीन बना देता है और अपना अड्डा हमारे मन में बना लेता है। जब तक हम लोग इस तरह के विचारों को आश्रय देते रहेंगे हम सुखी नहीं रह सकते।

जिस दिन हम लोग अपने हृदय और मन का प्रयोग परम-पिता की इच्छा के अनुकूल करेंगे उस दिन से इस संसार में दुःखी, पीड़ित और क्लांत कोई नहीं दिखाई देगा, क्योंकि यह विश्व सौंदर्य का आगार है और वह उससे हमारे हृदय को भर देगा। उस समय हम सब एक स्वर से कहेंगे—हम क्या समझते थे कि ईश्वर हमें ऐसे लीला-उद्यान में भेज रहा है जहाँ आनंद और सुख का स्रोत हमारे लिये बह रहा है। हम जिस तरह चाहें उस में कूद कूदकर नहाएँ।



१७

उच्च और नीच

यह संसार समर-भूमि है जिस दिन मनुष्य यहाँ जन्म लेता है उस दिन से मरणकाल-पर्यन्त उसे संग्राम करना पड़ता है।

सबसे भीषण और व्यापी युद्ध मनुष्य के हृदय में ही सदा होता रहता है। मनुष्य के जीवन के दो पहलू हैं—सदिच्छा और दुर्व्यसन। इन दोनों का युद्ध बड़ा ही व्यापक है। अगर दुर्व्यसन विजयी हो गया और सदिच्छा को उसने दबा दिया अर्थात् अगर मनुष्य ने अधम जीवन बिताना ही निश्चय किया तो उसके सभी गुण धीरे-धीरे नष्ट और लुप्त हो जायँगे। यही इसका मूल्य है।

इन नीचतम वृत्तियों को जन्म इसलिये दिया गया है कि वे उच्चतम वृत्तियों की सहायता करें न कि वे स्वयं राजा बनकर अपनी हुकूमत चलाएँ। मनुष्य को सदा उच्चतम वृत्तियों का ही परिवर्धन और पोषण करना चाहिए। उन्हें उठाकर उस स्थान तक ले जाना चाहिए जहाँ सौंदर्य, आदर्श, भावना, दया, उपासना और आदर का बाजार सदा खुला रहता है। जब तक हमारी उच्चतम वृत्तियाँ वहाँ तक पहुँचने के लायक नहीं बन जातीं हमें इस जीवन का सच्चा सुख नहीं मिल सकता। आदर्श-वाद साधारण वस्तुओं में भी असीम सौंदर्य भर देता है, मनुष्य के सुख और आनंद के साधन का विस्तार बताता है, जीवन का मूल्य बढ़ा देता है और मनुष्य के सभी गुणों को ऊपर उठाकर रख देता है। पर जो लोग जीवन को उच्चतम वृत्तियों को नहीं

जगाते, नीचतम वृत्तियों का ही आश्रय लेते हैं उनकी दृष्टि संकुचित हो जाती है और उनके विकास का दायरा परिमित हो जाता है। चार्वाक-सम्प्रदाय का मत है कि—

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥

पर यह सिद्धांत इतना उच्छृङ्खलता और ओछा है कि कोई भी मनुष्य इसपर आचरण नहीं करता ~ रहता।

जीवन का परम उद्देश्य अपनी यो॰ बढ़ाना है। मन का विकास सौंदर्य की प्यास, जीवन के ॰॰॰ की उपासना आदि का मूल्य, केवल रुपया कमाने में व्यस्त र॰ना अथवा उस कोरी विलासिता में पड़े रहना जो हमारी उच्च आकांक्षाओं को मुर्दा बना देती है—कहीं अधिक है। कितने आदमी ऐसे पड़े हैं जिनकी आत्मा का तो सर्वथा पतन हो गया है पर उनका घर रुपयों से भरा पड़ा है। किंतु वे इन बहुमूल्य वस्तुओं को नहीं खरीद सकते। रुपयों-पैसों से इनका कुछ सरोकार नहीं। इनको तो वही पा सकता है जो हृदय से इनकी प्राप्ति की कामना करता है।

अगर हम लोग सदा हृदय की तंत्रियों को बजाने के लिये केवल उच्चतम अभिलाषाओं को ही जगाएँ तो हम जो आनंद प्राप्त कर सकेंगे वह नीचतम वृत्तियों के जगाने से प्राप्त नहीं हो सकता। इससे हमारा असाधारण उत्थान होगा।

हम सब लोग एक ही दशा में हैं। जो लोग प्रयास करते हैं ऊपर चढ़ जाते हैं और शेष खड़े-खड़े मुँह ताकते रह जाते हैं। जो वहाँ तक पहुँच जाते हैं उन्हें जो आनंद मिलता है उसकी समता वहाँ हो सकती है।

इस संसार में बहुत कम लोग हैं जिन्हें विश्व के सौन्दर्य का वास्तविक आनंद नसीब होता है। कितने तो ऐसे हैं जिन्हें नीच-

तम वृत्तियों के आगे कुछ दिखलाई ही नहीं देता। हम लोग अपने प्रतिदिन के कर्तव्य को बोझ समझते है, लाचार होकर उसे ढोते हैं और यही चाहते है कि किसी बहाने इससे छुटकारा मिले। पर हमारी उच्चतम वृत्तियों का विकास हुआ होता तो हम इसके वास्तविक सौंदर्य को देख पाते कि इन साधारण कामों में भी उत्थान का कितना बड़ा साधन है। हम लोग प्रतिदिन अपने काम पर जाते हैं और मशीन की तरह पीसने लगते हैं। क्या यही जीवन है? एक तरफ तो हम रुपया कमाने में केवल नीचतम वृत्तियों को जगा रहे हैं और दूसरी ओर उच्चतम वृत्तियाँ भागती जा रही हैं।

पर इससे हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि हमें भौतिक वस्तुओं के पीछे नहीं पड़ना चाहिए। हमारा तो केवल यही कहना है कि जो कुछ काम हम करें सबका प्रयोग हमें उच्चतम वृत्तियों के जगाने में करना चाहिए। रुपये की आवश्यकता सबको पड़ती है। इसके द्वारा ही हम जीवन की उपयोगी वस्तुओं को खरीद सकते हैं। रुपया तथा रुपया पैदा करने का मार्ग भी—अगर वह मर्यादित और उदार है—उच्चतम वृत्तियों के जगाने का काम कर सकता है, क्योंकि आदर्श का निर्णय करना तो आत्मा के हाथ में है। अगर हम उच्चतम वृत्तियों के ही जगाने में तत्पर हैं तो नीचतम वृत्तियों का प्रयोग भली-भाँति कर सकते हैं। कितने करोड़पति पाए जायेंगे तो अपने धन का व्यय इस प्रकार करते हैं कि गरीबों को उससे बड़ा उपकार होता है।

कार्य संपादन की योग्यता सबसे अधिक वांछनीय है। अर्थात् जिस के होने की संभावना हो उसे करके चरितार्थ कर देना सबसे बड़ा गुण है। इससे बहुत बड़ा लाभ होता है। हमारा विरोध केवल इतने से है कि इस वृत्ति को अनुचित महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए। मन तथा हृदय के उच्चतम

गुणों के सामने इन्हें नहीं रखना चाहिए। ये दोनों प्रकार की वृत्तियाँ साथ-साथ चल सकती हैं। अगर हम नीचतम वृत्तियों का प्रयोग उच्चतम वृत्तियों को ऊपर उठाने में करते हैं तो हमारा अस्तित्व उत्कृष्ट हो जाता है।

सेठ जमनालालजी बजाज को ही ले लीजिए। अगर आप अन्य मारवाड़ी सज्जनों की भाँति रुपया कमाने में ही व्यस्त रहते तो क्या आज वे मध्यप्रदेश का नेतृत्व लेकर वणिकसमुदाय का मुँह इस तरह उज्ज्वल कर सकते। अब अनुमान कीजिए कि इस त्यागी वैश्य के जीवन का प्रभाव उस समाज के नवयुवकों पर किस तरह पड़ा होगा। इन्होंने जो कुछ किया है उसका अनुमान कीजिए। एक तरफ इन्हें रख लीजिए और एक तरफ उसी समाज के किसी दूसरे धनी को रख लीजिए, जिसने असंख्य धन पैदा किया है और दोनों की तुलना करके देखिए कि आपकी दृष्टि में कौन बड़ा जँचता है।

कितने आदमी ऐसे हैं जिनकी ओर देखकर लोग विस्मय प्रकट करते हैं और कहते हैं कि आज इनके पास इतना धन हो गया, एक दिन ये सड़क पर भीख माँगते थे, हर तरह की विपत्तियाँ इनके ऊपर थीं, पर इन्होंने सबका मुकाबला किया और इतना धन कमाया। क्या हम इन्हें सफल नहीं कह सकते। एकांगी सफलता तो उन्हें अवश्य मिली है, पर जीवन के प्रधान उद्देश्य में वे असफल रहे हैं। वे धन ही कमा सकते हैं हृदय की उच्चतम वृत्तियों को ये नहीं जगा सके। वे अपने को इस लायक नहीं बना सके हैं कि ईश्वर उनसे प्रसन्न होकर उन्हें अपने क्रोड़ में बैठा ले।

मनुष्य को अपनी आत्मा को इतना उच्च बनाना चाहिए कि उसके पास की सभी सांसारिक वस्तुएँ नीचे दब जायँ। उसकी ख्याति उसके व्यक्तिगत गुणों के कारण हो, न कि इन भौतिक

पदार्थों के कारण। जिस आदमी ने नीचतम वृत्तियों के जगाने की चेष्टा में उच्चतम वृत्तियों का नाश कर डाला है उसकी ख्याति इन भौतिक पदार्थों द्वारा ही हो सकती है।

अगर आप किसी करोड़पती की सूक्ष्म परीक्षा करें तो आप देखेंगे कि मनुष्यत्व के नाते वह अपने कितने नौकरों से भी नीचे गिरा है यद्यपि उन नौकरों ने उसकी इस बढ़ती में असीम सहायता की है, यद्यपि तुम्हें भी वह रुपये के ही चक्कर में डालना चाहता था।

अगर आदमी पैसे का ही दास बन जाता है और उसी के लिये जीता-मरता है तो उसमें मनुष्यत्व का विकास बहुत कम होता है। इस तरह के आदमी की अवस्था दयनीय है। मानव-समाज को उस पर तरस खाना चाहिए। इसके प्रतिकूल उन लोगों की अवस्था है जिन्होंने अपने मनुष्यत्व का पूरा विकास किया है। अपनी आत्मा को भौतिक पदार्थों से ऊपर उठाया है। भौतिक पदार्थों को अपना दास बनाया है। ऐसे आदमी संसार को ऊपर उठाने के लिये उत्साहित कर सकते हैं। इस तरह के आदमी के पास अगर धन है तो वह उसका सदुपयोग करता है, क्योंकि वह स्वयं उन्नत है।

अगर मानव समाज में से ऐसे लोग छाँटकर अलग कर लिए जायँ तो मानव-समाज नीरस और स्वत्वहीन हो जायगा। सन्तोष है कि इस तरह के लोग सभी समाज में पाए जाते हैं। इस देश में मारवाड़ी समाज धन के पीछे अधिक पागल है। धन ही उसका एकमात्र ध्येय है, पर यदि इस समाज की तह में जाइए तो आपको ऐसे अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो अपने आदर्श के लिये सब कुछ त्याग सकते हैं।

जिन लोगों के बारे में हम बड़ी-बड़ी बातें सुनते हैं, जिनकी

ख्याति भाग्यवानों में है वे हमारे लिये सबसे उपयोगी नहीं हैं। इस देश में हजारों ऐसे आदमी हैं जिनका नाम तक लोग नहीं जानते, जिनके बारे में एक शब्द भी कभी नहीं सुना गया है, अपने कार्य-क्षेत्र की सीमा के बाहर शायद उन्हें कोई जानता भी नहीं, पर वे जो काम कर रहे हैं, देश के इतिहास के निर्माण में उनका जितना अधिक हाथ है, उतना उन बड़े-बड़े नेताओं का भी नहीं है। कालेज के अध्यापकों को ही ले लीजिए। क्या उनका काम साधारण है। जिन बालकों को हम अपने देश का भावी रत्न समझते हैं उन्हें रत्न बनाने का काम ये ही लोग कर रहे हैं।

ये लोग भी अगर समय की ही धुन में लग जायँ तो कदाचित् लक्ष्मी को अपना दास बनाकर रखें। पर उन्होंने दूसरा ही आदर्श अपने सामने रखा है और उसी आदर्श को लेकर आगे बढ़ते हैं और अंत समय तक उसी पर अड़े रहते हैं। इस तरह वे अपनी आत्मा और मानव-समाज को इतना समृद्ध बना देते हैं कि प्रचुर धन भी उनकी समता नहीं कर सकता। कौन कह सकता है कि ये त्यागी वीर उन लोगों से अधिक और महत्त्वपूर्ण काम नहीं कर रहे हैं जिन लोगों के नामों का चारो ओर ढिंढोरा पीटा जा रहा है।

तुम्हारे हृदय में अनेक तरह की आशंकाएँ हों, पर नीच प्रवृत्तियों से प्रेरित न हो। केवल धन बटोरने की अभिलाषा हृदय में मत रखो। एक बात सदा ध्यान में रखो कि आज तक संसार में एक भी ऐसा मनुष्य नहीं पैदा हुआ है जो द्रव्योपार्जन में हर तरह से तत्पर रह कर भी जीवन की उच्चतम अभिलाषाओं की पूर्ति कर सका हो। हमारे जीवन के ध्येय के अनुसार ही हमारी इंद्रियाँ परिचालित होंगी। हृदय में जिस बात की उत्कट अभिलाषा होगी जीवन के विकास का मार्ग

भी वही रुख ग्रहण करेगा। अगर हम लगातार निराश ही होते जा रहे हैं तो हम ऊपर नहीं उठ सकते। अगर हमारी दृष्टि धन पर ही जम गई है तो आगे की चीज हमें धुँधली दिखाएगी, धन की लिप्सा हमारे हृदय में जितनी बढ़ती जायगी उसका प्रकाश हमारी दृष्टि में और भी मन्द पड़ जायगा। एक ही साथ हम लोग उत्तर और दक्षिण दोनों ओर नहीं जा सकते। जिस भाव की हममें प्रधानता होगी वही हमें अपनी ओर खींच कर ले जायगा। इस तरह अपने भाव के अनुसार हम उच्च या नीच बनते रहेंगे।

कितने नवयुवक बड़ा ही उच्च आदर्श लेकर कालेजों से निकते हैं पर बिना साथी के आगे कदम रखने से घबराते हैं। उन्हें लोगों के परिहास का इतना भय लगता है कि वे अपनी अनेक अभिलाषाओं को भीतर ही भीतर दबा देते हैं या जीवन में प्रवृत्त होते ही धन की लिप्सा उनके हृदय में इतनी प्रबल हो उठती है कि सारी कल्पनाएँ भूल जाते हैं। थोड़े दिनों के बाद वे विस्मय के साथ देखते हैं कि उनके समस्त गुणों का धीरे-धीरे ह्रास हो गया है और वे केवल रुपए के दास रह गए। उनके आदर्श का स्रोत ही बदल गया। कहाँ तो ऊपर उठने के लिए चले थे कहाँ नीचे गिरते जा रहे हैं।

उच्च आदर्श और दृढ़ता अगर कायम रह जाय तो जीवन की ज्योति को जगा देती है, पर नीच अभिलाषा चरित्र को कमजोर बना देती है और शक्ति को क्षीण कर देती है। कभी-कभी हम लोग अपनी आन्तरिक अभिलाषा को अपने से भी छिपाना चाहते हैं, पर यह नहीं हो सकता। जो हमें जानता है वह हमें देखकर ही हमारी गति को समझ सकता है कि हम किधर बह रहे हैं। हम ऊपर उठ रहे हैं या नीचे गिर रहे हैं। जिस मार्ग पर हम जाना चाहते हैं उसे लोगों की आँखों से नहीं

छिपा सकते। जो आदमी ऊपर जाने के लिये तैयार है, जो रास्ते की कठिनाइयों से संग्राम कर आगे बढ़ रहा है, जो किसी तरह के प्रलोभन को अंगीकार नहीं करता, उसी की लोग प्रशंसा और आदर करते हैं।

फारसी में एक कहावत प्रचलित है जिसका अभिप्राय यह है—"ईश्वर ने मनुष्य से कहा कि तुम्हें जो भावे यहाँ से ले सकते हो, पर उसँका दाम यहीं रख देना होगा"। इससे यह तात्पर्य निकला कि या तो खर्च ही करो या बचाकर रख ही लो। दोनों एक साथ नही हो सकता। मनुष्य का जीवन उसके कारनामों का चिट्ठा है। आज तक संसार में एक भी ऐसा आदमी नहीं पैदा हुआ जो जाँचकर्ता की आँख में धूल झोंक सके या किसी तरह उससे बच सके। वह तो कौड़ी-कौड़ी का हिसाब चुका लेगा। हम लोग उसकी निगाह से बरी नहीं हो सकते। अगर हम लोग नीच वृत्तियों को तृप्त करने के लिये उच्च वृत्तियों का दमन करते हैं तो उनका मूल्य हमें किसी-न-किसी दिन देना ही पड़ेगा।

किसी बड़े अनुभवी विद्वान् ने लिखा है कि एक की प्राप्ति के लिये हम जिस दूसरे का हनन कर रहे हैं उसकी ध्वनि को हम लोग सदा सुनते हैं और कभी-कभी वह इतनी तेज हो जाती है कि यह जीवन निस्सार मालूम होने लगता है। कितने तो लाचार होकर उसे भुलाने के लिये नशीली वस्तुएँ ग्रहण करते हैं। क्योंकि उसकी प्रतिध्वनि मन को यातना पहुँचाती है। हृदय में इस बात की अनवरत चोट कि हमने बुरा मार्ग ग्रहण किया है सबसे भीषण चोट है, जो बरदाश्त नहीं हो सकता। जब वह अपनी वर्तमान अवस्था से उस अवस्था की तुलना करता है जिस तक वह पहुँच सकता था तो उसे बड़ा कष्ट होता है।

हृदय की उच्च वृत्तियों को प्रेरणा को स्वीकार करता और उन्हें

लेकर आगे बढ़ने का प्रयास ही हमें ऊपर उठा सकता है उत्थान का यही रहस्य है। इसी तरह की वृत्तियों से विजय प्राप्त हो सकती है, इसी उपाय से सच्ची समृद्धि की प्राप्ति होती है।

सच्चा सोना कितना भी जलाया जाय घटता नहीं, क्योंकि उसमें मैल ही नहीं है। अगर तुमने अपने मन का अनवरत विकास किया है, अगर तुमने उस बुद्धि का संग्रह किया है जो धन से कहीं बढ़कर है, अगर तुमने अपने जीवन में केवल उच्च आदर्शों को ही लिया है और उनके साथ तुम चले हो, तो संसार में कोई भी नहीं है जो तुम्हारी आंतरिक संपत्ति पर हाथ लगा सके। इसकी समता कोई नहीं कर सकता। अगर तुमने अपनी आत्मा को वश में कर लिया है तो तुम सचमुच धनी हो। क्योंकि तुम में वह स्थिरता, शांति और धैर्य आ गया है जो घोर-से-घोर विपत्ति में भी तुम्हें अधीर नहीं बनने देगा।

कभी-कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि हमें अपने जीवन की गति पर विचार करना अनिवार्य हो जाता है। जिस समय हम बीमारी के कारण अपना अंत समय निकट देख रहे हैं, जिस समय हमारा कोई अपना मर गया या कोई भीषण विपत्ति हमारे ऊपर पड़ गई, उस समय हमारी सारी ममता जाती रहती है। उस समय उनका महत्त्व हमारी दृष्टि से हट जाता है, जीवन की वास्तविक अवस्था पर हम विचार करने लगते हैं। ऐसी अवस्था उत्पन्न होने पर हमें विदित होता है कि जीवन के प्रवाह को हम गलत ओर ले जा रहे थे। ऐसे ही अवसर पर हमें लोग सुधारते हैं और जीवन के सच्चे महत्त्व को समझाते हैं। उस समय हम देखते हैं कि नीच वृत्तियों के फेर में पड़कर उच्च वृत्तियों का हम किस तरह गला घोटते जा रहे हैं।

हम लोगों की जल्दबाजी तथा हृदय के ये भाव कि जीवन

को सँवारना सहज है, इसमें अधिक समय नहीं लग सकता, हमारे हृदय के सूक्ष्म भावों के ह्रास के कारण हैं। रोज के रोजगार धंधे में हम इस तरह व्यस्त रहते हैं कि हृदय की उच्चतम वृत्तियों को जगाने का हमें अवसर ही नहीं मिलता।

इसलिये हमें चाहिए कि कभी-कभी एकांत में बैठकर अपने जीवन प्रवाह पर विचार करके देखें कि उसकी गति किस ओर है, हम क्या हैं और हमें क्या होना चाहिए। हम ठीक रास्ते से जा रहे हैं या नहीं। अगर नहीं, तो हमारा ठीक मार्ग क्या है और हमें अपने जीवन की गति को कैसे मोड़ना चाहिए।

काम की भीड़ में भी एक बार समझो और सोचो कि हम ठीक चल रहे हैं या नहीं, हमारा मार्ग ठीक है या नहीं। इस बात पर सदा ध्यान रखो कि जिन चीजों को प्राप्त करना इस जीवन का प्रधान लक्ष्य है उन्हें हम प्राप्त कर रहे हैं या नहीं। तुम्हें सदा इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि जो कुछ तुम कर रहे हो वह उस समय भी उतना ही महत्त्वपूर्ण प्रतीत हो जब किसी भीषण आघात से तुम्हारा हृदय विचलित हो जाय।

अगर तुम आज अपने जीवन को सारहीन पाते हो, आज अब तुम्हें उसमें कोई तत्व नहीं दिखलाई देता है तो निश्चय जानो कि यह खराबी है। तुम्हारी प्रकृति बदल गई है तुम पहाड़ पर न चढ़कर जमीन में ही लोट रहे हो।

हमारी जीवन की उमंगें हमें प्रकृति के सौन्दर्य को नहीं देखने देतीं। जीवन की साधारण-सी-साधारण वस्तुओं में अपार सौन्दर्य भरा है। अगर हमारी भावुकता परिमार्जित है तो हम उनमें असीम आनन्द पा सकते हैं। बालपन को स्मरण करो। साधारण-साधारण बातों को देखकर तुम मस्त हो जाते थे। चिड़ियों का फुदकना और फूलों का खिलना देखकर तुम मारे खुशी के लोट जाते थे मधुमक्खियों को फूल का रस खींचते

और तितलियों को उड़ते देखकर तुम कितने प्रसन्न होते थे। साधारण गुल्ली-डण्डा के खेल से भी तुम कितने प्रसन्न होते थे। तुम्हारी क्या दशा है! उस जीवन में और इस जीवन में कितना अन्तर हो गया है! क्या भावी सन्तति भी तुम्हारा अनुकरण करेगी? नहीं कदापि नहीं! वह तो निःसार को लात मारेगी और जीवन के सार की ही खोज करेगी।
